देवता का हृदय

श्री अविनाश खांडेकर

गांव की सीमा से दूर निर्जन स्थान में एक वृक्ष के पास वह पत्थर पड़ा रहता। गरमी की तेज किरणें; वर्षा की पैनी बौछारें और सर्दी की बर्फीली हवा उस पर अपनी पूरी धाक जमाती। ग्वाले उस पत्थर पर गोबर के हाथ पोंछते; सवेरे-सवेरे ही सिर पर साग-भाजी की टोकरियां लिए गांव की ओर दौड़ती हुई औरतें उस पर अपनी टोकरियां रखकर अपना बोझ हलका करती और शाम को यों ही भटकनेवाले शैतान बच्चे उस पत्थर पर निशानेबाजी करते।

पास खड़ा हुआ वृक्ष उस पत्थर की दुर्गति देखकर मन-ही-मन बड़ा प्रसन्न होता। वृक्ष में लगे नन्हें-नन्हें फूल भी पत्थर का ऐसा अपमानित जीवन देख खिलखिलाकर हंस पड़ते। कोई भी पड़ोसी उसे सहानुभूति नहीं दिखाता, लेकिन वह पत्थर भी वैसा था, जरा भी विचलित नहीं होता—चुपचाप सह लेता।

एक दिन एक शिल्पी कहीं दूर से उसी गांव की ओर आ रहा था। उस गांव में एक मन्दिर बन रहा था। देवता की प्रतिमा बनाने का कार्य उसे सौंपा गया था। शिल्पकार दूर से आ रहा था, अतः थकान मिटाने के लिए उस वृक्ष के नीचे बैठ गया। वहां उसकी दृष्टि पास में पड़े उस पत्थर पर पड़ी, मानो जिसे वह खोज रहा था, वह उसे मिल गया। उसने पत्थर को उठा लिया और उसे एक मूर्त्ति का रूप दे डाला।

नये मंदिर में वेद-मंत्रों की ध्वनि के साथ उस प्रतिमा की प्रतिष्ठा हुई। गांव-गांव से दर्शक आये और देवता की पूजा-स्तुति करने लगे। देवता बना हुआ वह पत्थर मन-ही-मन पुलकित था। एक दिन एक भक्त द्वारा कुछ पुष्प-प्रतिमा के चरणों पर चढ़ाये गये। वे फूल उस पत्थर के जाने-पहचाने थे। उसी का उपहास करनेवाले वृक्ष के फूल थे वे। पत्थर को गुजरा जमाना याद हो आया—वह कुछ हंसा और देवताओं के ही अनुरूप क्षमा-भरी दृष्टि से उसने उन फूलों की ओर देखा और उन्हें सप्रेम अपना लिया।

नवनीत का जून-८९ अंक पढ़ने को मिला। नाना प्रकार की सुरुचिपूर्ण विद्याओं का यह ज्ञान-कोप बड़ा ही रोचक, शिक्षाप्रद के साथ ही साथ भारतीय संस्कृति और श्रेष्ठ विचारों को प्रतिपादित करनेवाली पत्रिका है। 'विश्व का पहला बच्चों का विश्वविद्यालय' (जयप्रकाश भारती) का लेख बड़ा ही सुंदर, शोधपूर्ण तथा प्रेरणाप्रद रहा। इसके अतिरिक्त 'प्राचीन सांस्कृतिक संबंधों का माध्यम' (प्रो. कृष्णदत्त वाजपेयी), 'बच्चों को जेब खर्च देना उचित या अनुचित' (ज्योति खरे), 'छायावाद का सर्गान्त' (रामेश्वर शुक्ल अंचल), 'राजस्थान का लोक-नृत्य' (प्रेमजी प्रेम), 'अंतराल' (कहानी : गोविंद प्रसाद उपाध्याय) आदि सभी रचनाएं बड़ी अनूठी, रोचक एवं अनुकरणीय रहीं।

'प्रार्थना'—वेदों के श्लोकों का भावानुवाद श्रद्धेय सत्यकामजी विद्यालंकार द्वारा पढ़कर भारतीय संस्कृति का साकार स्वरूप आंखों के सामने प्रस्तुत हो जाता है।

आशा है नवनीत भविष्य में भी इसी प्रकार की अमूल्य साहित्यिक सामग्री से पाठकों को लाभान्वित करती रहेगी।

—मोहनलाल पुरोहित, बीकानेर, राजस्थान

०००

नवनीत (हिंदी डाइजेस्ट) का जून-८९ अंक पढ़ा। हर अंक की तरह इसमें भी कई रोचक और ज्ञानवर्द्धक बातें सीखने व समझने को मिलीं।

'छायावाद का सर्गान्त' (रामेश्वर शुक्ल अंचल) रुचिकर था एवं करुणामूर्ति व हिंदी साहित्य की कोकिला सुश्री महादेवी की यादें ताजा कर गया। यह हकीकत है जब तक हिंदी साहित्य रहेगा भारतीय संस्कृति रहेगी, तब तक महादेवीजी हमारे हृदय में रहेंगी। और हम भी उन्हें नहीं भुला पायेंगे।

१५० वीं जयंती के अवसर पर बंकिम बाबू की कुछ भूली हुई यादें (हरिमोहन शर्मा) भी काफी ज्ञानवर्द्धक थीं जो कि हृदय में अमिट छाप छोड़ गयीं। इन दोनों प्रशंसनीय प्रयासों के लिए नवनीत का आभारी हूं एवं आगामी अंकों के लिए भी ऐसी ही आशा करता हूं।

—राजेश सोनी 'राज', हरदा, म. प्र.

०००

नवनीत पत्रिका का जून-८९ अंक पढ़ा। सभी लेख ज्ञानवर्द्धक और मनोरंजक लगे। विशेष रूप से अंग्रेजी कहानी 'विलंब'

(स्टीफन किंग) एवं तमिल कहानी 'एक रुपया' अपना पूरा प्रभाव छोड़ते हैं।

हिंदी कहानी में गोविंद प्रसाद उपाध्याय की 'अंतराल' कुछ सोचने को वाध्य करती है है। जेनेरेशन गैप के मध्य का समयांतराल दोनों पीढ़ी की मानसिकता को समझने में असुविधा प्रदान करता है। अच्छी रचनाओं के लिए वहुत-वहुत वधाई।

—डा. संजय कुमार मिश्र, देवरिया, उ. प्र.

०००

नवनीत जून-८९ अंक में प्रभावोत्पादक तमिल कहानी 'एक रुपया' पढ़कर तीव्र आंतरिक अनुभूति हुई। सहज एवं तरल अनुवाद ने कहानी की आत्मा को जीवित रखा है। कर्तव्य-प्रिय वहादुर का जान पर खेलना, उन मूल्यों की पुनर्स्थापना करता है, जो अव आर्थिक रूप से विद्यमान हैं। वहादुर का चरित्र अपने आस-पास का लगा।

मेरे भी मार्केट का एक नेपाली चौकीदार है। जिसने एक वार मेरे ताला खुला छोड़ जाने पर न केवल सुवह ताले को वापस किया, वरन् उस रात अधिक ध्यान से देखभाल की। मेरे आर्थिक पुरस्कार को उसने वापस करते हुए कहा था—'साव, ये तो मेरी ड्यूटी है...।'

—प्रदीप पालीवाल, इटावा, उ. प्र.

०००

नवनीत का जून-८९ अंक पढ़ा। मुख मुखपृष्ठ वड़ा ही मोहक लगा। प्रो. कृष्णदत्त वाजपेयी का लेख अच्छा लगा। शिवगोपाल शर्मा की लघु कथा पसंद आयी। सुश्री सुनंदा चौधरी द्वारा लिखित वाल कथा 'चालाकी का फल' वहुत अच्छी लगी। —सुंदरलाल रोहित, सागर, म. प्र.

०००

नवनीत का नियमित पाठक तो नहीं, फिर भी प्रायः अंक पढ़ने का प्रयास करता हूं। जून-८९ अंक पढ़ा। कवि होने के नाते कविताओं का वाचन विशेषरूप से करता हूं। अधिकांश गीतों ने मन को उद्वेलित किया। अतिरिक्त सामग्री भी हृदयस्पर्शी रही।

—पवन सुल्तानपुरी, सुल्तानपुर, उ. प्र.

०००

नवनीत का जून-८९ अंक वड़ा ही मनभावन लगा। रचनाएं सुंदर, सुरुचिपूर्ण एवं ज्ञानवर्द्धक थीं। कुछ रचनाएं तो इतनी सरस थीं कि मेरे हृदय को अभिनव आनंद में सरावोर कर गयीं।

रामेश्वर शुक्ल अंचल का लेख 'छाया वाद का सर्गान्त' महादेवीजी के जीवन-दर्शन को रेखांकित करने वाला एक समग्र लेख था, जो मुझ जैसे साहित्य के छात्र के लिए अत्यंत उपयोगी एवं उपादेय सिद्ध हुआ। इस अंक में प्रकाशित गीत एवं कविताएं भी काफी सुंदर व सरस थीं।

सचमुच नवनीत वह माखन है, जो हमें प्रत्येक अंक में एक नया स्वाद, नवीन स्फूर्ति व नूतन आनंद प्रदान करता है।

—रामस्वरूप पंडित 'मयूरेश',
नारायणपुर, बिहार

०००

मैं **नवनीत** का नियमित पाठक हूं। यह हिंदी की सर्वोत्तम पत्रिका है। मई-८९ अंक पढ़ा। रचनाएं ज्ञानवर्द्धक हैं। 'ममता' कथा अच्छी लगी।

—डा. पी. के. जैन, अलीगढ़, उ. प्र.

०००

नवनीत का जून-८९ अंक मिला। सुंदर आवरण चित्र ने मन मोह लिया। मणिशंकर आचार्य का लेख 'मेरी नैनीताल यात्रा' एक कविता जैसा लगा। पूरा अंक **नवनीत** के डाइजेस्ट रूप को सार्थक करता है व इसका प्रत्येक अंक हमारी आस्था का संबल है। इतनी सामग्री इतने अल्प मूल्य में देना **नवनीत** का ही साहस है:

—राकेश पांडे, नैनीताल, उ. प्र.

०००

नवनीत पत्रिका के मई मास के अंक में सुश्री अनुपमा चौहान का लेख 'महाभारत का अनुकरणीय पात्र—कर्ण' पढ़ा। इतनी प्रसन्नता हुई कि मानो किसी ने पूरे महाभारत ग्रंथ का सारांश सुना दिया। ऐसा सारगर्भित लेख बहुत कम पढ़ने को मिलता है।

नवनीत पत्रिका ऐसे लेखों के द्वारा अपने **नवनीत** अर्थात् मक्खनरूपी पत्रिका का नाम सार्थक करती है।

'कथा राम की, व्यथा मानव की' 'गुड़ भरा हंसिया', 'रामचरित्र के उन्नायक रामानंद सागर' 'छंटता अंधेरा' आदि इसे और उपयोगी बना रहे हैं।

—ब्रजबिहारी ओझा, कारों, उ. प्र.

नवनीत के जुलाई अंक में पं. सत्यकाम विद्यालंकार के सम्मान-समारोह के अवसर पर छपे लेख को पढ़कर बहुत से पाठकों ने उनका पता पूछा है। उनका टेलीफोन नंबर ५००५३६ है और पता निम्न प्रकार है:

पं. सत्यकाम विद्यालंकार,
५५ बी/१३-१४, वृंदावन सोसायटी,
थाना—४००६०१, महाराष्ट्र

उत्तम ज्ञानवर्द्धक, शिक्षाप्रद, प्रेरणादायक एवं मनोरंजक रचनाओं से भरपूर **नवनीत** का जून-८९ अंक अच्छा लगा।

'रूस ने पैदा किये दो फुट के बौने' 'प्राचीन सांस्कृतिक संबंधों का माध्यम' 'बच्चे को जेब खर्च देना उचित या अनुचित' 'ज्ञानी जैलसिंह रूस में' 'स्वास्थ्य के लिए दूध से दही बेहतर' 'बंकिम बाबू की कुछ भूली हुई यादें' तथा 'सांप काटने का प्राथमिक उपचार' आदि लेख विशेष अच्छे लगे। 'बंकिम बाबू की कुछ भूली हुई यादें' लेख में वृत्तांत रोचक, उपयोगी एवं हृदयस्पर्शी रहा। उनके लिखे 'वंदेमातरम्' गीत के लिए देशवासी सदैव उनके प्रति कृतज्ञ रहेंगे।

—डा. शकुनचन्द गुप्त, रायबरेली, उ. प्र.

०००

जुलाई अंक में पं. सत्यकाम विद्यालंकार पर लेख के साथ उनके सार्वजनिक सम्मान का समाचार गरिमापूर्ण है। नानी पालखीवाला के लेख 'आदि शंकराचार्य' 'हमारे धार्मिक अनुष्ठान' एवं निराला संबंधी संस्मरणों ने बहुत प्रभावित किया।

—रामगोपाल शर्मा, दुर्ग, म. प्र.

□

नवनीत

संपादक गिरिजाशंकर त्रिवेदी
उप-संपादक रामलाल शुक्ल
अतिरिक्त सहयोग } किशोरीरमण टंडन
प्रकाशक सु. रामकृष्णन्
वर्ष ३८, अंक ८

संस्थापक : कन्हैयालाल मुंशी
भारती : स्थापना १९५६
श्रीगोपाल नेवटिया
नवनीत : स्थापना १९५२

अगस्त १९८९

आवरण-चित्र : डॉ. उमेश मिश्र

चित्र-सज्जा : ओके, शेणै, मिश्र, अकुझा, यादव, रवीन्द्र, ज्ञानेन्द्रकुमार, भारती

कार्यालय : भारतीय विद्या भवन, क. मा. मुंशी मार्ग, बंबई-७ फोन : ८११४४६२
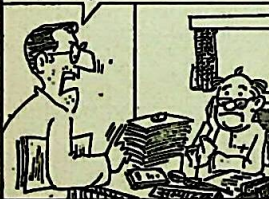
शासकों के लिए विचारणीय

धर्म और क्रांति का माह अगस्त

□ पं. गणेशशंकर तिवारी

विश्व इतिहास के विशाल सागर में अनगिनत साम्य-सामंजस्य और अद्भुत घटनाओं का भंडार समाहित है। 'अगस्त' माह के परिप्रेक्ष्य में सिंहावलोकनात्मक दृष्टि से विहंगावलोकन करें तो समय की धारा को नया मोड़ देने वाला ही नहीं, वरन् धर्म, क्रांति और नये सूरज की आभा से आलोकित करने वाला भी अगस्त माह ही सिद्ध होगा।

इस माह में रक्त-रंजित क्रांतियां, आंदोलन, विद्रोह, कूटनीति का संचालन और राष्ट्रों का नवनिर्माण भी हुआ है। जूलियस सीजर के काल तक अगस्त का नाम था 'आक्टेपियस' और इसको ३० दिन का ही माना जाता था। जूलियस सीजर के पश्चात् उसके भतीजे 'अगस्टस' ने शासक बनने के उपरांत इसका नामांतरण 'अगस्त' के रूप में कर दिया। शासक 'अगस्टस' को खुश करने के दृष्टिकोण से रोमनवासियों ने अगस्त माह को ३० दिन के स्थान पर ३१ दिन का कर दिया, और यह एक दिन उन्होंने सितंबर (जो कि ३१ दिन का हुआ करता था) से एक दिन कम कर सितंबर को ३० दिन का घोषित कर दिया।

'अगस्टस' के जीवन में यह माह उल्लेखनीय सफलताओं का सिद्ध हुआ।

विश्व में सर्वाधिक देश इस माह में ही स्वतंत्र हुए।

१ अगस्त–स्विट्जरलेंड; ७ अगस्त–कोस्ट; ९ अगस्त–सिंगापुर; १४ अगस्त–पाकिस्तान; १५ अगस्त–भारत व दक्षिणी कोरिया; १७ अगस्त–इंडोनेशिया; २३ अगस्त–रोमानिया; २५ अगस्त–उरुग्वे; ३१ अगस्त–मलेशिया, त्रिनिडाड, टोबेगो।

प्रथम विश्व युद्ध का आरंभ भी ४ अगस्त १९१४ को हुआ। फ्रांसीसी क्रांति २७ अगस्त १७८९ को प्रारंभ हुई।

अमरीका के प्रथम राष्ट्रपति जार्ज वाशिंग्टन अगस्त १८१४ में अंग्रेजों द्वारा कैद किये गये।

विश्वशांति के उद्देश्य से एटलांटिक चार्टर अगस्त १९४१ की देन है।

हिरोशिमा पर एटम बम और मानवता का मातम ५ अगस्त १९४५ एवं नागासाकी पर बम प्रयोग ९ अगस्त १९४५ को हुआ।

अणुशक्ति परीक्षण प्रतिबंध–५ अगस्त १९६३ को निर्णीत हुआ।

चेकोस्लोवाकिया पर रूस, जर्मन, हंगरी की अधिकार स्थापना अगस्त १९६८ को हुई।

सुरक्षा परिषद ने दक्षिणी अफ्रीका को १२ अगस्त १९६९ को कठोर चेतावनी दी।

ब्राजील में सैनिक शासन ३१ अगस्त १९६९ को स्थापित हुआ। लीबिया में सैनिक क्रांति ३१ अगस्त १९६९ को हुई। जानसन २७ अगस्त को अमरीकी राष्ट्रपति बने।

भारत के संदर्भ में : अगस्त

जर्मनी में स्टेटगार्ड सम्मेलन में तिरंगा, झंडा फहराया गया।

९ अगस्त को भारत छोड़ो आंदोलन की आवाज गूंज उठी।

अगस्त में ही १९२५ में काकोरी कांड हुआ एवं कांग्रेस अध्यक्ष सुरेन्द्रनाथ बनर्जी चिर निद्रालीन हुए।

सुभाषचंद्र बोस १७ अगस्त १९४५ को ही दुर्घटना के शिकार हुए।

वारेन हैस्टिंग्ज ने महाराजा नंदकुमार को ५ अगस्त १७७५ को फांसी दी।

१९ अगस्त १६६६ को शिवाजी, औरंगजेब की कैद से मुक्त हुए।

दाराशिकोह का कत्ल ३० अगस्त १६५९ को किया गया।

भारतीय जनमानस, संस्कृति व धर्म का भी अगस्त (श्रावण मास प्रायः) से गहरा संबंध है।

१—नागपंचमी, २—जन्माष्टमी, ३—तुलसी जयंती, ४—रक्षाबंधन, ५—कज्जली तीज, ६—ओणम, ७—श्रावण तीज आदि।

अगस्त माह राष्ट्रीयता, सांस्कृतिक व धार्मिक विचारधाराओं से गहरा संबंध रखता है।

यदि हम ज्योतिष के दृष्टिकोण से देखें तो सौर मंडल का राजा, भूमि से १३ लाख गुना बड़ा, ९ करोड़ १३ लाख मील दूर प्रकाश-रंग व ऊर्जा का स्रोत सूर्य ही इसका प्रमुख कारण प्रतीत होगा।

यह सिंह राशि में बलवान होता है अर्थात् 'सिंह' राशि इसके आधिपत्य में है। इस ग्रह के मित्र चंद्र, मंगल व गुरु होते हैं। इस ग्रह के प्रभाव में नेत्र, हड्डी, मेरुदंड, आत्मा, शासक, राज्य, चिकित्सक, सेना-पति होते हैं।

अतः मंगल जो 'रक्त' का कारक है यह जब सूर्य को सहयोग देने लगता है और उस समय सूर्य यदि सिंह राशि पर हो तो निश्चय ही सेना, शासक, दुर्घटना, जन-धन हानि एवं रक्त क्रांति जैसी स्थिति उत्पन्न होना सहज है।

सूर्य का सिंह राशि पर आगमन उग्रता, शूरता और प्रतापी कार्य की मनःस्थिति का निर्माणकर्ता होता है।

इसलिए अगस्त व सितंबर माह किसी भी देश के शासक के लिए जटिल और सावधानी या कठोर निर्णय के होते हैं। चंद्र व शनि के सहयोग से दुर्घटना, बाढ़ आदि प्राकृतिक प्रकोपों में वृद्धि होती है।

सूर्य चूंकि सत्ता का कारक होता है, अतः जनसमुदाय का या सेना का उद्देश्य संहार एवं विजयोन्मुख होता है।

—देवलोक कालोनी, (सी. टी. ओ.),
दुर्गा मंदिर के पास, बेरागढ़, भोपाल, म. प्र.

□

आत्मकथा का अंश

बेनज़ीर भुट्टो : पूरब की बेटी

□

के. एस. वाजपेयी (पाकिस्तान में भारत के भू. पू. राजदूत)

पाकिस्तान में भारत के भूतपूर्व राजदूत श्री के. एस. वाजपेयी द्वारा पाकिस्तान की प्रधान मंत्री बेनज़ीर भुट्टो की आत्मकथा 'डॉटर ऑफ द ईस्ट' पर एक नजर। साथ में पुस्तक का एक मर्मभेदी अंश, जिसमें जुल्फिकार अली भुट्टो, फांसी पर चढ़ने से पहले, अपने परिवार के सदस्यों से आखिरी बार मिलते हैं। एक सामयिक घटना-कथा।

बेनज़ीर भुट्टो की आत्मकथा 'पूरब की बेटी' (डॉटर ऑफ द ईस्ट) लगभग उसी समय प्रकाशित हुई थी, जब वह अपने चुनाव-अभियान में व्यस्त थी। इससे इस आत्मकथा का महत्व राजनीतिक होने के अलावा, सामयिक भी हो गया।

आत्मकथा में जो कहानी सुनायी गयी है, वह पाठक को आदि से अंत तक बांधे तो रखती ही है, कहीं-कहीं बहुत भावात्मक भी हो गयी है। पुस्तक में तल्लीन होने पर, पाठक को पता चलता है, उस भाव-भीने और दर्दभरे रिश्ते का, जो बेनज़ीर और उसके ख्यातनाम पिता के बीच था। उसकी भांति, पाठकों को भी कष्टदायक अहसास होता है, उस उत्पीड़न का, उन सदमों का, जो अपने बाप की इस प्यारी बेटी ने अपने बाप की खातिर तब सहे थे, जब वे पाकिस्तान के नियति-पुरुष बने हुए थे, और बाद में अपने उत्पीड़कों द्वारा सता-सताकर मारे गये थे। जो बेरहम नाटक तकदीर ने भुट्टो की तकदीर के साथ खेला, उनकी प्यारी बेटी ने उस नाटक को, अपनी ओर से बिना कुछ जोड़े, वैसा का वैसा बयान कर दिया है, क्योंकि उसमें किसी रंग को, कुछ बढ़ा-चढ़ाकर कहने की ज़रूरत भी नहीं थी।

पुस्तक को पढ़कर, साफ़ ज़ाहिर होता है कि वह किसी ज्वाराक्रांत उत्तेजना में लिखी गयी थी, और लेखिका उसे लिख कर, उस उत्तेजना से राहत पाने के लिए व्यग्र थी, क्योंकि बहुत कुछ था, जिससे वह निजात पाना चाहती थी। मगर, पुस्तक समाप्त करने के बाद, पाठक को लगता है कि वह खुद भी उस ज्वर से पीड़ित हो गया है, जिससे वह आकुल थी।

जो लोग व्यक्तिगत रूप से भुट्टो और बेनज़ीर दोनों को जानते थे, वे बाप-बेटी के व्यक्तित्वों और काम करने और सोचने की

समानताओं के अनोखेपन को महसूस किये विना नहीं रहेंगे। पुस्तक पढ़कर, पाठक को एक ओर जहां भुट्टो की असाधारण कावलियत, और पाकिस्तान की राजनीति पर उनकी जवर्दस्त पकड़ का पता लगता है, वहां उसे यह देखकर अफ़सोस भी होता है कि वे कितने वेसव्र थे, और हमेशा कितने वेक़रार रहते थे, 'सव कामों को आज के आज पूरा करने के लिए।' अगर उनमें थोड़ा भी धीरज होता, तो शायद पाकिस्तान की हुकूमत आज भी उनके हाथों में होती। अगर उनमें धीरज होता, तो वे १९७७ का चुनाव वड़े आराम और इत्मीनान से जीत सकते थे। लेकिन, उनकी वेसव्री, उनकी वेतहाशा जल्दी उन्हें ले डूवी।

०००

पुस्तक में वेनजीर ने अपने और भुट्टो के शानदार जीवन की जो झांकियां पेश की हैं, वे अपने आप में काफ़ी रोचक और प्रभावोत्पादक हैं, मगर किताव की रफ्तार और लय से मेल नहीं खातीं। मगर, जहां वेनज़ीर अपने और अपने पिता की ज़िन्दगियों के उन पहलुओं पर आती हैं, जिनकी वजह से दोनों की ज़िदगियां पाकिस्तान के लिए उसके इतिहास का चर्चित विषय वनती हैं, तो वहां पुस्तक अत्यंत पठनीय हो जाती है, क्योंकि तव वह सीधी पाकिस्तान की तवारीख से जुड़ जाती है, और उसका एक यादगार हिस्सा वन जाती है।

मिसाल के तौर पर, किताव के उस हिस्से को पढ़िये, जिसमें आक्सफोर्ड में शिक्षित वेनज़ीर वुज़ुर्गों द्वारा तय की गयी शादी को मंजूर कर लेती हैं, और अपनी विरादरी में शादी करने को तैयार हो जाती है। अगर वह पाकिस्तान की कोई मामूली खानदान की वेटी होती, तो उसे यह सव समझाने की जरूरत न होती, और न उसे इस वात पर खास ज़ोर देना पड़ता, मगर वेनज़ीर ने एक खास मकसद से इस वात पर ज़ोर देने की ज़रूरत समझी, और उसे यह भी लिखना पड़ा कि 'शादी की रात पर सारा कराची खुशियां मनाते-मनाते पागल हो गया।'

इस वात पर ज़ोर देने की ज़रूरत इसलिए थी कि वेनज़ीर इस कांड को नाटकीय वनाकर यह जताना चाहती थी कि उसे यह शादी पाकिस्तान की खातिर करनी पड़ी, क्योंकि इस तरीके से ही वह पाकिस्तानी सियासत से अपना रिश्ता जोड़ सकती थी। नहीं तो, जिस माहौल में वह वढ़ी और पली थी, उसमें उसके लिए यह कतई नामुमकिन था।

०००

वेनज़ीर के सामने, इस पुस्तक को लिखते समय एक विशिष्ट लक्ष्य था—दुनिया के सामने, और खास तौर पर पाकिस्तान के सामने अपनी एक विशिष्ट छवि वनाने का। और, यह छवि थी पाकिस्तान की भावी प्रधान-मंत्री वनने की, और इस रूप में लोगों के सामने आने की। और चूंकि सारी किताव इस वढ़ती हुई आकांक्षा के इर्दगिर्द घूमती है, इसलिए पुस्तक के

पाठक के मन में यही एक सवाल झूलता रहता है कि क्या उसकी यह आकांक्षा पूरी हुई, या नहीं ? (इस पुस्तक का प्रकाशन बेनज़ीर के प्रधान-मंत्री पद पर बैठने से पहले ही हो चुका था।)

इस प्रकार, यह एक मामूली किताब नहीं है, मामूली आत्मकथा नहीं है, एक गैर-मामूली किताब है, गैरमामूली आत्मकथा है। एक भूतपूर्व प्रधान-मंत्री की बेटी द्वारा लिखी गयी किताब जिसकी निगाहें प्रधान-मंत्री के पद पर टिकी हैं, और जो, धीरे-धीरे, प्रधान-मंत्री के पद की कोशिश करती हुई, धीरे-धीरे सतर्क कदमों से, उस ओर बढ़ रही है।

पुस्तक पढ़ते समय, पाठक के मन में बार-बार यह सवाल उठता है—कम से कम मेरे मन में अवश्य उठा—कि अपनी आत्म-कथा के लेखन के दौरान, बेनज़ीर ने अपने जिन गुणों का प्रदर्शन किया है, क्या उन्हीं का प्रदर्शन वह अपने संभाव्य प्रधान-मंत्री काल में भी कर पायेगी ?

पुस्तक में बड़े ही जीवंत और विशद रूप से उन घटनाओं का वर्णन है, जिनका सामना समूचे भुट्टो-परिवार को भुट्टो के बदकिस्मत और दर्दनाक पतन के बाद, करना पड़ा था। बेनज़ीर चाहती, तो इन घटनाओं का उपयोग अपने भाव-विरेचन के लिए कर सकती थी, ताकि उनकी यादों का तेज़ाब उसके मन से साफ़ हो जाये। लेकिन, ऐसी कोई कोशिश इस किताब में दिखायी नहीं देती। उल्टे, उस भयावह त्रासदी का सहारा लेकर, बेनज़ीर ने सारे पाकिस्तान और सारी दुनिया को उस विरासत के बारे में बताने की कोशिश की है, जो उसे अपने पिता से मिली थी। जनरल ज़िया द्वारा अपने परिवार के सदस्यों पर किये गये अत्या-चारों का वर्णन करते समय, वे उस आग्नेय निश्चय को भी दोहराना नहीं भूलतीं, जिसके साथ वह अपने पिता की विरासत को पाकिस्तान को मिलने वाली विरासत के रूप में परिवर्तित करने के लिए कटिबद्ध और संकल्पवान है।

अपने पिता के बारे में लिखते समय बेनज़ीर ने बड़े संयम से काम लिया है। कभी-कभी, वह भावुक और संवेगात्मक अवश्य हो जाती है, मगर उसके कारण कभी बेकाबू नहीं हुई। अपने प्रचार-अभियान के दौरान भी उसने अपने इस संयम का परिचय दिया था। यह संयम यह दर्शाता है कि उसके अंदर अपने पिता का रिक्त स्थान लेने की संभावना और समर्थता मौजूद है।

अपने पिता का चित्रण करते समय, बेनज़ीर ने उन्हें एक 'मुकम्मिल' पिता के रूप में तो पेश किया ही है, एक सच्चे मित्र, 'मॉडल' और बुद्धिमान परामर्शदाता के रूप में भी पेश किया है। और, अपने पिता का उल्लेख करते समय, यह बात हमेशा उसके ज़ेहन में रहती है कि उसे अपने पिता के समान ही बनना है, और जो विरासत उसे मिली, उसमें एक नयी जान डालनी है।

तवारीख गवाह है कि अपने जन्म के बाद, चालीस वर्षों में उसी पाकिस्तानी नेता को सबसे ज्यादा प्रशंसा और सन्मान मिला, जो इस्लाम का नारा बुलंद करने, और भारत को ज्यादा से ज्यादा संपीड़ित करने में सबसे आगे रहा हो।

ज़ुल्फिकारअली भुट्टो ने पाकिस्तानी राजनीति के इस आधारभूत मूलमंत्र को समझकर उसमें काफ़ी महारत हासिल कर ली थी। पाश्चात्य विचार शैली में रंगे होने के कारण, भले ही वे अधिकांश कट्टरपंथी नेताओं के प्रति इस्लाम के प्रति प्रतिबद्धता में मन से विश्वास न करते रहे हों, लेकिन भारत के प्रति अपनी तीव्र घृणा का प्रदर्शन करने में वे कभी पीछे नहीं रहे। सच तो यह है कि पाकिस्तान की राजनीति में उनकी तीव्र प्रगति का रहस्य ही यह है कि वे भारत के खिलाफ़ ज़हर उगलने के मामले में बड़े जोश से काम लेते थे। भारत उनके लिए एक विषम मनोग्रंथि बन गया था। वे उससे नफ़रत भी करते थे, और मन ही मन आदर भी करते थे, ईर्ष्या भी करते थे, और प्रशंसा भी। वे नेहरू के प्रशंसक भी थे, हालांकि उनकी खुलकर तारीफ़ कभी उनके मुंह से सुनायी नहीं दी। जिस उच्च वर्ग के लोगों ने पाकिस्तान पर, उनके आगमन से पूर्व, शासन किया, उनमें वे सबसे अधिक चतुर और समझदार थे, और ज्यादा धूर्त भी। जनाधिकारवाद की दुहाई देकर, उन्होंने काफ़ी समर्पित भावना के साथ, अपने देश के हित में काफ़ी कुछ किया। इसमें कतई कोई संदेह नहीं है।

उन्होंने अपने देश के सार्वजनिक सेक्टर को मजबूत करने की कोशिश की, मास्को के साथ बेहतर संबंध स्थापित करने की दिशा में कदम उठाये, और यहां तक कि पाकिस्तान को गुट-निरपेक्ष राष्ट्र बनाने के बारे में पहल भी की। अमरीका के मामले में उनकी द्वैधवृत्ति का हाल यह था कि वे एक दिन अमरीका के बारे में बड़ी अपमानजनक और अमर्यादित बातें कह सकते थे, तो अगले दिन उसके साथ भरपूर सहयोग करने के लिए भी तैयार हो जाते थे। उनकी क्रूरताओं की कई कहानियां मशहूर हैं, मगर बेचारी बेनज़ीर शायद उनसे अनजान ही थी।

अपने तमाम आवेगपूर्ण उग्रवाद के बावजूद, भुट्टो यथार्थवादी भी थे। कट्टर भारत-विरोधी होते हुए भी, वे मौका पड़ने पर भारत और पाकिस्तान के बीच तनाव की कमी की ज़रूरत को भी महसूस करते थे। ताशकंद से शिमला तक का उनका सफ़र इसकी गवाही देता है। मगर उनकी और उनकी बेटी का यह खयाल ग़लत है कि शिमला में सिर्फ़ उनकी कूटनीति की ही विजय हुई थी। वास्तव में, यह विजय श्रीमती गांधी की राजनीति-ज्ञता की ही कही जायेगी, जिन्होंने एक हताश पाकिस्तान को यह मौका दिया कि वह अपने को उस स्थिति से उबार सके, जिसमें वह अपने को पा रहा था, और भुट्टो साहब की सौदेबाजी के कमाल के बावजूद

खाली हाथ वापस लौट रहा था।

०००

शिमला-समझौता सही था या गलत इस बारे में भारत और पाकिस्तान में एक लंबे अर्से तक बहस होती रहेगी, मगर इसमें कोई संदेह नहीं कि इस समझौते के बाद, भारत-पाक संबंधों में एक नयी शुरुआत हुई, और भारत से एक हजार साल तक युद्ध की बात करने वाले जुल्फिकार अली को लोगों ने एक दूरदर्शी राजनीतिज्ञ के रूप में देखा।

कभी-कभी यह अनुमान करने को मन होता है कि भुट्टो यदि आज जीवित होते और सत्ता में होते, तो पाकिस्तान का भविष्य क्या होता? अपने मुकदमे के दिनों में, उन्होंने पाकिस्तान के सर्वोच्च न्यायालय के सामने, एक हलफ़नामे में कहा था कि अपने शासन के अंतिम काल में पाकिस्तान के लिए उन्होंने जो कुछ किया, खास तौर पर पाकिस्तान को एटमी बम के मामले में आत्म-निर्भर बनाने की खातिर, उसके लिए वे पाकिस्तान के इतिहास में हमेशा याद किये जायेंगे। लेकिन, उनकी उतावली ने एक बार नहीं, कई बार उनका बनाया हुआ सारा काम बिगाड़ा। हकीकत यह हैं कि जो लोग उनके स्थान में आये, वे उनसे इतना ज्यादा डरते थे कि उन्हें लगता था कि यदि भुट्टो जीवित रह गया, तो उनमें से किसी को ज़िंदा नहीं छोड़ेगा। पाकिस्तानी टेलीविजन इस बात का गवाह है कि जब ज़िया ने भुट्टो से मुरी की जेल में मुलाकात की थी, तो भुट्टो ने गुस्से और बदले की भावना के साथ उसे कैसी-कैसी बातें—कहनी-अनकहनी— सुनायी थीं। तब उन लोगों ने भी उनका साथ नहीं दिया, जिनसे उन्हें आशा थी कि वे उसका उद्धार करने के लिए आगे आयेंगे। इसीलिए उनकी जान बचाने की संभावना के बारे में किसी ने कभी नहीं सोचा, खुद उन्होंने भी इस बारे में नहीं सोचा, क्योंकि ऐसा सोचने के लिए ठंडे दिमाग की जरूरत थी।

०००

यह एक दिलचस्प बात है कि भुट्टो को राजनीति के क्षेत्र में सबसे ज्यादा परेशान और हताश किया था, तत्कालीन भारतीय परराष्ट्र मंत्री सरदार स्वर्णसिंह ने। जब भुट्टो आफ्रो-एशियाई देशों के प्रतिनिधियों के सामने तथा अन्य मंचों के सामने कश्मीर के आत्म-निर्णय का राग अलाप रहे थे, तो सरदार साहब ने भारत की ओर से इस मसले के बारे में छह वार्ताओं का दौर आरंभ किया। हमेशा जल्दी में रहने वाले भुट्टो ने इन वार्ताओं के दौरान सरदार साहब से धैर्य रखने और शांति से काम करने के अनेक पाठ सीखे। भुट्टो ने वार्ता के एक दौर के बाद मुझसे कहा था, 'आपके नेता (सरदार स्वर्णसिंह) से बात करना 'जैली फिश' को पकड़ने के बराबर है। वे कभी पकड़ाई में नहीं आते।'

बेनज़ीर अपने पिता के समान बेसब्र और जल्दबाज़ नहीं है। और यदि उसने बाद में भी अपनी इन्हीं विशेषताओं को

अक्षुण्ण रखा, तो शायद अपने पिता की विरासत के आधार पर, पुराने पाकिस्तान को बदलकर, एक नये पाकिस्तान का निर्माण कर सके।

खैर, जहां तक किताब का सवाल है, जैसा कि मैंने कहा, उसका स्वर कहीं-कहीं कर्णभेदी हो जाता है। शायद ऐसा एक खास असर पैदा करने के उद्देश्य से किया गया है। पुस्तक का नाम—'पूरब की बेटी' भी ऐसा ही एक खास असर पैदा करने के उद्देश्य से रखा गया है, ताकि किसी पाठक के मन में लेखिका के बारे में यह धारणा न जन्म ले सके कि वह पश्चिम से ज्यादा प्रभावित है।

पुस्तक से स्पष्ट है कि वह अपने देश की राजनीति की बागडोर अपने हाथ में लेने के इरादे से सही दिशा की ओर चल रही है। उसका निश्चय इन शब्दों से स्पष्ट है, 'मैं अपने और अपने देश के लिए पूरी आज़ादी चाहती हूं। मेरी राजनीति की प्रतिबद्धता अपने जीवन को यह अर्थ प्रदान करने से ही संबंधित है।'

हम उसकी सफलता की कामना करते हैं।

'पूरब की बेटी' का एक मर्मभेदी अंश

आधा घंटा। सिर्फ़ आधा घंटा उस व्यक्ति को अल्विदा कहने के लिए, जो मेरे जीवन में सबसे अधिक महत्व रखता था। मेरा सारा दर्द मेरे दिल में सिमट आया। मुझे लगा कि यदि मैं जोर से चिल्लायी नहीं, तो वह दर्द फटकर बाहर आ जायेगा।

वे फर्श पर रखे एक तकिये पर बैठे थे। कोठरी में उस तकिये को छोड़कर, कोई और फर्नीचर नहीं था। वे उनकी मेज़, कुर्सी, और बिस्तरा, सब ले गये थे।

मैं उनके लिए कुछ पत्र-पत्रिकाएं लायी थी। उन्हें मुझे पकड़ाते हुए, वे बोले, 'इन्हें ले जाओ। मैं नहीं चाहता कि वे मेरी चीज़ों को हाथ लगायें।'

उनके वकील उनके लिए कुछ सिगार लेकर आये थे। अपने लिए सिर्फ़ एक सिगार छोड़कर, शेष मुझे देते हुए, उन्होंने कहा, 'यह सिगार मैं रात को पिऊंगा।' उन्होंने शालीमार कोलोन की अपनी बोतल भी रख ली।

वे अपनी अंगूठी उतारकर मुझे देने लगे, लेकिन मेरी मां ने उन्हें ऐसा करने से रोका। 'मैं अभी इसे रखूंगा, मगर बाद में इसे बेनज़ीर को ही दे देना,' उन्होंने मां से कहा।

जेल अधिकारी कान लगाकर, हमारी बातें सुनने में लगे थे। उन्हें चकमा देकर, मैंने फुसफुसाते हुए, उनसे कहा, 'मैंने बाहर एक पैग़ाम भिजवाने का इंतज़ाम कर लिया है।' मुझसे पूरा ब्यौरा सुनने के बाद, उन्होंने संतोष की सांस लेते हुए कहा, 'वह अब सियासत के सारे गुर सीखती जा रही है।'

मौत की इस कोठरी में रोशनी बहुत मंद थी। इस वजह से, मैं उन्हें साफ़-साफ़ देख नहीं पाती थी। पिछले हर मौकों पर, उन्होंने मेरी मां को और मुझे कोठरी में उनके साथ बैठने की इज़ाज़त दी थी। लेकिन, आज वह इज़ाज़त नहीं दी गयी। मैं और मेरी मां कोठरी की सलाखों के

बाहर, एक दूसरे से जुड़े, खड़े थे, और उनसे अस्फुट स्वर में बातचीत कर रहे थे।

वे मम्मी से बोले, 'दूसरे बच्चों को मेरा प्यार देना। मीर और सनी और शाह से कहना कि मैंने उनके लिए एक अच्छा पिता बनने की बहुत कोशिश की। काश, मैं उनसे मिल सकता!' मम्मी ने सर हिलाया, मगर वे कुछ बोल नहीं पायीं।

'तुम दोनों ने काफ़ी कुछ सहा है,' वे कहने लगे, 'वे लोग मुझे आज रात मार डालेंगे। मैं तुम्हें भी आज़ाद देखना चाहता हूं। जब तक संविधान अधर में लटका है, और 'मार्शल लॉ' लागू है, तुम पाकिस्तान छोड़कर कहीं भी जा सकती हो। अगर तुम्हें शांति चाहिये, और तुम नये सिरे से ज़िंदगी को शुरू करना चाहती हो, तो यूरोप जा सकती हो। मेरी तरफ़ से तुम्हें इजाज़त है। तुम वहां जा सकती हो।'

हमें लगा, हमारे दिलों के टुकड़े-टुकड़े हो जायेंगे। मम्मी बोलीं, 'नहीं-नहीं, हम लोग वहां नहीं जा सकते। हम नहीं जायेंगे। जनरलों को यह नहीं लगना चाहिये कि वे जीत गये। ज़िया ने फिर चुनावों की तारीख तय की है। वह जानता है कि हम चुनावों में उसका डटकर मुकाबला करेंगे। अगर हम चले गये, तो पार्टी टूट जायेगी, वह पार्टी, जिसे आपने बनाया था।'

मैंने भी कहा, 'हम नहीं जायेंगे।'

वे मुस्कराये। बोले, 'मुझे यह जानकर बड़ी खुशी हुई। तुम नहीं जानतीं कि मैं तुम दोनों को कितना प्यार करता हूं। तुम मेरी आंखों के तारे हो, मेरे लिए बड़े बेशकीमती हो। हमेशा से मैंने तुम्हें ऐसा ही माना है।'

सुपरिंटेंडेंट ने कहा, 'वक्त खत्म हुआ। वक्त खत्म हुआ।'

मैंने सलाखों को ज़ोर से पकड़ते हुए उससे कहा, 'मेहरबानी करके, कोठरी को खोल दीजिये। मैं अपने वालिद से आखिरी बार मिलकर उन्हें अल्विदा कहना चाहती हूं।'

सुपरिंटेंडेंट मना करता है। मैं उससे विनती करती हूं, 'मेहरबानी करके, मान जाइये। मेरे वालिद पाकिस्तान के निर्वाचित वज़ीरे-आज़म हैं। यह हमारी आखिरी मुलाकात है।'

सुपरिंटेंडेंट फिर मनाकर देता है।

मैं सलाखों के पार, अपने वालिद का हाथ छूती हूं। वे मलेरिया, पेचिश और भूख की वजह से बहुत कमज़ोर हो गये हैं। बोले, 'आज रात मैं आज़ाद हो जाऊंगा, और अपनी मां, और अपने वालिद के पास पहुंच जाऊंगा। मैं लरकाना स्थित अपने पुरखों की ज़मीन में पहुंचकर उसका, उसकी फिज़ा का, गंध का एक हिस्सा बन जाऊंगा। लोग मेरे बारे में गाने गायेंगे, और मैं वहां की साहसिक कहानियों में अमर हो जाऊंगा। मगर, लरकाना में तो बहुत गर्मी होगी!' उन्होंने मुस्कराकर कहा। वे तन कर खड़े थे।

जेल-अधिकारी आगे बढ़े।

मैं कहती हूं, 'गुडबॉय, पापा।'

□

लिख दो ...

अपने सारे दर्द, इस तरह, तुम न करो नीलाम
जितने दर्द तुम्हारे हों, सब लिख दो मेरे नाम।
कर्ज भरा सांसों का जीवन,
जीवन कहा नहीं जाता—
फिर भी तुमसे कर्ज लिये बिन
मुझसे रहा नहीं जाता
भरते-भरते कर्ज काट लूं अपनी उमर तमाम
जितने दर्द तुम्हारे हों, सब लिख दो मेरे नाम।
दर्द लिये जो चले राह में
कांटे उन्हें फूल से लगते
जिनके मंसूबे — तूफानी
वे मझधार कूल से लगते
मीठी चुभन, थकन, पांवों को देती गति अविराम
जितने दर्द तुम्हारे हों, सब लिख दो मेरे नाम।
यह कोरा उन्माद नहीं है
और न यह पागल की भाषा
प्रतिबिंबित आखर - आखर में
पावन प्रेम - पंथ अभिलाषा
कल्प-कल्प तक चर्चित होंगे सौरभ के आयाम
जितने दर्द तुम्हारे हों, सब लिख दो मेरे नाम।
जितना जग में मधु बसंत है
वह सब ब्याज तुम्हें मिल जाये
उपमाएं, प्रतिमान रूप के
देते - देते मन थक जाये
सच कहने के लिए क़सम से एक नाम है राम
जितने दर्द तुम्हारे हों, सब लिख दो मेरे नाम।

□ धनंजय अवस्थी
कमला नगर, फतेहपुर, उ. प्र.

□

मासिक भविष्यफल : अगस्त १९८९

□ पंडित वी. के. तिवारी

मेष : (१४ अप्रैल–१३ मई) :

२० अगस्त तक पूर्व मास से चली आ रही स्थिति में कोई परिवर्तन आपके पक्ष में लेना कठिन है। स्वास्थ्य, आर्थिक, राजनीतिक, रोजगार आदि जीवन के पहलुओं में वांछित स्थिति निर्मित विशेष प्रयास से ही सकती है। परिवार एवं वाह्य जगत के आत्मीय वर्ग से विवाद बढ़ेंगे। २१ अगस्त से मासांत तक शत्रु-बाधा से मुक्ति मिलेगी। शारीरिक व मानसिक सुख में वृद्धि होगी। लेखक व संगीतज्ञ यश अर्जित करेंगे। व्यवसाय में अर्थ लाभ एवं रुका धन मिलेगा।

वृष : (१४ मई–१४ जून)

दिनांक १० तक मनःस्थिति श्रेष्ठ रहेगी। आपके पक्ष में प्रयासों की इति होगी। परंतु इसके उपरांत मासांत तक उत्तरोत्तर स्थितियां आपके विरुद्ध बढ़ेंगी। स्थायी संपत्ति संबंधित समस्या से चिंता रहेगी। गृहस्थ-सुख में कमी के कारण सुख की अल्पता व उद्विग्नता बढ़ेगी। परिवार के सदस्यों से मतभेदजन्य पीड़ा होगी। शरीर कष्ट की संभावना के प्रति सुरक्षात्मक दृष्टिकोण उपयोगी सिद्ध होगा। २३ अगस्त के पश्चात उपरि उल्लेखित दुःस्थितियों में परिवर्तन सुखद होगा।

मिथुन : (१५ जून–१६ जुलाई) :

१० तारीख तक स्थिति पूर्णतः विपक्ष में रहेगी। इसके उपरांत २० अगस्त तक अनुकूलता बढ़ेगी। नये मित्र बनेंगे। आत्मीयों एवं उच्च अधिकारियों से संपर्क, मंत्रणा व आशानुरूप निर्देश प्राप्त होंगे। राजनीतिक मूल्यांकन होगा। धन लाभ में आशातीत वृद्धि होगी। आपका व्यवहार प्रशंसनीय रहेगा। स्वास्थ्य व दांपत्य सुख में वृद्धि होगी। २१ से मासांत तक उपलब्धि एवं व्यस्तता का दौर रहेगा।

कर्क : (१७ जुलाई–१५ अगस्त) :

२० अगस्त तक प्रतिकूल स्थित में कमी होगी। मनोविनोद बढ़ेगा। जनसंपर्क के वांछित परिणाम मिलेंगे। धन-लाभ की वृद्धि होगी। २९ से ३१ अगस्त तक व्यवसाय में धन-लाभ की कमी चिंतित रखेगी। संबंधियों से विवाद की संभावना रहेगी। संतान पक्ष से सुख बढ़ेगा। प्रतियोगता में सफलता मिलेगी। नये समा-

चारों से प्रसन्नता बढ़ेगी। संगीत के क्षेत्र से जुड़े व्यक्ति लाभ व प्रतिष्ठा प्राप्त करेंगे।

सिंह : (१६ अगस्त–१६ सितंबर) :

इस माह मासांत तक विगत प्रतिकूल स्थितियों में कमी होती जायेगी। आपको २० तारीख तक व्यय व हानि में कमी का अनुभव होगा। प्रयास कुछ अधिक ही करने पड़ेंगे। इसके उपरांत ही लाभ प्राप्त होगा। उपेक्षा व अनादर की दु:स्थिति से गुजरना पड़ सकता है। २० तारीख के उपरांत प्रिय वर्ग से सहयोग प्राप्त होगा। भोजन एवं गृह-सुख में वृद्धि होगी। उन्नति अथवा कार्य में प्रगति का अवसर मिलेगा। रिश्तेदारों का आगमन या उनसे मिलन का अवसर हाथ आयेगा।

कन्या : (१७ सितंबर–१६ अक्टूबर)

इस माह यद्यपि धन-लाभ के अच्छे अवसर हैं तो भी जोखिम या सट्टे के मामले में हानि ही हाथ लगेगी। जनसंपर्क एवं व्यस्तता बढ़ेगी। लंबी यात्रा की संभावना है। भ्रातृवर्ग से मतभेद होंगे। पत्नी या पति को कष्ट होगा। संतान पक्ष से चिंता रहेगी। व्यवहार में कटुता बढ़ने से सुखहानि होगी। नये कार्य या उद्योग की चिंता रहेगी। राजनीति में यश घटेगा। व्यवसायी वर्ग स्थिति से संतुष्ट नहीं रहेगा। प्रतियोगिता के क्षेत्र में सफलता मिलेगी। नये लोगों से संपर्क बढ़ेंगे।

तुला (१७ अक्टूबर–१५ नवंबर) :

वर्ष का श्रेष्ठ समय सिद्ध होगा। आपको अपने आवश्यक कार्यों को निपटाने में पूर्णत: सन्नद्ध हो जाना चाहिये। यकायक सफलता मिलेगी। रोजगार में अधिकार व पद मिलेगा। व्यवसाय में श्रेष्ठ लाभ हस्तगत होगा। नयी योजना प्रारंभ करने के लिए इससे श्रेष्ठ समय वर्ष भर प्राप्त नहीं होगा। २० तारीख के पश्चात उत्तरोत्तर स्थिति कमजोर होती जायेगी। महत्वपूर्ण व्यक्ति या समाचार प्राप्त होगा।

वृश्चिक (१६ नवंबर–१५ दिसंबर) :

आपको इस माह ९ तारीख के पश्चात् मासांत तक वर्ष के श्रेष्ठ समय का अनुभव होगा। समय सुअवसरों से परिपूर्ण रहेगा। पद व अधिकार के साथ-साथ वांछित स्थान की प्राप्ति होगी। सफलता लगभग प्रत्येक कार्य के साथ जुड़ी रहेगी। परामर्श, मंत्रणा अथवा नये कार्य के लिए विशेष अनुकूलता रहेगी। रोजगार में आंशिक बाधाएं उत्पन्न होंगी, जो अल्प प्रयास से ही दूर हो जायेंगी। गौरव बढ़ेगा। मानसिक बल बढ़ेगा। शत्रु पराजित होंगे। परिवार पक्ष से पूर्ण सुख प्राप्त होगा।

धनु (१६ दिसंबर–१३ जनवरी) :

२० अगस्त तक प्रत्येक दृष्टि से बाधा, विलंब, व्यस्तता, उलझन, हानि अथवा अपेक्षित धन-लाभ की कमी प्रतीत होगी। कार्य-प्रगति आवश्यकतानुरूप नहीं हो सकेगी। वांछित सहयोग का आत्मीय वर्ग से अभाव रहेगा। २१ अगस्त से मासांत तक रोजगार में विशेष अनुकूलता हस्तगत होगी। गृहसुख सुविधा आशानुरूप रहेगी।

कल्याणकारी कार्य की प्रवृत्ति बढ़ेगी। राजनीति में उत्कर्ष होगा। व्यवसाय में लाभ यथेष्ठ होगा।

मकर : (१४ जनवरी–१२ फरवरी) :

इस माह मिश्रित प्रभाव होंगे। प्रथम व तृतीय सप्ताह विशेषरूप से कष्टदायी होंगे। द्वितीय व चतुर्थ सप्ताह आशानुरूप सामान्य समय व्यतीत होगा। प्रथम व तृतीय सप्ताह में उच्च अधिकारी वर्ग से चिंता व उपेक्षा मिलेगी। पत्नी की पीड़ा बढ़ेगी।

विरोधियों से प्रत्यक्ष टकराहट होगी। पुरुषार्थ निष्फल होगा। व्यसनों से बचें। यात्रा या वाहन-चालन में सावधानी अपेक्षित है।

द्वितीय व चतुर्थ सप्ताह में व्यावसायिक लाभ बढ़ेगा। कोई चिरस्थायी लाभ हस्तगत होगा। लंबी यात्रा होगी। परंतु गृह-सुख में कमी होगी।

कुंभ : (१३ फरवरी–१४ मार्च) :

इस माह यश बढ़ेगा। बाधाओं पर विजय हस्तगत होगी। दांपत्य जीवन के साथी का स्वास्थ्य प्रभावित होगा। स्त्री व यात्रा दोनों ही पक्षों से चिंता मिलेगी। उच्च वर्ग पर प्रभाव रहेगा। २० के उपरांत शत्रु व बाधा दोनों पर अपना प्रभुत्व रहेगा।

सामाजिक स्थिति ऊंची रहेगी। संतान पक्ष से यथेष्ठ सुख होगा। प्रतियोगिता में सफलता मिलेगी। परिवार सुख बढ़ेगा। जोखिम न लें। प्रथम सप्ताह विशेष प्रतिकूल रहेगा। बाद के सप्ताह मिश्रित प्रभाव युक्त रहेंगे।

मीन : (१५ मार्च–१३ अप्रैल) :

इस माह १७ तारीख तक प्रतिकूलता बढ़ेगी। धन की अल्पता का आभास होगा। रोग का प्रकोप परिवार में रहेगा। उच्चवर्ग से विवाद की स्थिति निर्मित होने की संभावना का ध्यान रखें। यात्रा कष्टप्रधान रहेगी।

इसके बावजूद यश, सम्मान एवं बाधाओं पर विजय हस्तगत होगी। दांपत्य जीवन में पूरे माह में कटुता व सुखहानि के अवसर आयेंगे।

स्त्री-पक्ष से व्यवहार में विशेष ध्यान रखें। १८ तारीख से मासांत तक रोजगार एवं व्यवसाय में लाभ बढ़ेगा।

अगस्त मास के त्यौहार एवं व्रत

(१) हरियाली अमावस–१, (२) हरियाली तीज–४, (३) नागपंचमी–६, (४) तुलसी जयंती–९, (५) कल्कि जयंती–१२, (६) एकादशी–पवित्रा एवं अजा क्रमशः १३ एवं २६, (६) ताजिया (मुहर्रम)–१३, (८) प्रदोष–१४ एवं २८, (९) रक्षा-बंधन–१७, (१०) कजलिया–१८, (११) बूढ़ातीज–१९, (१२) चतुर्थीव्रत–२०, (१३) चंद्र षष्ठी–२१, (१४) हलषष्ठी–२२, (१५) जन्माष्टमी (कृष्ण जन्म) २४, (१६) गोगा नवमी–२५, (१७) पोला एवं कुशग्रहणी अमावस–३१ अगस्त।

–सी. टी. ओ., देवलोक कालोनी,
बैरागढ़, भोपाल, म. प्र.

□

परखनली में हुए शीत परमाणु संलयन

'अग्नि' के बाद का महानतम आविष्कार

□

— राहुल गोस्वामी, माइकल मेरी, डॉ. विकास सिन्हा —

वैज्ञानिक इसे 'अग्नि' के बाद का महानतम आविष्कार मान रहे हैं। अमरीकी विज्ञान सलाहकार डॉ. ग्राहम इसे एक ऐसा धमाका मानता है, जिसकी गूंज दुनिया में इक्कीसवीं सदी तक सुनायी देगी, और एक अप्रत्याशित उथल-पुथल का कारण बनेगी।

भारतीय वैज्ञानिकों के दल ने, जिसमें भाभा परमाणु केंद्र के निदेशक डॉक्टर आयंगर, 'टाटा इंस्टीटयूट ऑफ फंडामेंटल रिसर्च' के रासायनिक भौतिकी विभाग के प्रमुख डॉक्टर के. एस. वी. संतानम्, भाभा परमाणु केंद्र के भौतिकी वर्ग के अध्यक्ष डॉक्टर आर. चिदंबरम्, कलपक्कम स्थित 'इंदिरा गांधी सेंटर फॉर एटोमिक रिसर्च' से संबद्ध सर्वश्री डॉक्टर चेरियन के. मैथ्यू, एफ. आर. बालासुब्रह्मण्यम्, और बी. आर. रामन आदि का समावेश है, न सिर्फ़ इस क्रांतिकारी प्रयोग की प्रशंसा की है, उस पर अलग-अलग दलों के माध्यम से काम भी शुरू कर दिया है

भारत में आशातीत सफलता

वस्तुत: भारत के कम से कम दस अनुसंधान केंद्रों ने इस प्रयोग को, जिसका सबसे पहला सफल प्रयोग दो रसायन-शास्त्रियों— इंग्लैंड के सॉदेम्टन विश्वविद्यालय के प्रोफेसर मार्टिन क्लैशमैन, तथा अमरीका के यूटाह विश्वविद्यालय के प्रोफेसर स्टेनली पोन्स ने किया था, समाचार पाते ही, थोड़े परिवर्तित रूप में आरंभ कर दिया था। जो एकमात्र परिवर्तन डॉक्टर संतानम् के दल ने किये, वह यह थे कि उसने पैलेडियम के स्थान पर टाइटैनियम का और लिथियम के स्थान पर सोडियम क्लोराइड का प्रयोग किया। उसके पहले दो प्रयोगों के दौरान, थाइरिस्टर्स का माप करते समय, उसका तापमापक यंत्र टूट गया था। लेकिन प्रयोग के दौरान एक मिनट में एक डिग्री सेंटीग्रेड की आशातीत और अकल्पनीय वृद्धि मापी गयी। दल ने यह भी पाया कि प्रत्येक ड्यूटेरियम परमाणुओं में से दो का विलय हुआ।

भाभा परमाणु केंद्र के ४० भौतिकविदों के दल ने यह प्रयोग बड़ी तत्परता के साथ किया। उनका लक्ष्य न केवल उत्सर्जित हो रही ऊर्जा की अधिक से अधिक मात्रा को प्राप्त करना था, वरन् अत्याधुनिक यंत्रों के प्रयोग द्वारा न्यूट्रान की अधिक मात्रा की मौजूदगी को साबित करना भी था।

डॉक्टर चिदंबरम् ने इस प्रयोग के बारे में बाद में कहा, 'हमने अपने प्रयोग द्वारा यूटाह् में किये गये प्रयोग से उत्सर्जित ऊर्जा की अधिक मात्रा प्राप्त की, जिसे हमारी शानदार सफलता माना जा सकता है। दो सप्ताह तक चले अपने प्रयोग के दौरान हम अचूक तरीके से यह सिद्ध कर सके कि इस प्रयोग की अवधि में उत्सर्जित ऊर्जा और शीत परमाणु संलयन एक वास्तविकता है, प्रयोग सिद्ध वास्तविकता। हमें इस बात का गर्व है कि जहां एक ओर विकसित देशों के भौतिकविद् इस दुविधा में पड़े हैं कि शीत परमाणु संलयन एक निश्चितता है, या नहीं, भारत ने इसे न सिर्फ सिद्ध कर दिखाया, विश्व की प्रशंसा भी प्राप्त की। हमें यह विश्वास भी हुआ कि हम फिल्हाल इस क्षेत्र में अन्य देशों से आगे हैं।'

'इंदिरा गांधी सेंटर फॉर एटोमिक रिसर्च' के दल के प्रवक्ता श्री मैथ्यूज ने कहा, 'हमें कुछ प्रयोगों में ही न्यूट्रानों को खोजने में सफलता मिली, और कुछ में नहीं। इसके कई कारण हो सकते हैं, और हम उनका पता लगाने का प्रयास कर रहे हैं।'

लेकिन भारतीय वैज्ञानिकों ने अलग-अलग जितने प्रयोग किये, उनमें सबसे अधिक विश्वसनीय और सफल भाभा परमाणु केंद्र के वैज्ञानिक को ही माना जा सकता है। उनके प्रयोगों से संबंधित डॉक्टर आयंगर तथा डॉक्टर चिदंबरम् देश के दो श्रेष्ठतम न्यूक्लियर भौतिकविद् हैं, जिनकी पुष्टि इस तथ्य का समर्थन करती है कि पोन्स-फ्लैशमैन-प्रक्रिया के परिणाम निःसंदेह सत्यापित हो चुके हैं। डॉक्टर आयंगर के कथनानुसार, 'जब भारी पानी में रखे पैलेडियम या टाइटेनियम के इलेक्ट्राड से विद्युत्धारा प्रवाहित की जाती है, तो उससे उत्पन्न-प्रभाव संलयन का संकेत देते हैं। इस प्रक्रिया में जो अतिरिक्त ऊर्जा उत्सर्जित हुई, वह यह दर्शाती है कि उसके साथ अतिरिक्त कोई और रासायनिक प्रक्रिया भी हो रही है।'

श्री चिदंबरम् प्रयोग को सफल मानते हैं, और उसकी अंतिम सफलता के प्रति आशावान् भी हैं, लेकिन उनके मन में कई प्रश्न भी हैं। वे कहते हैं, 'पेलेडियम में ड्यूटेरियम के अवशोषण का एक संभाव्य कारण यह हो सकता है कि उससे अत्यधिक गर्मी पैदा होती है। थोड़ी मात्रा में शीत संलयन भी हो रहा है, लेकिन हम नियंत्रण स्तरों से ऊपर न्यूट्रान के उत्सर्जन को नहीं देख पाते। एक विचित्र बात यह है कि न्यूट्रान के उत्सर्जन एकाएक तेजी से होते हैं जिससे प्रतीत होता है कि पैलेडियम एक अवस्था से दूसरी अवस्था में परिवर्तित होता रहता है। इस संभावना से यह आशा होती है कि इस प्रक्रिया से गुज़रता हुआ कोई विद्युदग्र (एलेक्ट्रोड) संरचनात्मक परिवर्तनों के कारण न्यूट्रानों का उत्सर्जन बंद कर देगा।'

डॉक्टर विकास सिन्हा का दावा

'वैरिएबिल एनर्जी सायक्लोट्रोन सेंटर' के निदेशक डॉक्टर विकास सिन्हा का दावा

है कि उनके सेंटर ने जिन न्यूट्रान प्रस्फोटों को खोज निकाला है, वे वायुमंडल में व्याप्त न्यूट्रानों से तीन गुना अधिक शक्तिशाली हैं।

सेंटर ने शीत परमाणु संलयन पर जो प्रयोग किये हैं, वे पोन्स-फ्लैशमैन प्रक्रिया पर किये गये प्रयोगों से काफ़ी मिलते-जुलते हैं। इस प्रयोग में न्यूट्रान-प्रस्फोटन के दौरान तापमान दस मिनट में २५ डिग्री सेंटीग्रेड से ५३ डिग्री सेंटीग्रेड तक पहुंच गया। लेकिन, डॉक्टर सिन्हा कहते हैं, 'मैं इस प्रयोग को कोल्ड फ्यूजन नहीं कह सकता। हम न्यूट्रान के प्राचुर्य का कारण मालूम करने का प्रयास कर रहे थे। संभव है, इस प्राचुर्य का कारण वायुमंडल में मौजूद अंतरिक्षी किरण थीं, या वे स्वयं प्रयोग के दौरान हुए किसी कारण से जन्मी थीं। यदि उनका जन्म प्रयोग के दौरान हुआ था, तो इस प्रयोग को निःसंदेह 'कोल्ड फ्यूजन' माना जा सकता है, और यह भी माना जा सकता है कि उसके परिणामस्वरूप तारा-भौतिकी व ऊर्जा-विज्ञान में क्रांतिकारी परिवर्तन होने संभव हैं। हम अपने संतोष के लिये अधिक नियंत्रित परिस्थितियों में प्रयोग करने का इरादा कर रहे हैं।'

डॉक्टर विकास सिन्हा का केंद्र भाभा परमाणु केंद्र के अंतर्गत काम करता है। उनका कहना है कि केंद्र में किये गये अन्य प्रयोगों में ऊर्जा की कई गुनी मात्रा प्राप्त की गयी, तथा तीन गुने अधिक उत्सर्जनों को देखा गया, जो एक शुभ संकेत है।

डाक्टर सिन्हा को आशा है कि 'कोल्ड फ्यूजन' पर चल रहे प्रयोगों से पश्चिम बंगाल में बाकरेश्वर नामक स्थान पर स्थित गरम सोतों, और बिहार में संथाल परगना में स्थित तान्तालोई नामक स्थान में स्थित हीलियम, आर्गन (निष्क्रिय गैस) और भारी पानी (हैवी वाटर) के स्रोतों के रहस्य पर भी प्रकाश पड़ सकेगा। तान्तालोई में कलकत्ता विश्वविद्यालय के प्रोफेसर श्यामदास बनर्जी ने इस दिशा में पिछले तीन दशकों में अनेक प्रयोग किये हैं।

किफायती ऊर्जा की प्राप्ति की आशा

प्रायः पांच वर्ष पूर्व पोन्स की किचन में जो प्रयोग महज शौक व मनोरंजन के लिए आरंभ किये गये थे, उसने विश्व के विज्ञान जगत में वही तहलका मचाया, जो वर्षों पूर्व, नोबेल-पुरस्कार विजेताओं—क्रिक और वाटसन—ने खेल खेल में किये गये डी.एन.ए. के अणु की दुहरी सर्पिल कुंडली के आविष्कार ने मचाया था। जब पोन्स ने यह प्रयोग आरंभ किया था, तो स्वयं उसके कथनानुसार, उसे इस प्रक्रिया में सफलता पाने की आशा नहीं के बराबर थी। इस प्रयोग की सफलता से पूर्व, पोन्स ने अपने सहयोगी फ्लैशमैन के साथ इस 'शौक' पर एक लाख से अधिक डॉलर खर्च किये थे। इस प्रयोग के, जिसे वे अवकाश के क्षणों और समय में किया करते थे, दौरान एक बार उनकी जान खतरे में भी पड़ गयी, जब पैलेडियम के भाप में बदल जाने के कारण प्रयोगशाला का पत्थर का फर्श

विस्फोट के कारण जल गया था।

अब जबकि इन दोनों आविष्कारक-वैज्ञानिकों का पांच साल पुराना सपना साकार होने जा रहा है, इस सपने को मूर्त रूप देने के लिए सबसे अधिक प्रयास, जैसा कि हम पीछे बता आये हैं, भारत के वैज्ञानिक ही कर रहे हैं। भाभा परमाणु केंद्र के निदेशक डॉक्टर पी. के. आयंगर को पूरी आशा है कि उनके वैज्ञानिक अन्य भारतीय वैज्ञानिकों की सहायता से, शीघ्र ही बड़े पैमाने पर, संलयन ऊर्जा, किफायतीदर पर प्राप्त कर, देश की ऊर्जा के संकट को हल कर सकेंगे। चूंकि इस प्रक्रिया का मुख्य पदार्थ ड्योटेरियम समुद्री जल से प्राप्त होता है, इसलिए उसे प्राप्त करने का खर्चा बहुत कम—नाम मात्र का—आयेगा। दस गेलन ड्यूटेरियम प्राप्त करने में १५० रु. भी मुश्किल से खर्च होंगे। और सिर्फ़ एक फुट समुद्री पानी की ड्योटेरियम की जो मात्रा प्राप्त होगी, वह भारत जैसे विशाल देश को एक हजार से अधिक वर्षों तक विद्युत्–ऊर्जा प्रदान कर सकेगी।

श्री आयंगर इस बारे में कहते हैं, 'भारत ने न्यूक्लीयर रिएक्टरों के निर्माण की कल्पना ४० वर्ष पूर्व, जब न्यूक्लर ऊर्जा मात्र एक स्वप्न था, की थी। अब हम कोल्ड फ्यूजन के युग में प्रवेश कर रहे हैं। हम कह नहीं सकते कि हमें इस क्षेत्र में कब और किस सीमा तक सफलता मिलेगी, लेकिन हम इस संबंध में काफी सचेत भी हैं, और उत्तेजित भी, और प्रयोगों द्वारा यह जानने का प्रयास कर रहे हैं कि विद्युदग्रों (इलेक्ट्राड्स) को संक्षारित होने से कैसे रोका जाये तथा अन्य समस्याओं पर कैसे काबू पाया जाये, आदि। हमारे वैज्ञानिकों को प्रयोगों से पता चला है कि सेल्स में प्रयुक्त होने वाले पैलेडियम और टिटेनियम विद्युदग्र जल जाते हैं, या जंग खा जाते हैं, जिनसे सेल्स बेकार हो जाती हैं। हम एक ऐसे विद्युदग्र (इलेक्ट्राड) का निर्माण करना चाहते हैं, जो अपने मध्य से ठंडे पानी को प्रवाहित होने दे, ताकि वह उस ताप को कम कर सके, जो उसने उत्पन्न किया है। हमारे विचार से इस कार्य के लिए नली के आकार का इल्केट्रोड आदर्श रहेगा। हम यह भी प्रयास कर रहे हैं कि इस सैल में से प्रवाहित होने वाली तरंगों का स्तर निम्न रहे, ताकि इल्केट्रोड के अंदर का तापमान बहुत अधिक न हो पाये।'

भारतीय वैज्ञानिकों को पूरी आशा है कि 'कोल्ड फ्यूजन' की अभियांत्रिकी इतनी सरल होगी कि उसके आधार पर किसी व्यावसायिक न्यूक्लीय रिएक्टर का निर्माण संभव हो सके। इल्केट्रोड के जलने की हालत में, समस्या को मिश्र धातुओं के प्रयोग से या इलेक्ट्रोडों के जरिये शीतलकों को गुज़ार कर, किया जा सकता है।

टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ फंडामेंटल रिसर्च के श्री के. एस. वी. सन्तानम् का कहना है कि 'मुझे तो इसमें कोई संदेह नहीं है कि इस प्रक्रिया को व्यावसायिक रूप देकर, बड़े पैमाने पर आरंभ किया जा सकता है।'

जब यह संभावना वास्तविक रूप ले लेगी, तब भारत में बिजली इतनी सस्ती हो जायेगी कि उसका अधिकाधिक उपयोग ऊर्जा के अन्य स्रोतों के स्थान पर होने लगेगा। सही दर का अनुमान देना, फिलहाल वैज्ञानिकों के लिए संभव नहीं है, तथापि यदि व्यावसायिक 'कोल्ड फ्यूजन रिएक्टर', आशानुकूल दक्ष प्रमाणित हुए, तो एक छोटे घर के आकार का रिएक्टर, जिसमें १५० टन भारी पानी और ९० से १२० टन टिटेनियम होगा, १००० मिली वाट विद्युत् ऊर्जा का उत्पादन हो सकेगा। चूंकि टिटेनियम पैलेडियम की अपेक्षा कम सस्ता होगा, और उसकी कीमत ४००० रुपये प्रति टन होगी, और 'हेवी वाटर' (भारी पानी) का खर्च ५००० रुपये प्रति टन होगा, तो इस सारे पावर-स्टेशन का खर्चा ५०० करोड़ रुपये आयेगा, जो आज के ऊष्णीय (थर्मल) स्टेशन के खर्च से एक तिहाई या एक चौथाई होगा।

हमारे वैज्ञानिकों को यह भी आशा है कि यदि 'कोल्ड फ्यूजन' जीवनक्षम सिद्ध हुआ तो उच्चतर ऊर्जा घनत्व प्राप्त होगा, जिसके फलस्वरूप खर्चे में और भी कमी होने की आशा है। परिचालन-व्यय भी वहुत कम हो जायेगा, कारण वह कोयले या न्यूकलर पावर स्टेशनों पर होने वाले खर्चों से बहुत कम होगा। इसका कारण यह है कि पदार्थ की अल्पतम मात्रा भी 'फ्यूजन' से इतनी अधिक ऊर्जा का उत्पादन करेगा कि १००० मिलीवाट वाले पावर स्टेशन में हुए 'फ्यूजन' की मात्रा भारी पानी द्वारा खपने वाली मात्रा के लिए अपर्याप्त होगी।

ऊर्जा-उत्पादन में नुकसान का खात्मा

न्यूक्लीय रिएक्टरों की भांति 'कोल्ड फ्यूजन' रिएक्टरों का निश्चित आकारों में होना जरूरी नहीं है। इसलिए स्थानीय आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए छोटे पावर-स्टेशन लगाये जा सकेंगे। इससे ऊर्जा-उत्पादन में होने वाले कम से कम २० प्रतिशत नुकसान से वचा जा सकेगा। इसके अलावा, 'हाई टैंशन' लाइनों के लगाने के उस खर्च से भी बचा जा सकेगा जो लागत का ४० प्रनिशत तक हो जाता है। इन दोनों कारणों से 'कोल्ड फ्यूजन' से प्राप्त विजली का खर्च इतना कम हो जायेगा कि उपभोक्ता को आज की कीमत के मुकाबले में उसका २० प्रतिशत ही देना होगा। तब, बिजली कैरोसीन (मिट्टी के तेल) और गैस सिलेंडर से भी ज्यादा किफ़ायती हो जायेगी। रेल-यातायात की दरें भी सस्ती हो जायेंगी, और उसका काम बिना डीजल के भी चलने लगेगा।

आज भारत को तेल-उत्पादों की खरीद के लिये १२,००० करोड़ रुपये व्यय करने पड़ते हैं। तब बिजली की अधिकाधिक और सस्ते दर वाली खपत के कारण देश को इस मंहगे भार से मुक्ति मिल जायेगी। भारत का ऋण-भार भी क्रमशः समाप्त हो जायेगा, और हम आर्थिक दृष्टि से भी पूरी तरह आत्मनिर्भर हो जायेंगे।

विजली की दरों में भारी कमी आने

और उसका उत्पादन बहुत अधिक बढ़ जाने के कारण, आम हिंदुस्तानी के जीवन स्तर में आशातीत वृद्धि होगी, और यह बेहतर जीवन-स्तर जनसंख्या की वृद्धि में भी कमी लायेगा। निर्धन देशों को जिन दो अतर्विरोधों का सामना करना पड़ता है, उनमें से एक यह है कि जो देश जितना समृद्ध होता है, उसकी आबादी की दर उतनी ही घट जाती है। दूसरा अतर्विरोध यह है कि जो देश जितना ही अधिक निर्धन होता है, वह अपने ऊर्जा-स्रोतों का उपयोग करने में उतनी ही कंजूसी बरतता है। अमरीका चूंकि अपने ऊर्जा-स्रोतों का उपयोग अधिकाधिक मात्रा में करता है, इसलिए उसका उत्पादन-व्यय भारत की अपेक्षा ४० प्रतिशत ही है।

कार-प्रेमियों को यह जानकर प्रसन्नता होगी उन्हें चलाने का खर्च भी बहुत कम हो जायेगा।

एकमात्र भय

'कोल्ड फ्यूजन' से डर है, तो सिर्फ़ एक बात का। और वह यह कि 'कोल्ड फ्यूजन' की मेहरबानी से पिछड़े से पिछड़े देशों को भी सस्ती दर पर परमाणवीय अस्त्र-शस्त्रों का निर्माण करने तथा अन्य देशों को आतंकित करने का मौका मिल सकेगा। इसका मुख्य कारण यह है कि 'कोल्ड फ्यूजन' से उन न्यूट्रानों को विमुक्त किया जा सकेगा, जिनका उपयोग साधारण (नॉन फिजाइल) यूरेनियम २३८ को फिजाइल प्लूटोनियम २३९ में, जिससे परमाणवीय अस्त्रों का निर्माण होता है, परिवर्तित किया जा सकेगा।

तो, डर यह है कि 'कोल्ड फ्यूजन' प्रौद्योगिकी के विश्वव्यापी प्रयोग के बाद, कोई भी सरफिरा रसायनशास्त्री 'कोल्ड फ्यूजन सेल्स' को न्यूट्रानों का स्रोत बनाकर परमाणवीय अस्त्रों का निर्माण आसानी से करता है। यह डरावनी संभावना 'कोल्ड फ्यूजन' के लाभों पर पानी फेर देगी।

भविष्य के गर्भ में क्या छिपा है, कोई नहीं जानता। फिर भी विश्व भर के भौतिकविद् इस बात से खुश और आशावान् हैं कि शीघ्र संलयन अर्थात् सामान्य तापमान पर दो परमाणुओं के विलय से असीमित ऊर्जा की प्राप्ति सारी दुनिया को होने जा रही है। प्रिंसटन विश्वविद्यालय की प्लाज्मा भौतिक प्रयोगशाला के निदेशक श्री हैरल्ड फर्थ को आशा है कि सन २०४० या २०५० तक ऊर्जा की विश्वव्यापी कमी का संकट बड़ी आसानी से और किफ़ायती ढंग से हल हो जायेगा।

इतना ही नहीं, कैलिफोर्निया के लॉरेंस लिवरपूल विश्वविद्यालय के श्री ऐरिक स्टोर्म का कहना है, 'प्रकृति भी अन्य ऊर्जा स्रोतों के स्थान पर फ्यूजन से प्राप्त को पसंद करती है, कारण फ्यूजन के कारण प्रदूषण का खात्मा भी हो जायेगा, और आदमी फिर एक बार आकाश का स्वाभाविक, स्वच्छ नीला रंग देख सकेगा, और रासायनिक अवशिष्टों से पूर्ण नदियों और झीलों आदि से निर्मल और स्वच्छ पानी बहने लगेगा।'

□

सत्संकल्प का पर्व

रक्षाबंधन से स्वधर्म रक्षा

□ दुर्गाशंकर त्रिवेदी

'अरे आपकी नगरी की दुकानों पर रंग-विरंगी चमकीली मोती जड़ी रेशमी फूंदों से सजी हुई ये क्या चीजें विक रही हैं?' राजकुमारी एलेक्जेंड्रा ने जयपुर रियासत के एक अफसर से राखी के दिन पास आने पर सजी-धजी दुकानों की चकाचौंध से विस्मृत होकर पूछा। अधिकारी ने उस आंग्ल महिला को रक्षाबंधन पर्व का महत्व समझाते हुए राखी के वारे में विस्तृत जानकारी दी। सुन-सुनकर एलेक्जेंड्रा ने भी भारत में किसी को अपना भाई वनाकर राखी बांधने की एक मीठी-सी इच्छा पनपा ली।

वात १८७६ ई. की है। प्रिंस आफ वेल्स (वाद में एडवर्ड सप्तम) अपनी पत्नी राजकुमारी एलेक्जेंड्रा के साथ सवाई जयसिंह के अद्‌भुत कोलाज गुलावी नगर के सौंदर्य को निहारने आये थे।

जयपुर रिसायत के तत्कालीन नरेश महाराजा रामसिंह (द्वितीय) ने उनकी खूब आवभगत की। पूरव-पश्चिम की संस्कृति के मध्य वे सांस्कृतिक सेतु माने जाते हैं। उन्होंने शाही दंपति की खातिरदारी में देशी तथा विदेशी सभी परंपराओं को मद्देनजर रखकर विविध आयोजन किये।

उन्होंने अपने विदेशी मेहमानों को शिकार में शामिल किया। इसके वाद उन्हें पोलो का मैच भी वतलाया गया। इस मैच के वाद रामवाग के विलियर्ड कक्ष में 'फोटू का कारखाना' नामक अपने रियासती फोटोग्राफी उद्योग में उनके साथ फोटो भी खिचवाये। चारपाई पर वैठकर भारतीय स्वादिष्ट व्यंजनों का आनंद लेने के उपरांत प्रिंस आफ वेल्स ने गुड़गुड़ाकर हुक्का पीने का लुत्फ भी लिया। हाथियों की लड़ाई देखकर तो दोनों ही मस्त हो उठे। उसी दौरान एलेक्जेंड्रा को अपनी इच्छा पूरी कर लेने की जंच गयी। उसने महाराजा रामसिंह को राखी बांधने की अपनी इच्छा जाहिर की। महाराजा ने भाई-वहिन के रिश्ते, महत्व और भारतीय परंपरा में वहिन-वेटी के घर भोजन नहीं करने आदि की जानकारी उन्हें दी। पर वे राखी बांधने के लिए अड़ ही गयीं तो भारतीय रीति-रिवाजों के अनुरूप सारी व्यवस्था की गयी। राजकुमारी एलेक्जेंड्रा ने जयपुर नरेश रामसिंह को तिलक लगाया, मिठाई खिलायी, श्रीफल और उपहार देकर राखी वांधी तथा भाव-विभोर हो भाई के पैर छूकर शुभाशीष लेने झुकीं तो महाराजा ने भावविभोर हो अपनी इस धर्म-वहिन को वांहों में भर लिया। परं-

परा के अनुरूप उन्होंने बहिन को उपहारों से लाद दिया। इस तरह राखी में बंधकर रह गयी पूरब-पश्चिम के दो भावुक भाई-बहिन की भ्रातृत्व-भावना।

समय अपने पंख फड़फड़ाकर उड़ता रहा। सवाई रामसिंह द्वितीय के बाद सवाई माधोसिंह द्वितीय जयपुर की शाही गद्दी पर बैठे। इसी दौरान १९०२ ई. में एडवर्ड सप्तम द्वारा राजा बनने के पहले उन्हें राज्याभिषेक समारोह में भाग लेने के लिए इंग्लैण्ड आने का निमंत्रण भेजा। इस आमंत्रण को पाकर महाराज दुविधा में पड़ गये। कारण यह था कि सात्विक हिंदू सवाई माधोसिंह का भी उन दिनों की मान्यता के अनुरूप यह मानना था कि हिंदुस्तान छोड़ने से वे 'मलेच्छ' बन जायेंगे। ऐसे में स्वधर्म को खोकर वे कहीं के नहीं रहेंगे। उन्होंने जो-जो भी संभव थे, वे सभी प्रयत्न किये ताकि फिरंगी के देश में कदम रखने से वे अपने आपको बचा सकेंगे। किंतु वे बच नहीं सके और उन्हें समारोह में शिरकत को स्वीकार करना ही पड़ा।

अब उन्होंने पंडित, पुरोहितों को कोई न कोई रास्ता तलाशने को कहा। भारतीय संस्कृति के मर्मज्ञ पंडितों ने तो तुरंत ही उनकी समस्या हल कर दी। उन्होंने यह व्यवस्था दी कि अगर महाराजा गंगाजल साथ ले जायें और भारत भूमि की मिट्टी साथ ले जाकर उससे चौका लगवाकर भोजन अपने भगवान को भोग लगवाकर उसे प्रसाद मानकर ग्रहण करेंगे तो उनके धर्म को कोई भी क्षति नहीं पहुंचेगी। सामान सभी यहीं से साथ ले जाना चाहिये।

महाराजा ने व्यवस्था के अनुरूप सारी सामग्री जुटाने का आदेश दिया। मिस्त्री-खाने के दो कारीगरों—गोविंदनारायण तथा माधव ने चांदी के विशाल कलश बनाये। उनमें हरिद्वार से विशेष रूप से गंगाजल भरकर मंगवाया गया। ३२ हजार चांदी के सिक्कों को पिघलाकर २ माह ३ दिन में ये कलश बनाये गये थे। ४३५ किलो प्रत्येक वजन वाले ये कलश अभी भी कोई भी दर्शक सिटी पैलेस म्यूजियम, जयपुर में देख सकता है। यात्रा के लिए एक जहाज 'ओलिम्पिया' भी खास तौर पर बनवाया गया। गंगाजल से धोकर इसका पवित्री-करण किया गया। इसी में संगमरमर का एक मंदिर निर्माण कर श्री गोविंद देवजी की मूर्ति स्थापित की गयी थी। रसोइया तथा भोजन की सामग्री आदि भी जयपुर से ही साथ ले जायी गयी। इस तरह विदेश यात्रा में कोई विशेष उल्लेखनीय बात तो नहीं हुई क्योंकि पंडितों की व्य-वस्था के अनुरूप वे अपने रसोइये के द्वारा बना हुआ भोजन भगवान को अर्पित करके प्रसाद स्वरूप ग्रहण कर लिया करते थे। इस बीच कई ऐसे अवसर आये जब उन्हें अपनी बुआ एलेक्जेंड्रा की मनुहार को एन-केन प्रकारेण टाल देना पड़ा। पर एक बड़ा खतरा अभी भी मंडरा रहा था, उनके इर्द-गिर्द। उन्हें लग रहा था कि अब या तो स्वधर्म भ्रष्ट हो जायेगा अथवा एडवर्ड

दीपावली विशेषांक

हमारा अक्तूबर-१९८९ का अंक दीपावली विशेषांक के रूप में मनोहारी साज-सज्जा के साथ विविधतापूर्ण विशिष्ट सामग्री के साथ प्रकाशित होगा। अतएव पाठकों एवं एजेन्टों से अनुरोध है कि उसकी अग्रिम प्रतियां सुरक्षित कराना न भूलें। —व्यवस्थापक

सल्तम की निगाह में जयपुर रियासत कांटे की तरह खटकने लगेगी।

इधर सभी के मन में ही एक प्रश्न शूल खटक रहा था कि समारोह की रात्रि को दिये जाने वाले विशेष भोज में वे फिरंगियों के समक्ष उनके हाथों बना भोजन कैसे खायेंगे? और रात्रि को भोज की उपेक्षा करके वे अंग्रेजों की नाराजी तो मोल नहीं ले बैठेंगे? कई नजदीक के लोगों ने उनके मन की थाह लेनी चाही तो उन्होंने रहस्यमय जवाब देकर बात वहीं की वहीं रख दी—'अरे जब वू टेम आवेगा तब की बात तब ही देखेंगी।' (अरे जब वह समय आयेगा तब की बात भी देख लेंगे।)

समय जाते देर कितनी लगती है। वह अवसर आ ही गया। तरह-तरह की बातें, डर व संदेह का दौर जारी ही था। अधिकांश राजनैतिक पर्यवेक्षकों की धारणा थी कि महाराजा जयपुर राज्याभिषेक के सम्मान स्वरूप दिये गये शाही रात्रि भोज में शामिल नहीं होंगे। किंतु वे स्वयं शांत, स्थितप्रज्ञ और सारी घटनाओं से, चर्चाओं से अपने आप को बेखबर सिद्ध कर रहे थे।

सारी कार्यवाहियों में बहुमूल्य हीरे-जवाहरातों और कीमती वस्त्रों से सजे-धजे महाराजा माधोसिंह मौजूद रहते। और लोग आश्चर्य मिश्रित आंखों से आंखें फाड़-फाड़कर देख रहे थे। वे चकित थे कि यह देख क्या रहे हैं। भोज कक्ष में महाराजा माधोसिंह को देखकर सभी लोग आश्चर्यचकित थे। उनकी शान निराली ही थी। वे भोजन के लिए टेबुल पर नहीं गये। स्वयं शाही परिवार के सदस्यों तक ने भी आग्रह किया। महारानी एलेक्जेंड्रा ने भी मनुहार की तो उनका दो टूक जवाब रात्रि भोज कक्ष में गूंज उठा—'अजी बुआजी, मैं एक हिंदू हूं। आप तो जानती ही हैं कि हिंदू बहिन-बेटी के घर पर खाना कैसे खा सकता है? आपने भी तो मेरे पिता महाराजा साहब को राखी बांधकर जयपुर रियासत की बहिन-बेटी बनने का गौरव पाया है।'

एलेक्जेंड्रा ने तब गर्वपूर्वक अपने भतीजे को छाती से चिपका लिया। भारतीय परंपराओं की गहनता से परिचित वहां तब कोई नहीं था। राखी का बंधन इस तरह जयपुर नरेश माधोसिंह के स्वधर्म रक्षण में भी अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभा गया।

—बी-११६, विजय पथ, तिलकनगर,
जयपुर—४, राजस्थान

□

सांस्कृतिक मंच

□

'अंधा युग' का मंचन

रंगमंच एवं सांस्कृतिक परंपराओं की नींव को सशक्त बनाने की परंपरा के निर्वाह के रूप में विगत ७ जून को बिहार के रांची नगर में डा. धर्मवीर भारती की प्रसिद्ध काव्य-रचना 'अंधा-युग' की प्रस्तुति की गयी। प्रस्तुतकर्ता भूपेंद्र नारायण सिंह ने सीमित साधनों एवं सीमाओं के बीच इस योजना को सफल रूप दिया।

गांधारी की भूमिका में मौंतुषी चक्रवर्ती ने तो मानों, क्रोध, ममत्व, उत्तेजना, प्रायश्चित और परिस्थितियों की विद्रूपता पर हाहाकार करती नारी के चरित्र को साकार रूप दिया। इसके अलावा शंकर प्रसाद का संगीत संयोजन, विशेषकर पार्श्व ध्वनि और पार्श्व गायन ने नाटक को और अधिक प्रभावशाली बनाया।

नगर में सांस्कृतिक मंचों से नाटक की प्रस्तुति की नियमित परंपरा के न रहते हुए भी नगर के रंगकर्मियों ने 'अभिज्ञान परिषद' की सांस्कृतिक छाया तले अपना कौशल दिखाया। —विनोदकुमार लाल

०००

काव्य-संग्रह का विमोचन

९ जून को श्री शिवशंकर वशिष्ठ के तीसरे काव्य-संग्रह 'सच क्या है?' का विमोचन करते हुए डा. महावीर अधिकारी ने कहा—'कविता में जब से छंद का लोप हुआ, हमारी सामाजिक लय भी टूटती गयी और जीवन दिन--प्रतिदिन विशृंखलित होता गया।

डा. प्रभात ने अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा—'श्री वशिष्ठ की कविताओं में हमारे युग का सच प्रकट हुआ है।'

श्री सत्यनारायण मिश्र ने कहा 'वशिष्ठ के लिए कविता उनके व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति है।'

अंत में श्री अनंतकुमार पाषाण की अध्यक्षता में कवि सम्मेलन हुआ। जिसमें सर्वश्री किशोरीरमण टंडन, आनंद त्रिपाठी, शिवशंकर वशिष्ठ, ब्रह्मशंकर व्यास, हस्तीमल हस्ती, महेंद्र वर्मा, मोतीलाल मिश्र एवं लोचन सक्सेना आदि ने भाग लिया।

०००

अखिल भारतीय चित्र-प्रदर्शनी

उत्तर भारत की प्रसिद्ध चित्रकार संस्था 'शिल्पी' कानपुर की 'द्वितीय अखिल भारतीय महादेवी वर्मा चित्र-प्रदर्शनी-१९८९' का उद्घाटन एवं पुरस्कार-वितरण श्री शंखो चौधरी अध्यक्ष ललितकला अकादमी ने रवीन्द्र भवन नयी दिल्ली में गत २० मई को किया। प्रदर्शनी में प्रदर्शित पांच श्रेष्ठ कलाकृतियों पर डा. रामेश्वर वर्मा (कानपुर), डा. भारतभूषण (गोरखपुर), ब्रजेशस्वरूप (कानपुर), पंपा नाग (बरेली) एवं रीता (मेरठ) को 'महादेवी वर्मा एवार्ड' प्रदान

कर सम्मानित किया गया। वर्षा अग्रवाल (कानपुर) की कलाकृति को अति प्रशंसनीय पुरस्कार प्रदान किया गया।

इस प्रदर्शनी में प्रदर्शित चित्रों में डा. एस. एन. सक्सेना, डा. मकबूल अंसारी, डा. प्रेमा मिश्रा, डा. अभय, डा. महावीर सिंह, डा. रेखा निगम, कु. रमा वर्मा, कु. दीपा मिश्रा, श्री रजा भाटिया, श्री दिनेश कुमार मिश्र, डा. रेखा कक्कड़, कु. गीता दास व डा. आई.वी. रूबेन के चित्र महादेवी वर्मा की काव्य-पंक्तियों के भावानुकूल अपेक्षाकृत श्रेष्ठ एवं खरे सिद्ध हुए।

—डा. रामेश्वर वर्मा

०००

नेहरूजी के योगदान पर संगोष्ठी

पिछले दिनों बिहार शरीफ़ में नालंदा शोध-संस्थान एवं महाविद्यालय के तत्वावधान में पं. जवाहरलाल नेहरू शताब्दी-वर्ष के उपलक्ष्य में 'भारत के सामाजिक-सांस्कृतिक विकास में नेहरूजी का योगदान' विषय पर एक प्रभावशाली संगोष्ठी आयोजित की गयी, जिसका उद्घाटन डा. जगन्नाथ मिश्र संसद सदस्य एवं अध्यक्ष—बिहार प्रदेश कांग्रेस कमेटी (ई.) ने किया।

प्रारंभ में संगोष्ठी का विषय-प्रवर्तन संस्थान के निदेशक-सहप्रधानाचार्य डा. सरयू प्रसाद ने किया। इस अवसर पर मुख्य अतिथि के रूप में थे बिहार के पर्यटन तथा विधि मंत्री श्री एच. एच. रहमान। संगोष्ठी की अध्यक्षता श्री श्याम सुंदर प्रसाद, सदस्य, बिहार विधानसभा ने की।

अंत में संस्थान के सचिव प्रो. दशई सिंह ने आगत अतिथियों को धन्यवाद ज्ञापित किया। —राकेश रंजन प्रसाद

०००

बाल मजदूरों की समस्या पर गोष्ठी

चाचा नेहरु अखिल भारतीय बालमित्र सभा की बस्ती नगर शाखा की ओर से बालमजदूरों की समस्या विषयक गोष्ठी का आयोजन किया गया। गोष्ठी का विषय-प्रवर्तन करते हुए 'इन्कलाबी सर्वहारा' के संपादक कुलदीपनाथ शुक्ल ने कहा कि 'बाल मजदूरों की समस्या आधुनिक पूंजीवादी समाज की देन है। बच्चों की निःशुल्क अनिवार्य शिक्षा और रोजगार की गारंटी के बिना इस समस्या का समाधान असंभव है।'

गोष्ठी की अध्यक्षता वरिष्ठ हिंदी कवि कथाकार श्री राजेंद्र परदेसी ने की। मुख्य अतिथि बालमित्र सभा के राष्ट्रीय उपाध्यक्ष श्री शाहीन परवेज़ (अलीगढ़) रहे। गोष्ठी में 'दैनिक जागरण' के उप संपादक हरीश पाल, 'दूर्वादल' के सह संपादक अष्टभुजा शुक्ल, जिला सहकारी बैंक के अध्यक्ष शिवपति राय शर्मा, सर्वोदय मंडल के जिला अध्यक्ष घनश्याम प्रजापति, इप्टा के अमित रंजन, ए. पी. मन. डिग्री कालेज-छात्रसंघ के अध्यक्ष गोपेश्वर त्रिपाठी तथा दिनेश दुबे आदि ने भाग लिया।

गोष्ठी का संचालन पत्रकार संजय द्विवेदी ने किया। —संजय द्विवेदी

०००

साहित्यसेवी का सम्मान

विगत दिनों उरई में महाकवि काली कला शोध केंद्र के तत्वावधान में दतिया के वयोवृद्ध साहित्यसेवी श्री हरिमोहनलाल श्रीवास्तव का सारस्वत सम्मान किया गया।

इस अवसर पर आचार्य भगीरथ सिंह 'तकदीर' ने शोध केंद्र की ओर से हरिमोहनलालजी का सम्मान करते हुए कहा कि 'आपकी साहित्य सेवा अनेक अतृप्त आत्माओं के लिए अमृत है। आपने हिंदी की जो निःस्वार्थ भाव से सेवा की है वह अनुकरणीय है।'

इस अवसर पर हरिमोहनलालजी की नव प्रकाशित कृति 'मनन मंजूषा' पर विचार गोष्ठी भी हुई, जिसमें दैनिक 'लोक सारथी' के साहित्य संपादक विनोद गौतम, डा. रेनू चंद्रा, योगेश्वरी 'अलि', राममोहन शर्मा 'मोहन', रमेशचंद्र खरे 'अरुण', कुमार गुप्त, पत्रकार आफरीदी, डा. रमेश चंद्रा एवं किरन नागर ने भाग लिया।

समारोह की अध्यक्षता भगवानदास अग्रवाल एडवोकेट ने की तथा संचालन किया कवि गिरधर खरे ने।

अंत में अतिथियों के प्रति सम्मान व्यक्त करते हुए अरुण नागर ने आभार व्यक्त किया। —राज पप्पन

०००

पंद्रह पत्रकार सम्मानित

पिछले दिनों वस्ती में आयोजित द्वितीय पूर्वांचल पत्रकार सम्मेलन के तत्वावधान में उत्तर प्रदेश के वन शिक्षा एवं संसदीय कार्य राज्यमंत्री श्री जगदंविका पाल ने पंद्रह पत्रकारों को पत्रकारिता में उनकी विशिष्ट सेवाओं के लिए सम्मानित किया।

सम्मेलन में सम्मिलित होने वाले पत्रकारों में सर्वश्री सदाशिव द्विवेदी, डा. वलदेव राज गुप्त, रामपाल सिंह, एन. दास, हरीश पाल, एम. जेड. खां, गिरिजेश वहादुर सिंह राठौर, श्यामलाल चतुर्वेदी, सुरेश वहादुर सिंह कौशिक, सी. के. मिश्र, हरिशंकर उपाध्याय तथा कृष्ण श्रीवास्तव के नाम प्रमुख हैं। राज्यमंत्री श्री जगदंविका पाल ने पत्रकारों को उत्तरीय एवं प्रशस्ति-पत्र देकर सम्मानित किया।

—जयप्रकाश भारतीय

०००

जिला स्तरीय साहित्य सम्मेलन

वांसवाड़ा जिले के परतापपुर कस्वे में दो द्विवसीय जिला स्तरीय साहित्यकार सम्मेलन १०–११ जून को संपन्न हुआ।

साहित्यकार सम्मेलन का दीप प्रज्वलित कर प्रख्यात चित्रकार श्री विद्यासागर उपाध्याय ने उद्घाटन किया।

सम्मेलन में प्रथम सत्र में खुली चर्चा हुई, जिसमें साहित्यकारों ने अपने विचार प्रस्तुत किये। इसी दिन शाम को डा. नवीनचंद्र याज्ञिक ने 'समकालीन साहित्य को बांसवाड़ा का योगदान' विषय पर पत्र वाचन किया व रात्रि में साहित्यकार देवीलाल जानी की अध्यक्षता में काव्य गोष्ठी संपन्न हुई, जिसमें जलज जानी, मनमोहन झा, मोहनदास, अतुल कनक;

नयनेश जानी, अशोक पंड्या, शैलेन्द्र उपाध्याय, हेमंत शुक्ला, ललित लहरी, घनश्याम नूर, दिलीप आचार्य आदि ने काव्य पाठ किया। दूसरे दिन बांसवाड़ा में 'लेखन दशा एवं दिशा' विषय पर श्याम अश्याम ने पत्र वाचन किया व दोपहर में समापन समारोह डा. शंकरलाल त्रिवेदी की अध्यक्षता एवं डा. मदन जानी के मुख्य आतिथ्य में संपन्न हुआ। सम्मेलन के संयोजक श्री रमेश पंड्या ने आभार व्यक्त किया। —जलज जानी

०००

श्रीअरविंद के देहांश की स्थापना

नैनीताल अपने प्राकृतिक सौंदर्य के लिए प्रसिद्ध है, किंतु २९ मई १९८९ को वहां दिव्य सौंदर्य अवतरित हुआ, जब वहां के वन-निवास स्थित श्रीअरविंद आश्रम में महायोगी अरविंद के देहांश की स्थापना की गयी।

इस अवसर पर श्रीमती करुणाजी, रत्नाजी व नलिनजी के गीत व भजन हुए। सी. आर. एस. टी. कालेज से एक जुलूस द्वारा श्री अरविंद के देहांश बुक हिल स्थित उनके निवास पर ले जाये गये, जहां वे २९ मई १९०१ में ठहरे थे। वहां से देहांश श्री अरविंद आश्रम केंद्र पर ले जाये गये। दो दिनों तक श्री अरविंद के महाकाव्य 'सावित्री' का अखंड पाठ चलता रहा। फिर आश्रम की संचालिका सुश्री ताराजी द्वारा देहांश की स्थापना की गयी। इस अवसर पर श्रीअरविंद आश्रम के साधक श्री छोटेनारायण शर्मा, पारू दीदी, डा. नाडकर्णी, श्री आशीष सिन्हा के अतिरिक्त अन्य गण्यमान्य महानुभाव उपस्थित थे। —मणिशंकर आचार्य

०००

अ. भा. कबीर प्राकट्य समारोह

जमशेदपुर में १२ जून को सद्गुरु कबीर प्राकट्य समारोह का आयोजन तुलसी-भवन, विष्टुपुर में किया गया। दामाखेड़ा (म. प्र.) के कबीर पंथ के आचार्य पंथश्री गृंध मुनि नाम साहब मुख्य वक्ता थे। कबीर साहित्य के विद्वान डा. बच्चन पाठक 'सलिल' ने मुख्य अतिथि का आसन ग्रहण किया। डा. सलिल ने कबीर को मानवतावादी, निर्भीक विचारक तथा लोकमंगल का अग्रदूत बताया। आपने कबीर साहब के समाजदर्शन पर प्रकाश डाला।

पंथश्री ने सद्गुरु कबीर के आध्यात्मिक विचारों का विश्लेषण किया। आपने कहा कि स्वानुभूति और साधना के बिना कबीर को नहीं समझा जा सकता।

इस अवसर पर पं. रामेश्वर प्रसाद, आचार्य कबीर मठ, रोसड़ा (बिहार) तथा प्रो. के. प्रसाद, कलकत्ता ने भी संत कबीर को श्रद्धांजलियां दी।

—चन्द्रदेव सिंह 'राकेश'

०००

बाजारू साहित्य पर गोष्ठी

डा. परमात्मानाथ द्विवेदी के आवास पर 'सामाजिक चेतना और बाजारू साहित्य'

विषय पर एक गोष्ठी का आयोजन बस्ती जैसे शहर में एक महत्वपूर्ण साहित्यिक हलचल के रूप में सामने आया।

गोष्ठी का प्रारंभ श्री हरिशंकर मिश्र द्वारा विषय प्रवर्तन से हुआ। उन्होंने बाजारू साहित्य एवं सामाजिक चेतना के परिप्रेक्ष्य में सभ्यता एवं संस्कृति के विभिन्न पहलुओं को रेखांकित किया।

श्री राजेंद्र परदेशी ने 'साहित्य क्यों ?' का प्रश्न उठाते हुए रचनाकारों पर यह आरोप लगाया कि विषय की गैर जानकारी तथा अनुभव की दरिद्रता आज के लेखक की सबसे बड़ी कमजोरी है। साथ ही सस्ती और अच्छी पुस्तकों की कमी को उन्होंने बाजारू साहित्य के प्रचलन का कारण बताया। श्री शिवमूर्ति ने बाजारू साहित्य में संप्रेषणीयता को विकास का कारण बताया और कहा कि स्थिति के अनुसार साहित्य का स्तर बदलता है। गोष्ठी के मुख्य अतिथि कथाकार डा. गिरीशचंद्र श्रीवास्तव ने साहित्यिक सांस्कृतिक चेतना के जरिये समाज को सही दिशा में ले जाने की जिम्मेदारी रचनाकार की बतायी।

गोष्ठी में सर्वश्री कुलदीपनाथ शुक्ल, अष्टभुजा शुक्ल, रघुवंश मणि त्रिपाठी, अमित रंजन, गोपेश्वर त्रिपाठी, डा. मधुरनारायण मिश्र, डा. रामदल पांडेय, दिनेश दूबे, अल्पना द्विवेदी, उदयभान त्रिपाठी, हरीश पाल, प्रेमनारायण पांडेय के साथ अन्य लोगों ने भी भाग लिया। —हितेंद्र

साहित्य परिषद का वार्षिकोत्सव

गत दिनों जमशेदपुर की प्रसिद्ध संस्था 'साहित्य परिषद' ने अपने वार्षिकोत्सव के अवसर पर हिंदी के वरिष्ठ लेखक डा. कुमुद का तथा तेलुगु भाषी हिंदी कवि श्री विनायक राव का साहित्यिक अभिनंदन किया। समारोह की अध्यक्षता डा. बच्चन पाठक 'सलिल' ने की।

समारोह का उद्घाटन डा. मनोहरलाल गोयल ने किया। मुख्य अतिथि डा. रमाशंकर पांडेय ने अभिनंदित साहित्यकारों को शाल, मान-पत्र एवं उपहार प्रदान किया। स्वागत भाषण कमल जालान ने एवं मंगल गान कवयित्री डा. श्रीमती रागिनी ने।

इस अवसर पर एक बहुभाषी कवि सम्मेलन का भी आयोजन हुआ। जिसमें सर्वश्री हरेराम राय 'हंस', रमेश बाजपेयी, निर्मल मिलिंद, कयूम अमजद, मनजीत चक्रवर्ती आदि ने कविता पाठ किया।

—पं. किशोर चटर्जी

○○○

मुशायरा एवं कवि-सम्मेलन

गया नगर में मौलाना अबुल कलाम आजाद शताब्दी के उपलक्ष्य में एक विराट मुशायरा एवं कवि-सम्मेलन हुआ।

डा. आफाक फाकरी, शाहिद रिज़वी, अंजुम बाराबंकवी, सुरेंद्र सुकुमार, दुल्हा सासारामी, नजर एटवी, वजीर बिहारी, अंजना संधीर, श्रीमती नसीम नकहत, गुलाब खंडेलवाल ने अपनी रचनाएं सुनायीं।

—शिवगोपाल शर्मा

□

आ नो भद्राः ऋतवो यन्तु विश्वतः

भवन की पत्रिका 'भारती' से समन्वित

नवनीत

मनुष्य के नवोत्थान का सूचक
जीवन साहित्य और संस्कृति का मासिक

प्रार्थना

स्तुता मया वरदा वेदमाता प्रचोदयन्ता पावमानी द्विजानाम्
आयुः प्राणं प्रजां पशुम् कीर्ति द्रविणं ब्रह्मवर्चसम्
मह्य दत्त्वा व्रजत ब्रह्मलोकम् । (अथर्व १९.७१.७)

वन्दना हे जगविधाता, वन्दना हे वेद माता ।
वन्दना हे मां सरस्वति, वन्दना वरदायिनी मां ।
तू ही है ब्रह्मा की वाणी, प्राण पाते तुझसे प्राणी ।
तुझसे ही बनते हैं ज्ञानी, रिद्धि-सिद्धि प्रदायिनी मां ।
वेद से ही विश्व वैभव, वेद से ही लोक में यश ।
वेद से ही ब्रह्म वर्चस, भवति भुवति प्रदायिनी मां ।
वन्दना हे जग विधाता, वन्दना हे वेद माता ।

[भावानुवाद : सत्यकाम विद्यालंकार]

विश्व का प्रथम विमान क्या भारत में बना

□ रन्दी सत्यनारायण राव

आप, सब वायुयान के महत्व से अपरिचित नहीं। आधुनिक काल में, वायुयान की बनावट से लेकर इसे उड़ाने की शिक्षा तक इसके निर्माता देश ही अन्य को भारी कीमत ले, मुहैया करते आ रहे हैं। वायुयान के निर्माण के संबंध में, आप यही मानते हैं कि इसके निर्माता, आविष्कारक अमरीकी 'राइट-बंधु' थे, जिन्होंने सन १९०३ ईस्वी के १७ दिसंबर के दिन अपने प्रथम विमान की उड़ान सफलीभूत की थी। इसके पूर्व उन्होंने तथा कई अन्य लोगों के 'ग्लाइडर' को उड़ाने तक ही अपने को सीमित रखा था। ऐसे ही एक परीक्षण उड़ान के दौरान सन १८९६ ईस्वी के अगस्त मास के किसी दिन एक जर्मन युवक लीलस्टल की 'ग्लाइडर' दुर्घटना में मृत्यु हो गयी थी। इसी घटना के पूर्व वर्ष अर्थात १८९५ ईस्वी को भारत में एक ऐसी घटना घटित हुई, जिसकी खबर न भारतवासियों को हुई और न ही अन्य लोगों को। यह वही समय था, जब राईट बंधु जीविकोपार्जन हेतु 'साइकल-दुकान' चला रहे थे। बहरहाल जो हो, मैं सन १८९५ ईस्वी की बात कर रहा था, इसी वर्ष बंबई के रमणीक समुद्र-तट चौपाटी की सैर-जमीं से एक भारतीय शास्त्र-वेत्ता पंडित शिवराम बापू तारपुडे द्वारा निर्मित विश्व के प्रथम वायुयान ने अपनी पहली उड़ान भरी। इसने आकाश में काफी ऊंची उड़ान भरी थी। इस परीक्षण उड़ान को देखने वालों में तत्कालीन बड़ौदा के महाराजा, महादेव गोविंद रानडे–सदृश लोग भी थे। जिन्होंने पंडितजी के प्रयास एवं अविष्कार की न केवल प्रशंसा की, बल्कि विभिन्न पुरस्कारों से उन्हें सम्मानित भी किया।

पंडित शिवरामजी से जब यह प्रश्न पूछा गया कि 'आपको इस महान एवं आश्चर्यजनक वस्तु को आविष्कृत करने की प्रेरणा कहां से और कैसे प्राप्त हुई?' इसके उत्तर में पंडित शिवरामजी ने बताया, 'मुझे, पुराणों में वर्णित 'पुष्पक' विमानादि से प्रेरणा प्राप्त हुई।' इसको बनाने की विधि मुझे महर्षि भरद्वाज द्वारा रचित ग्रंथ 'वैमानिक-शास्त्र' से प्राप्त हुई थी। जिसके आधार पर मैंने परीक्षण किये विमान का निर्माण किया था। भारत के दुर्भाग्य से, अर्थाभाव से विवश हो

पंडितजी को परीक्षण किये गये विमान को एक अनाम अंग्रेज कंपनी को बेचना पड़ा।

आप कदाचित यह सोच रहे होंगे कि मैं येन-केन-प्रकारेण अपने भारत को विकसित एवं समृद्ध पश्चिमी देशों के आगे ऊंचा मानने की स्वाभाविक कमजोरी से ग्रस्त हूं और इसी कारणवश उन्हें अपने देश के 'वैमानिक तकनीक' का तस्कर मान रहा हूं। आप विश्वास करें या न करें, किंतु तथ्य सही है कि पूर्व में भारत से, लुटेरों, आक्रमणकारियों, तस्करों एवं शासकों के मार्फत देश की प्राचीन सांस्कृतिक धरोहर तथा शिलालेख, मूर्ति, सिक्के, कलश, पात्र, ताड़-पत्र, आदि तथा पौराणिक ग्रंथ, अस्त्र-शस्त्र, हीरे-जवाहरात ऐतिहासिक दस्तावेज, नक्शे आदि बाहर ले जाये जा चुके थे। पुराणों में वर्णित 'पुष्पक विमान' आदि का वर्णन कल्पना नहीं, अपितु वास्तविकता है।

आज विश्व में कई प्रकार के विमान मौजूद हैं। आकार-प्रकार भी अलग-अलग है। ठीक इसी प्रकार महर्षि भरद्वाज रचित 'वैमानिक-शास्त्र' नामक ग्रंथ में भी आठ अध्याय थे। इन्हें तीन अलग-अलग आकृतियों में ढाला गया था। ये तीन हिस्सों को क्रमशः 'शकुन, सुंदर एवं रूक्म' के नाम से पुकारा गया था। इसमें एक ऐसे विमान को बनाये जाने की पद्धति का भी उल्लेख है, जिससे विमान पर अग्नि का प्रभाव न हो।

आश्चर्य की बात तो यह कि उपरोक्त ग्रंथ में १६ प्रकार के विमानों को बनाने की पद्धति भी दर्शायी गयी थी :

१६ प्रकार के विमानों के नाम निम्नलिखित हैं : १—भारती, २—विष्णु, ३—लक्ष्मी, ४—गौरी, ५—महादेव, ६—गंधर्व, ७—देव, ८—सिद्ध, ९—गरुड़, १०—साध्य, ११—राक्षस, १२—यक्ष, १३—किंपुरुष, १४—१५—किन्नर एवं १६—दातृ।

उपरोक्त तथ्यों से क्या यह प्रमाणित नहीं होता कि हमारे धार्मिक ग्रंथों में वर्णित 'वैमानिक-प्रसंग' वास्तविक एवं सत्य हैं? हमारे वैज्ञानिक एवं शास्त्रज्ञ भी इस वास्तविकता को ज्यों ही स्वीकारेंगे, त्यों ही हमारा देश भी नित्य नये क्षेत्रों में अपनी नवीनतम तकनीकी के साथ पुष्पित-पल्लवित हो सकेगा, साथ ही इसके फलस्वरूप विश्व को नया नेतृत्व प्रदान कर सकेगा।

—एल-३/९, तिरना रोड,
साकची, जमशेदपुर—८३१००१

□

'जीवन भर मेरा साबका भौतिक पदार्थों से पड़ा है। मुझमें मनुष्यों से समुचित व्यवहार करने और सरकारी कामों को निभाने की न स्वाभाविक क्षमता है न ही अनुभव। अगर बढ़ती उम्र मेरी शक्ति को सोखने में न लगी होती तो भी सिर्फ ये कारण ही मुझे इस उच्च पद के लिए अनुपयुक्त ठहराने के लिए काफी हैं।' आइन्स्टाइन ने इसी विनम्रता के साथ अपने को दुनियावी मोहपाश से मुक्त रखा।

—शुकदेवप्रसाद

□

वैभवशाली नगरी

भगवान बुद्ध और वज्जिसंघ की वैशाली

□ डा. श्रीरंजन सूरिदेव

लिच्छवियों की विश्वविख्यात राजधानी वैशाली नगरी बुद्धकाल (ईसा-पूर्व छठी शती) के गणतंत्रात्मक वज्जि-संघ का शक्तिशाली शासन-केंद्र थी। इसका सातिशय भव्य वर्णन खृष्टपूर्व पंचम-षष्ठ शतक के बौद्ध और जैन इतिहासों में प्रचुरता से उपलब्ध है। विशेषकर, प्रसिद्ध जैनागमों, जैसे 'सूत्रकृतांग', 'भगवतीसूत्र', 'उत्तराध्ययनसूत्र', 'जैनकल्पसूत्र' आदि में वैशाली नगरी के सांस्कृतिक उत्कर्ष की चर्चा बड़े आदर और आग्रह के साथ हुई है। वैशाली के साथ भगवान बुद्ध का संबंध किसी और की अपेक्षा न्यून नहीं था। भगवान बुद्ध ने जब अपना धर्मचक्र-प्रवर्त्तन प्रारंभ किया था, तब वह वैशाली के सांस्कृतिक उत्कर्ष को नही भूले थे और इसीलिए उन्होंने धर्मविहार के क्रम में, उस नगरी में स्वयं पधार कर उसे अपनी पदधूलि से पवित्र किया था।

भगवान बुद्ध को शक्तिशाली लिच्छवियों यावज्जियों से अतिशय सहानुभूति थी और वैभव संपन्न वैशाली के प्रति उनका आंतरिक प्रेम था। इसीलिए, उन्होंने अकाल और महामारी से वैशाली की रक्षा की थी तथा आम्रपाली जैसी विख्यात नगरवधू के आम्रकुंज में अपना निवास-स्थान बनाया था। वैशाली के लिच्छवियों के चरित्र-माधुर्य एवं देवोपम परिधान से भगवान् बुद्ध मुग्ध थे। उनके प्रति उनकी सहज सहृदयता बनी रहती थी। वह उनकी निरंतर कल्याण-कामना करते रहते थे तथा उनके आचार-विचार एवं परिधान की भी भूरि-भूरि प्रशंसा करते अघाते नहीं थे और उसी क्रम में तुषित-लोक के त्रायस्त्रिंश देवों से उनकी तुलना करते थे।

प्रसिद्ध बौद्धागम 'संयुक्तनिकाय' में प्राप्य उल्लेख के अनुसार वैशाली के लिच्छवियों की समुन्नति का वर्णन करते हुए भगवान बुद्ध ने अपने शिष्यों से कहा था, 'भिक्षुओ! इन लिच्छवियों के जीवन को देखो। ये काष्ठखंड की चौकी पर काष्ठखंड के उपधान बनाकर सोते हैं। ये बड़े ही कर्मठ, परिश्रमी और निष्ठावान् हैं तथा धनुर्विद्या में बड़े ही दक्ष हैं। मगधराज अजातशत्रु इनके साथ शत्रुतापूर्ण आचरण करके भी इनके अंदर कोई दोष देख नहीं पाते।' इसी क्रम में भगवान बुद्ध ने लिच्छवियों के बारे में यह भी बताया था कि 'यदि ये लिच्छवि भविष्य में सुकुमार होकर श्रम करना छोड़ देंगे, रुई के बने सुंदर मुलायम गद्दे पर सोने के अभ्यासी

हो जायेंगे और यदि दिन चढ़ने पर निद्रा का त्याग करेंगे, तो संभवत: इनके आलस्य का लाभ उठाकर मगधराज वैदेही पुत्र अजातशत्रु को इनके विरुद्ध आक्रमण करने का अवसर प्राप्त हो जायगा।'

लिच्छवियों की संघबद्धता और उनके अनुदिन उत्कर्ष के विषय में भगवान बुद्ध ने मगध के महामात्य वर्षकार (पालि: वस्सकार) के पूछने पर अपने पट्टशिष्य आनंद को संबोधित करते हुए कहा था: 'आनंद, सुना है, वज्जिगण के सदस्य साधारणतया अपने मंत्रणागृह में प्राय: सामूहिक रूप से सम्मिलित होते हैं?' आनंद ने उत्तर में कहा: 'हां, प्रभो! इस प्रकार मैंने भी सुना है।' तथागत ने फिर कहा: 'आनंद, तुम याद रखो, जब तक वज्जिगण के सदस्य इस प्रकार समग्र रूप में अपनी मंत्रणा-सभा में नियमित रूप से सम्मिलित होकर अपने वज्जिसंघ की समुन्नति के विषय में विचार-विमर्श करते रहेंगे, तब तक उनकी उन्नति होती जायेगी, अवनति कदापि न होगी।'

मगधराज अजातशत्रु के महामंत्री वर्षकार के प्रश्न के उत्तर में वज्जिसंघ के लिच्छवियों के जिन बहुविदित सात विशिष्ट गुणों की चर्चा भगवान् बुद्ध ने की थी, उनमें उनकी उक्त संघबद्धता का गुण सर्वोपरि माना जाता था। इसीलिए, वैशालीवासियों के निष्पाप और निष्कलंक चरित्र का निर्देश करते हुए तथागत ने मगधराज अजातशत्रु को लिच्छवियों की स्वाधीनता में हस्तक्षेप करने से मना किया था। इससे स्पष्ट है कि भगवान बुद्ध को शक्तिशाली वज्जियों से अत्यंत सहानुभूति थी और वैभवसंपन्न वैशाली के प्रति उनका आंतरिक प्रेम था। बौद्धागम से यह सूचना मिलती है कि भगवान बुद्ध अपने परिनिर्वाण के समय को उपस्थित जानकर इस नगरी के अंतिम दर्शनार्थ यहां उपस्थित हुए थे। उस अंतिम समय में वज्जिसंघ के लोगों ने बार-बार नतमस्तक होकर भगवान बुद्ध का आशीर्वाद ग्रहण किया था और उनकी आंतरिक प्रीति प्राप्त कर वज्जिसंघ के लिच्छविगण के सदस्य धन्य हुए थे।

'महापरिनिब्बानसुत्तन्त' से ज्ञात होता है कि जिस समय भगवान् बुद्ध वैशाली के मार्गों पर हस्तिराज के समान मंद गति से गमन कर रहे थे, उस समय वह वैशाली
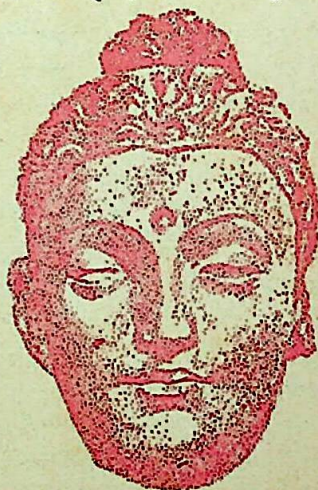
का बार-बार सिंहावलोकन करते जा रहे थे। भगवान बुद्ध के परिनिर्वाण के पश्चात वैशाली की ओर भारत के बौद्ध-संप्रदाय का ध्यान विशेष रूप से आकृष्ट हुआ था। वैशाली की ओर बौद्धों का ध्यानाकर्षण इसलिए नहीं हुआ था कि वैशालीवासियों का नैतिक चरित्र सबसे ऊंचा था अथवा वहां के बौद्धसंघ की शक्ति बहुत प्रबल थी, बल्कि इसलिए कि वहां के कतिपय बौद्धभिक्षु बौद्धधर्म की अभिनव व्याख्या करने में लगे थे और धर्म की आड़ में दुष्कर तपश्चरण आदि से विमुख हो वे भोग-विलास में निमग्न हो रहे थे। उदाहरणस्वरूप, वे बौद्ध भिक्षु मध्याह्न-भोजन के बाद पुनः आहार-ग्रहण करते थे और सुवर्ण-रौप्य उपहार के रूप में स्वीकार करते थे तथा एक ही ग्राम में कई कुटियां बना लेते थे।

इस प्रकार, भोगसुख में निमग्न भिक्षुओं की बौद्धधर्म संबंधी नयी व्याख्याओं से उत्पन्न विवाद की शांति के लिए वैशाली में संपूर्ण भारत का बौद्धसंघ सम्मिलित हुआ था। इस सम्मेलन को बौद्धों की 'द्वितीय महासंगीति' के रूप में स्मरण किया जाता है। वैशाली के बालुकाराम विहार में यह संगीति बैठी थी, जिसमें देश के सात सौ श्रेष्ठ बौद्धभिक्षु सम्मिलित हुए थे। उन सभी भिक्षुओं के लिए आसन, भोजन तथा अन्य बातों की व्यवस्था वैशाली के ही निवासी 'अजित' नामक युवक भिक्षु ने की थी। इस महासंगीति की अध्यक्षता करने का गौरव भी वैशाली-निवासी 'सर्वकामी' नामक वयोवृद्ध भिक्षु को ही प्राप्त हुआ था, जिसकी उम्र उस समय एक सौ बीस वर्ष की थी।

'महावग्ग' से ज्ञात होता है कि एक समय भगवान बुद्ध राजगृह से वैशाली गये, तो वहां के गौतम-चैत्य में उन्होंने वास किया था। उस समय शीतकाल था और 'अष्टक-पर्व' के अवसर पर वहां हिमपात हो रहा था। वैसी घड़ी में कितना अल्प वस्त्र पहन करके शीत-निवारण किया जा सकता है, इसके लिए भगवान बुद्ध ने स्वयं अपने पर ही परीक्षा करके भिक्षुओं को तदनुरूप परिधान के उपयोग करने का उपदेश दिया था।

'चुल्लवग्ग' में यह वर्णित है कि एक बार भगवान तथागत जब वैशाली की कूटागारशाला में वास कर रहे थे, तब वहां के गृहस्थों से अधिक मात्रा में प्राप्त मिष्टान्न के भोजन करने से सभी भिक्षु रोगग्रस्त हो गये थे। उस समय बुद्ध को प्रसिद्ध चिकित्सक 'जीवक' को राजगृह से वैशाली बुलाना पड़ा और 'जीवक' द्वारा चिकित्सा करने पर भिक्षुओं ने आरोग्य-लाभ किया।

एक बार भगवान बुद्ध ने वैशाली में पहले की चंक्रमण-अवधियों की अपेक्षा अधिक अवधि तक वास किया था। उस अवधि में उन्होंने आवास-गृह के निर्माण के संबंध में भिक्षुओं को उपदेश दिया था। पुनः जब कपिलवस्तु में अपने पुत्र राहुल

को दीक्षा देकर वह (तथागत) वैशाली आये थे, तव वहां की कूटागारशाला में ठहरे थे। उसी समय भगवान की धात्री महाप्रजावती गौतमी कपिलवस्तु से रमणी-समूह के साथ, गृहस्थाश्रम त्याग कर, वैशाली आयी और उसने बुद्ध से भिक्षुणी का अधिकार मांगा। भगवान् के प्रिय शिष्य आनंद की प्रार्थना पर बुद्ध ने स्त्रियों को बौद्धधर्मानुसार भिक्षुणी का जीवन बिताने की अनुमति प्रदान की थी।

बौद्धग्रंथों से इसका प्रमाण मिलता है कि वज्जिसंघ की नारियां भी वहां के पुरुषों की तरह भगवान बुद्ध में तथा उनके धर्म में पूर्ण अनुरक्त थीं। इन नारियों में 'सिहा' का नाम उल्लेख्य है, जो वज्जिसंघ के सिंह सेनापति की भगिनी-कन्या (नातिन) थी। गौतम बुद्ध जब वैशाली में थे, तभी 'सिहा' का जन्म हुआ था। उसके नाना सिंह-सेनापति के नामानुसार उसका नाम 'सिंहा' रखा गया था। कुछ बड़ी होने पर उसने, अपने नाना के बौद्धधर्म स्वीकार करने के बाद, एक दिन बुद्धदेव का उपदेश श्रवण किया, जिससे बौद्धधर्म में उसकी श्रद्धा जगी और दीक्षा के लिए उसने अपने माता-पिता से यथाविहित अनुमति भी प्राप्त कर ली।

आगे की कथा का मर्मांश है कि किशोर-वय होने के कारण 'सिंहा' की वासना मरी नहीं थी, इसलिए बराबर साधनारत रहने पर भी उसका चित्त संयत नहीं हो सका। अंत में, उसने सोचा कि पहले भोग-विलास से ही तृप्ति प्राप्त कर ली जाय, तब साधना

का मार्ग अपनाया जाय। किंतु, भोग की स्थिति में भी उसकी वासना घी से आग की भांति तृप्त होने की अपेक्षा धधकती ही चली गयी। अंततोगत्वा, उसने एक दिन अपने विलासी जीवन से ऊबकर आत्महत्या के निमित्त गले में फंसरी लगा ली। किंतु, फंसरी लगाते ही उसका चित्त एकाग्र होकर ध्यानमग्न हो गया। क्रमशः अभ्यास से उसका ध्यानमार्ग पूर्ण प्रशस्त हो गया और वह भिक्षुणी बनकर अर्हत पद पर प्रतिष्ठित हो गयी।

वैशाली की ही, किसी उच्च वंश में प्रसूत, 'वासिट्ठी' नाम की नारी भी भगवान् बुद्ध के ही उपदेश से साधनारत

होकर अर्हतपद पर प्रतिष्ठित हुई थी। कथा है कि 'वासिट्ठी' का विवाह वैशाली के ही समान पद-गौरवप्राप्त किसी युवक से हुआ और यथासमय उसे पुत्रलाभ भी हुआ। किंतु, उस इकलौते पुत्र की असमय मृत्यु हो गयी। पुत्र शोक में पागल होकर वह विक्षिप्तावस्था में यत्र-तत्र भटकने लगी। इसी क्रम में एक दिन उसे मिथिला में भगवान बुद्ध के दर्शन हो गये। बुद्ध के सौम्य तपोदीप्त मुखमंडल को देखते ही वासिट्ठी चित्रवत् खड़ी हो गयी। बुद्ध के दृष्टि-निक्षेप से उसका पागलपन दूर हो गया। स्वस्थचित्त देखकर बुद्ध ने उसे उपदेश दिया, जिससे प्रभावित होकर वह साधनोन्मुख हो गयी।

उक्त दो भिक्षुणियों के अतिरिक्त वत्सा, वेश्यापुत्री विमला, सच्चा, लोला, अववादका, पाटाचारा तथा प्रसिद्ध राजनर्तकी आम्रपाली वैशाली की ही महान बेटियां थीं, जिन्होंने बौद्धधर्म के जागरण में महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया। आम्रपाली की काम से धर्म या शृंगार से शांत की ओर प्रस्थान की कहानी तो सर्वविदित ही है।

लिच्छवि या वज्जिसंघ के सदस्य चूंकि गणतंत्र के वातावरण में पले हुए थे, इसलिए प्रत्येक विषय में निरंतर आलोचना-प्रत्यालोचना तथा निरीक्षण-परीक्षण की गणतंत्रात्मक प्रवृत्ति उनके स्वभाव में ही निहित थी। तर्क-वितर्क द्वारा जब तक कोई बात प्रमाणित नहीं हो जाती थी, उसे वे स्वीकार नहीं करते थे। बौद्धधर्म से विद्रोह करनेवाले भी अधिकतर भिक्षु वज्जिसंघ के ही थे। बौद्धधर्म में परिवर्तन तथा उसकी विभिन्न शाखाओं की स्थापना करने वाले वज्जिसंघ के ही भिक्षु थे। फलतः, वैशाली के बौद्धसंघ में 'वज्जिपुत्तक' नामक एक स्वतंत्र संप्रदाय ही बन गया था, जिसने 'पुद्गलवाद' के संबंध में सर्वथा नवीन मत का प्रचार किया।

'महावग्ग' में एक स्थान पर उल्लेख मिलता है कि एक बार संघ की बैठक बुलाई गयी, तो एक भिक्षु ने अपनी अस्वस्थता के कारण बैठक में उपस्थित होने से असमर्थता प्रकट की। इस पर बुद्ध ने कहा: 'पीड़ित भिक्षु अन्य भिक्षु द्वारा अपना अभिमत व्यक्त करें।' इसी प्रकार, जब कभी सभा में गणपूर्ति ('कोरम') का अभाव, होता था तब सभा या बैठक की कार्यवाही स्थगित कर दी जाती थी। 'विनयपिटक' में सभा-संचालन के नियम विशदतापूर्वक वर्णित हैं।

'महावत्थु' के अनुसार, वैशालीवासियों की भगवान बुद्ध के प्रति अपार श्रद्धा थी। इसीलिए, भगवान बुद्ध की अगवानी करने के निमित्त चौरासी हजार से दुगुनी, अर्थात् एक लाख अड़सठ हजार की संख्या में लोग वैशाली से गंगातट पर आये थे। 'विनयपिटक' के अनुसार, बुद्धकालीन वैशाली तीन भागों में बंटी थी: प्रथम भाग में सात हजार, द्वितीय भाग में चौदह हजार और तृतीय भाग में इक्कीस हजार

प्रासाद थे। प्रसिद्ध कलाकार पद्मश्री उपेन्द्र महारथी (अव स्वर्गीय) ने 'वैशाली के लिच्छवि' नामक अपनी पुस्तक में लिखा है कि प्रत्येक प्रासाद यदि औसतन परिवार पांच व्यक्तियों का मान लें, तो वैशालीवासियों की संख्या दो लाख दस हजार होती है।

कुल मिलाकर, बुद्धकाल में वज्जिसंघ की वैशाली नगरी अत्यंत समृद्धिशालिनी थी और वहां के सभी नागरिक प्रकृत्या भद्र थे। इस संबंध में पालि-संस्कृत-साहित्य में विशद विवरण उपलब्ध है। 'महावग्ग' से ज्ञात होता है कि वैशाली में बड़ी-बड़ी अट्टालिकाएं थीं, अत्युच्च शिखर, विशिष्ट भवन, आराम, चैत्य तथा दीर्घातिदीर्घ पद्मपुष्करिणियां भी वहां थीं। वैशाली की विपुल समृद्धि का वर्णन 'ललितविस्तर' में विस्तार से मिलता है। उसकी समृद्धि के संबंध में तुषितलोक (स्वर्गलोक) के देवता विचार करते थे और कहते थे कि वैशाली जैसी नगरी में ही तुषितदेवपुत्र बोधिसत्त्व को जन्म ग्रहण करना चाहिये; क्योंकि उस नयनाभिराम वैशाली में नाना जाति के जन समुदाय वास कर रहे थे। और वैशाली की विदेह-भूमि को नेपाल की तराई (कपिलवस्तु) तक विस्तृत मानी जाय, तो स्पष्ट है कि तुषितदेवपुत्र बोधिसत्त्व ने देवताओं की उक्त आकांक्षा अंशतः पूरी की थी। बाद में बोधिसत्त्व जब मानववादी बुद्ध हो गये, तब उन्होंने वैशाली को अपने एक प्रमुख धर्मकेंद्र के रूप में प्रतिष्ठा दी।

'ललितविस्तर' के अनुसार, उस देवपुरी के समान वैशाली नगरी में तोरणों, गवाक्षों तथा गुंबदों से अलंकृत एवं छज्जेदार अनेक गगनचुंबी प्रासाद विराजित थे। वहां वाटिकाएं तथा अमराइयां सुरम्य और सुपुष्पित थीं। 'ललितविस्तर' की, मूल वर्णन में लिखित कतिपय पंक्तियां इस प्रकार हैं: 'इयं वैशाली महानगरी ऋद्धाचं स्फीता च क्षेमा च सुभिक्षा च रमणीया चाकीर्ण बहुजन मनुष्या च वितर्दिनिर्यूह तोरण गवाक्ष हर्म्य कूटागार प्रासाद तल समलंकृता च पुष्पवाटिका वनराजि संकुसुमिता च अमरभवनपुर प्राकाश्या। सा प्रतिरूपास्य बोधिसत्त्वस्य गर्भप्रतिसंस्थानायेति।'

—पी. एन. सिन्हा कॉलोनी, भिखना पहाड़ी, पटना—८००००६, बिहार

चित्रकार अक्षयकुमार झा

□ गीताश्री

प्रतिभा जन्मजात होती है लेकिन जब कोई प्रतिभाशाली कलाकार अपनी लगन, कठिन परिश्रम और समर्पित भावना से कला साधना करता है तो उसकी कला में एक ऐसी सम्मोहन शक्ति का समावेश हो जाता है जो किसी भी दर्शक को अपने जादुई प्रभाव में बांध लेने की क्षमता रखती है।

लेकिन किसी कलाकार को इस मुकाम तक पहुंचने के लिए जीवन में जो त्याग और संघर्ष करना पड़ता है। वह सबके वश की बात नही होती। लेकिन जिन लोगों में संघर्ष करने की शक्ति और कलात्मक ऊर्जा होती है वे एक न एक दिन अवश्य अपने गंतव्य स्थान तक पहुंचने में कामयाब हो जाते हैं।

बंबई के कला जगत में 'अकुझा' के नाम से मशहूर कलाकार अक्षय कुमार झा प्रतिभा, समर्पित भावना, और संघर्ष के अनुकरणीय उदाहरण हैं। उनके चित्रकार बनने का संघर्ष उनके कला प्रेम को उजागर करता है। साथ ही साथ जीवन संग्राम में एक योद्धा का तेवर अपनाने वाले व्यक्तित्व का भी परिचय मिलता है।

चित्रकार 'अकुझा' में चित्रकला के प्रति जो जन्मजात अनुराग था, उसी कला प्रेम ने उन्हें अपने घर से भाग जाने के लिए प्रेरित किया। अपने जन्म स्थान भागलपुर में इंटरमीडिएट की परीक्षा पास करने के बाद ही वे अपनी कला पिपासा को संतुष्ट करने के लिए बंबई भाग आये। उन दिनों बंबई का जे. जे. स्कूल आफ आर्ट्स बहुत प्रसिद्ध था। इसीलिए कलाकार 'अकुझा' ने अपनी कला-शिक्षा के लिए बंबई आना उचित समझा। लेकिन

यहां आकर उन्हें अपने सपने टूटते नजर आये। क्योंकि यहां जे. जे. स्कूल आफ आर्ट्स में उन्हें प्रवेश नहीं मिला। लेकिन चित्रकार 'अकुझा' ने हिम्मत नहीं हारी और उन्होंने बड़ौदा स्कूल आफ आर्ट्स में जाकर अपनी कला की विधिवत् शिक्षा पूरी करने का निर्णय किया।

चित्रकार 'अकुझा' के लिए जे. जे. स्कूल आफ आर्ट्स में प्रवेश न मिलना एक वरदान सावित हुआ, क्योंकि उन दिनों बड़ौदा स्कूल आफ आर्ट्स में देश के प्रतिष्ठित चित्रकार वेंद्रे कला शिक्षक थे। कला मनीषी वेंद्रे के समय में ही बड़ौदा स्कूल आफ आर्ट्स से वहुत से ऐसे विद्यार्थी निकले जिन्हें देश में ही नहीं विदेशों में भी अपनी कलाकृतियों की वजह से सम्मानित और पुरस्कृत किया गया।

कलाकार वेंद्रे ने कभी भी किसी एक शैली में बंधकर कला सृजन नहीं किया यही गुण उनके शिष्य अकुझा ने भी अपनाया। अकुझा की विशेषता है कि उन्होंने कला की प्राय: सभी प्रचलित शैलियों में सिद्धहस्तता हासिल की है। उनके अनुसार एक अच्छे कलाकर के लिए यह आवश्यक है कि कलाकार का तकनीकी पक्ष सबल हो, अगर ऐसा नही होता तो कलाकार अपनी कल्पनाओं और भावनाओं को कभी भी सफलतापूर्वक अभिव्यक्त नहीं कर सकता।

कलाकार 'अकुझा' पोर्ट्रेट चित्रण जितनी कुशलता से कर लेते है उसी कुशलता से वे मिनेचर पेंटिंग भी करते हैं। पोर्ट्रेट

अकुझा चित्रांकन करते हुए

मिनेचर पेंटिंग, डेकोरेटिव पेंटिंग, इलस्ट्रेशन, कैलेंडर डिजाइन उनके सभी कामों में एक सिद्धहस्त और कुशल कलाकार की छाप देखने को मिलती है।

हिंदी की प्राय: सभी प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं में उनके वनाये रेखा चित्र तथा कलाकृतियां समय-समय पर प्रकाशित होती रही हैं। उनके वनाये चित्रों और रेखा चित्रों में निर्दोष रेखाओं और रंगों में कोमलता और लालित्य होता है जो दर्शक को अनायास
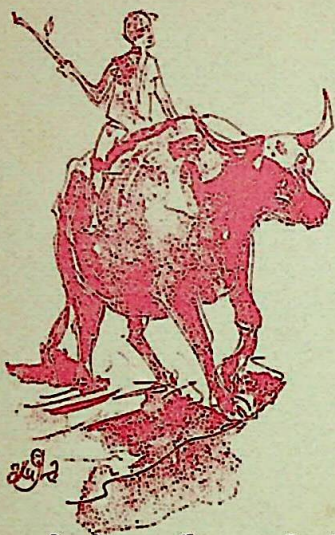
ही अपनी ओर आकर्षित कर लेता है। उन्होंने देश के कुछ प्रतिष्ठित कैलेंडर कंपनियों के टेवल कैलेंडरों के लिए जलरंगों से दृश्यचित्र भी वनाये हैं, जिसे कला-रसिकों ने काफी सराहा है। वे लोकप्रिय कला में विश्वास रखने वाले चित्रकार हैं। उनका कहना है कि अगर किसी कलाकार का चित्र उसकी वौद्धिकता की वजह से पहेली वन जाता है और आम आदमी उसके सौंदर्य को ग्रहण नहीं कर सकता तो ऐसा चित्र वनाने से क्या फायदा! अखिरकार कलाकार चित्र किसके लिएं वनाता है? अगर अपने लिए वनाता है तो स्वयं वनाये और स्वयं दिन-रात देखता रहे। फिर वह लोगों से शिकायत क्यों करता है कि लोग उसकी कला की कद्र नहीं करते। अगर कलाकार को जनता को साथ लेकर चलना है तो उसे और जनता के वीच एक ऐसा सेतु वनाना ही पड़ेगा, जहां सर्जक और दर्शक के वीच सही ढंग से संवाद की संभावना हो। अगर कलाकार ऐसा नही करता तो उस कलाकार की कला को आम आदमी निश्चित रूप से नकार देगा। आज की भारतीय आधुनिक कला और जनता के बीच यही युद्ध चल रहा है, जो भविष्य के लिए भारतीय कला के लिए शुभ नहीं है। कलाकारों को अपने झूठे अहं व छद्म-बौद्धिकता को त्यागना ही श्रेयस्कर होगा। किसी भी देश की कला उस देश के लोगों से कटकर जीवित नहीं रह सकती। अमरीका, फ्रांस की वात छोड़िये, वहां की आर्थिक, सांस्कृतिक परिस्थितियां भिन्न हैं। वहां के कला-फार्मूले यहां भारत में टकसाली सिक्के नहीं वन सकते। कुछ लोग प्रचार और पैसे के जोर पर खेल तमाशे भले ही कर लें, लेकिन कालांतर में ये सव पानी के वुलवुले सावित होंगे। पेंटिंग में चेहरे की वापसी नाम के आंदोलन ने अमूर्त कला के किले का ढहाना शुरू कर दिया है। यह तो महज एक शुरूआत है।

कलाकार 'अकुझा' अपने कलाधर्म में दिग्भ्रमित नहीं हैं, यही उनकी सवसे वड़ी पूंजी है, जो उन्हें उनके गंतव्य स्थान तक पहुंचाने में सहायक होगी। वाकी सव कुछ तो समय की कसौटी में कसा जाने के वाद ही पता चलता है। जो कूड़ा-कर्कट होता है वह कालचक्र की लपेट में आकर

नष्ट हो जाता है। जो शुभ, सुंदर और शाश्वत् होता है वह बचा रहता है। अजंता, एलोरा इसके साक्षी हैं। मथुरा की भगवान बुद्ध की मूर्ति, दक्षिण भारत का नटराज, कांगड़ा की मिनेचर पेंटिग के जादू से कौन इंकार कर सकता है ?

भागलपुर से बंबई तथा बड़ौदा से दिल्ली और वहां से फिर बंबई इस तरह कलाकार 'अंकुझा' अपनी-कला पिपासा की संतुष्टि के लिए इधर-उधर बंजारों की तरह करीब-करीब दस साल तक भटकते रहे। इस भटकन ने उन्हें जीवन को नजदीक देखने से का अवसर प्रदान किया, रोजी-रोटी की समस्या को सुलझाने के लिए उन्हें कला की भिन्न शैलियों में काम करना पड़ा, इसीलिए आज वे किसी भी कला-शैली, किसी भी माध्यम में संपूर्ण दक्षता के साथ कलासृजन में अपने आप को समर्थ पाते हैं। सिनेमा बैनर से लेकर पत्र-पत्रिकाओं के इलस्ट्रेशन बनाने तक—सभी प्रकार के काम वे कर चुके हैं। दिल्ली से प्रकाशित होने वाली मुक्ता, सरिता, कैरवान, बंबई से प्रकाशित होने वाली पत्रिकाएं धर्मयुग, सारिका, फेमिना आदि पत्रिकाओं में उनके बनाये चित्र सालों छपते रहे !

इसी बीच कैलेंडरों के डिजाइन बनाने का मौका मिला और इस क्षेत्र में उन्होंने बड़ी मेहनत से अपना एक विशिष्ट स्थान बनाया। आज उनकी गणना महत्वपूर्ण कैलेंडर आर्टिस्टों में की जाती है !

१९७५-७६ में लेटरहेड की कलात्मक डिजाइनिंग के लिए उन्हें नेशनल पुरस्कार मिला। जयंत पारिख, शांति दवे, ज्योति भट्ट, मनु पारिख जैसे चर्चित और स्थापित कलाकार उनके सहपाठी थे। प्रतिष्ठित कलाकार नारायण श्रीधर बेंद्रे को वे अपना

गुरु ही नहीं, बल्कि आदर्श और अपनी प्रेरणा का स्रोत भी मानते हैं।

कलाकार 'अकुझा' अपने पेशे से पूर्ण-रूपेण संतुष्ट हैं। भविष्य में वे एक ऐसे कलाविद्यालय की शुरूआत करना चाहते हैं, जहां नये कलाकर सही ढंग से कला-शिक्षा पा सकें और आधुनिक कला की चकाचौंध से जरा भी दिग्भ्रमित न हों।

—अशोक नगर, १०९ अचोले रोड,
नालासोपारा (पूर्व), थाना, महाराष्ट्र

□

वरिष्ठ पत्रकार श्री अक्षयकुमार जैन की पुस्तक 'युग-पुरुष राम' १९५४ में प्रकाशित हुई। उसकी एक प्रति भेंट करने के लिए वे राष्ट्रपति भवन गये। पुस्तक प्राप्त करते ही राजेन्द्र बाबू ने तीन बार पुस्तक को सिर से लगाया। कुछ देर चुप रहे, फिर बोले, 'आप धन्य हैं जो मर्यादा पुरुषोत्तम के चरित्र पर कुछ लिख सके हैं। मर्यादा पुरुषोत्तम राम सारे देश के लिए वंदनीय हैं। उन्होंने जो मर्यादाएं स्थापित कीं उन्हें अपनाकर कोई भी समाज उन्नति कर सकता है। राम-कथा को जितना व्यापक बनाया जाय उतना ही श्रेष्ठ है।'

—डा. गोपाल प्रसाद 'वंशी'

०००

भारतेंदु अनेक भाषाएं जानते थे। उनकी दीक्षा कुल के अनुसार वल्लभ संप्रदाय में हुई थी। सब धर्मों में आदर की बुद्धि रखते हुए भी वे अनन्य वैष्णव थे। उन्होंने अपनी अनन्यता इस प्रकार प्रकट की है:

भजौं तो गुपाल ही कौं सेवों तो गुपाले एक
मेरो मन लाग्यो सब भांति नंदलाल सौं।
मेरे देव-देवी गुरु माता-पिता बन्धु इष्ट
मित्र सखा हरी नातौ एक गोपाल सौं।
हरीचंद और सौं न संबंध कछु
आसरो सदैव एक लोचन विशाल कौं।
मानो तो गुपाल सौं न मानो तो गुपाल ही सौं
रीझो तो गुपाल सौं न रीझो तो गुपाल सौं।

इसके साथ ही उन्होंने कहा है:

सीधेन सौं सीधे महा बांके हम बांकेन सौं,
हरीचंद नगद दमाद अभिमानी के।

हिंदी के उत्थान के लिए उन्होंने क्या नहीं किया। उनका मत था:

निज भाषा उन्नति अहै सब उन्नति को मूल

ऐसे थे भारतेंदुजी।

—डा. गोपाल प्रसाद 'वंशी'

□

गढ़वाली लोकगीतों में नेहरूजी

□ डॉ. शिवानन्द नौटियाल

कलेजा का चीरा ह्‌वैगें, हिया का बेहाल,
आंख्यों मां रिटण लैगें, जवाहिर लाल

'कलेजे के ऊपर मानों किसी ने ब्लेड से शल्य क्रिया (चीर-फाड़) कर दी है। यह असह्य सूचना (पं. नेहरू की मत्यु का समाचार) सुनकर हृदय की अवस्था, कलेजे की स्थिति बेहाल हो गयी है। बार-बार जवाहरलाल का चेहरा आंखों में घूमने लगता है। विश्वास ही नहीं होता कि वह मधुर व्यक्तित्व का लाड़ला जवाहर अब इस धरती पर न रहा।'

गढ़वाली लोक-गीत की ये पंक्तियां कितनी सशक्त और कितनी हृदय-विदारक हैं।

सचमुच, आज भी यही लगता है कि भारतरत्न पं. जवाहरलाल नेहरू हमारे ही बीच कहीं हैं। उनकी हमारे बीच से उठ जाने की बात आज भी सत्य नहीं लगती। जब उनके दिवंगत होने की कोई बात करता है, तो ऐसा लगता है मानो बहुत बड़ी गलती की जा रही है। इस बात को शहरों के या तथाकथित सभ्य कहलाने वाले नागरिक कल्पना भले ही समझें, परंतु दुनिया के छल-कपट से दूर रहने वाले, अपने ही खेतों, घरों, नदियों एवं पर्वतों की घाटियों, में रहने वाले और अपने ही ढंग का जीवन-यापन करने वाले लोक-नर्तक तथा लोक-जीवन के सुकुमार प्राणी उन्हें सदा अपने ही बीच पाते हैं।

पं. जवाहरलाल नेहरू को भारत की प्राकृतिक छटा से जितना अपार-स्नेह था उतना ही प्यार वे प्रकृति के मध्य स्वच्छंद जीवन-यापन करने वाले लोगों से करते थे। २६ जनवरी के गणतंत्र पर्व पर पं. नेहरू भारत के कोने-कोने से आने वाले लोक-नर्तकों के साथ ऐसे घुलमिल जाते थे कि लोक-नर्तकों ने कभी उनको अपने से अलग नहीं समझा। गणतंत्र दिवस के अवसर पर नेहरूजी का कोमल हृदय लोक-कलाकारों के साथ इतना आत्मसात हो जाता था कि वे अपने आपको भूल जाते थे। लोक-कलाकारों की वेशभूषा पहनकर लोक नृत्यों की अनोखी अदा में लोक नर्तकों के साथ जब वे मस्ती से नाचा करते थे तो स्वच्छंद लोक-जीवन यापन करने वाले ये धरती के बेटे और बेटियां अपने को धन्य समझते थे। उन्हें नेहरू से प्रिय कोई नहीं लगता था।

भारत के हर लोक-जीवन समाज प्रिय नेता नेहरू थे। वे उन्हें अपने कलेजे का 'टुकड़ा' और आंखों का 'नूर' समझते थे। गढ़वाली लोक-जीवन में भी नेहरू सदा प्रेरणा के स्रोत रहे हैं। गढ़वाल ने सदैव नेहरू और नेहरू-परिवार को चाहा और सराहा है। जहां नेहरू प्रकृति के मध्य विचरण करने वाले, स्वच्छंद जीवन-यापन करने वाले, लोक-समाज को धरती का सुकुमार पुष्प मानकर गले से लगाते थे, वहां हिमालय की सुखद गोद में बसे, गंगा-यमुना के नैहर गढ़वाल और गढ़वाली लोक-हृदय ने उन्हें धरती का सबसे उत्तम फूल, लालों में बहुमूल्य लाल, तारों में चांद, बांकपन में अद्भुत बांका मानव, और तो ओर, संपूर्ण भारत को एक मात्र दिशा बोध करवाने वाली 'भारत की आंख' माना है–

तू फूलों मां को फूल छई,
लालों मां को लाल जवाहिर,
बांकों मां को बांको छई,
भारत को आंखों तू जवाहिर,
ब्यै–बाबू–देश को लाडो छई,
गैणों मां की जून तू जवाहिर।

–'अरे जवाहर! तू विश्व के सर्वोत्तम पुष्पों में से अकेला ही सर्वोत्तम 'भारत–पुष्प' है। संसार के बहुमूल्य लालों में हमारे देश का तू ही तो अमूल्य लाल-जवाहर है। जगत भर के बांकेजनों में तू ही तो हमारे देश का अद्भुत 'बांकाजन' है। तू ही तो संपूर्ण विश्व में भारत की आंख है जिस पर हम सबको गर्व है। प्रिय जवाहर! तू मां-बाप और देश का लाड़ला है। सच, तू असंख्य श्रेष्ठ मानवरूपी तारों में परम श्रेष्ठ मानवरूपी चांद है।'

सच, नेहरू रूपी चंद्रमा ने विश्व में भारत के प्रति असंख्य दुर्भावनाओं रूपी अंधकार को दूर कर दिखाया। संसार भारत की ओर देखने लगा। भारत की आंख बनकर नेहरू ने विश्व को आश्चर्य में डाल दिया। गढ़वाली लोक-हृदय नेहरू की विश्व में फैली ख्याति को यों प्रकट करता है:

हाथ को रूमाल भैजी, हाथ को रूमाल,
बुन्या मां करी दिखाये, नेरूल कमाल।
खाई जालो आम भैजी, खाई जालो आम
देश-देशमां फैलीं च, नेहरू की हाम।

–'हमारे जवाहर ने संसार में कमाल कर दिखाया है, इसीलिए विश्व के हर देश में नेहरू की अपार ख्याति फैली हुई है।'

नेहरू की ख्याति उनके महान व्यक्तित्व के कारण तो फैली ही थी, परंतु उनके कार्य भी इतने उत्तम और जनोपयोगी थे कि उन्हें लाख चाहने पर भी नहीं भुलाया जा सकता। संसार में नेहरू अपनी तटस्थ-नीति के लिए प्रसिद्ध है। गढ़वाली लोक-हृदय इन बारीकियों को भी नजर-अंदाज न कर सका:–

माछी मारी तीति भैजी, माछी मारी तीति
भलो तेरो राज नेहरू, भली तेरी नीति।

–'हे नेहरू! तेरा राज्य भी सुखदायक

है, और तेरी नीति भी भारत के गौरवानुकूल श्रेष्ठ है।'

लोक-जीवन मस्ताना जीवन होता है। पहाड़ों से टकराते-टकराते, पत्थरों से लड़ते-लड़ते, जिस गढ़वाली समाज को बीसवीं शताब्दी में भी स्वतंत्रता का रस नहीं मिल पाया, जिस गढ़वाल से गंगा-यमुना समस्त देश की प्यास बुझाने पहाड़ों के कलेजे को चीरकर मैदानों में आती हैं और अपने नैहर के भोले-भाले लोगों को प्यासी की प्यासी छोड़ आती हैं, जिस गढ़वाल का बेटा देश के लिए जीता है और जिसकी बेटी देश को अपना सुहाग, भाई और बेटा सदा अर्पित करती रही है, और जिस गढ़वाल का आज भी पूर्ण विकास नहीं हुआ है, वही गढ़वाली लोक-समाज नेहरू के राज्य से बहुत संतुष्ट था। शायद उन्हें विश्वास रहा होगा कि अवश्य नेहरू उनके भाग्य बदल देंगे, तभी तो उन्होंने अपने गीतों में स्पष्ट और मुखर होकर गाया—

तिमला को पात भैंजी, तिमला को पात,
नेरू को राज भैंजी, जेठ मां बरसात।
बाजी जाला बाजा भैंजी, बाजी जाला
बाजा,
भारत मां ह्वैगे भैंजी, नेरू को सुखकारी
राज।

—'भारत में नेहरू का सुखकारी राज्य'

हो गया है। भाइयों, नेहरू का राज्य ऐसा ही सुखकारी है, जैसे जेठ की दोपहरी में बरसात।'

जेठ के महीने में बरसात की कल्पना करने वाला गढ़वाली लोक-समाज नेहरू के प्रति कितना आशावादी रहा है। नेहरू का अपनत्व और ममत्व ही तो लोक-समाज को इतना लुभाये हुए था। अन्यथा गढ़-वाली-जीवन की कठोरता में इतनी कोमलता कहां से आती। आशा और विश्वास का इतना ज्वलंत उदाहरण अन्यत्र मिलना कठिन है। लोक-समाज के सरल-प्राणी तो नेहरू को देखकर ही मानों स्वर्ग का आनंद ले लेते थे। उनका मन रूपी मयूर नेहरू को देखते ही नाच उठता था। फिर उन पर (नेहरू पर) विश्वास क्यों न होता। नेहरू तो गढ़वाली समाज के लिए वसंत के समान थे, जिनके (नेहरू के) दर्शन मात्र से वे 'वसंती' होकर प्रसन्नता में नाच-नाच उठते थे –

वसंत छ आज ऋतु
बसंती ह्वे गवां हम।
देखीक ह्वै थंई जवारी,
मन नच द, छम-छम।

–'वसंत ऋतु है। पर हमारे लिए तो वास्तव में वसंत 'नेहरू' है, जिन्हें देखते ही हमारा मन-मयूर 'छम-छम' कर नाच उठता है।'

गढ़वाली लोक समाज का मन, नेहरू के प्रतिष्ठा वाले पद को पाने पर ही नहीं नाचा करता था, गढ़वाली लोक-गीतों के नायक तो नेहरू बचपन से ही रहे हैं। गढ़वाली सदैव नेहरू के हर कार्य को सराहते रहे और उनका अनुगमन कर ही अपना मार्ग बनाते रहे। गढ़वाली लोक-गीतों में चौफुला प्रसिद्ध नृत्य-गीत है। यह चौफुला नृत्य गीत गुजराती के 'गरबा' या 'गरबी' नृत्य की शैली का है जिसे लोग बड़े मनोयोग से गाते हैं और नृत्य भी करते जाते हैं। गढ़वाली लोक-समाज ने नेहरू पर 'चौफुला नृत्यगीत' तब गाया और नृत्य कर दिखाया था, जब कि गढ़वाली सैनिकों को अंग्रेज सरकार विक्टोरिया क्रास देकर सम्मानित कर चुकी थी। गढ़वाली समाज तब अपने खेतों, चौकों और पर्वतों की घाटियों में मुखर होकर नेहरू के चौफुले को गा-गाकर, नाच-नाचकर दिखाया करता था:–

मोतीलाल का नौना जवारी,
तीला धारू बोला द।
भारत का नेता जवारी,
तीला धारू बोला द।
सफेद टोली का बांका जवारी,
तीला धारू बोला द।
चीलमी को पीच भैजी,
चीलमी को पीच द।
कांगरेस को करे परचार,
भारत का बीच द।
पीतल पिटायो भैजी,
पीतल पिटायो द।
विदेस्यों का छक्का भैजी,
छक्का छुड़ैन द।

कूटी जाला धान भैंजी,
कूटी जाला धान द।
देश का बान दे दे भैंजी,
सब कुछ वैन दान द।
खेली जालो खेल भैंजी,
खेली जालो खेल द।
देश का बाना जवारी,
तुम गैने जेल द।
बोली जालो काम भैंजी,
बोली जालो काम द।
देश का वाना जवारी,
सब कुछ करे त्याग द।
भारत का पति जवारी,
तीला धारू बोला द।
मोतीलाल का नौना जवारी,
तीला धारू बोला द।

—'मोतीलाल के बेटे जवाहर तुम भारत के सच्चे नेता हो। तुम सफेद टोपी और जवाहर कोट में बांकी अदा के नेता लगते हो। सफेद टोपी तुमसे ही सजती है। तुमने अनेक सुख त्यागकर संपूर्ण भारत में कांग्रेस का प्रचार किया। तुम्हारा कितने गजब का व्यक्तित्व है कि विदेशियों के भी छक्के छूट गये हैं। प्यारे नेहरू! जहां तुम कर्मवीर हो, वहां तुमने सब कुछ दान कर अपने को दानवीरों में भी सम्मानित कर दिया है। तुम महान देश प्रेमी हो, और देश के लिए कई बार जेल की यातना भुगत चुके हो। तुम देश आजाद करके ही रहोगे। तुम देश के सच्चे पति (रक्षक) हो। हे, मोतीलाल के बेटे—जवाहर! तुम पर देश की नज़रें हैं। तुम्हारा देश प्रेम अपूर्व है। तुम देश के हो। हम तुम्हारा सम्मान करते हैं और साथ देने का वचन देते हैं।'

गढ़वाली जहां वीर सैनिक हैं—वहां देश-प्रेमी पहले हैं। सन १९३० में जब बहादुरी, वफादारी और कर्मठता के लिए गढ़वाली वीरों की प्रशंसा अंग्रेज सरकार करती रहती थी—उसी समय गढ़वाली सैनिकों ने वीर चंद्र सिंह गढ़वाली के नेतृत्व में अपने भाइयों (पेशावरियों) पर गोली चलाने से मना कर दिया। अंग्रेज जब गढ़वाली वीरों को अनेक प्रलोभन देकर फौज में भर्ती करने का आकर्षण दे रहे थे, तब गढ़वाली लोक-समाज में माताएं अपने बेटों को, बहनें अपने भाइयों को और बहुएं अपने सुहाग को गांधी, सुभाष और नेहरू की स्वराज वाली फौज में भर्ती होने के लिए प्रोत्साहित कर रही थीं, और गढ़वाली वीर भी चौफुला नृत्यगीत गा-गाकर और नाच-नाच कर अपने भाइयों को नेहरू की फौज में भर्ती होने को उत्साहित करते हुए स्वयं भर्ती हो रहे थे:—

चला भुलौं भर्ती ह्वै जौंला,
जवाहिर दादा की पलटन मां।
भला—सजुला खद्दर पैरी,
और रंगीला जवाहिर कोट मां।
मर—मिटुला देश का बाना,
घडर छोड़ला दादा, जवारी का साथ मां।

—'चला भुलौ (छोटे भाइयों)। जवाहर

दादा (बड़े भाई) की फौज में भर्ती हो जायें। जवाहर की फौज की वर्दी खद्दर की है। उनके 'जवाहर कोट' को पहनकर हम भी खूब बन कर सजधज कर रहेंगे। अरे भाइयो! कितना अच्छा पर्व है— देश पर मर मिटने का। आओ, हम भी दादा जवाहर के साथ घर छोड़ कर देश पर मर मिटें।'

और जवाहर! लोक-हृदयों का नायक तथा गढ़वाली लोक समाज का चहेता नचाड़ नर्तक सचमुच अपने देश के लिए सब कुछ कुर्बान कर उस लोक चला गया है। लोग कहते हैं कि वह चला गया है, परंतु लोक हृदय मानने को कदापि तैयार नहीं।

वे आज भी नेहरू को भारत के हर कण-कण में पाते हैं और कहते हैं कि जब तक धरती और आकाश हैं, चांद और तारे हैं, नेहरू की स्मृति तब तक रहेगी :

याद रैली तेरी जवारी,
जब तक दुन्या रैली या।
सूरज-जून सी नाम रालो,
धरती आकाश जब तक या।

—'प्रिय जवाहर! जब तक यह धरती-आकाश रहेंगे, तब तक तुम्हारा नाम सूर्य और चांद की तरह चमकेगा। और हम (लोक-समाज के जन) जब तक यह दुनिया रहेगी, तुम्हारी याद करते रहेंगे। तुम्हारी 'स्मृति' ही हमारी पूजा होगी।

—१, कालिदास मार्ग, लखनऊ, उ. प्र.

□

पं. गोविन्दवल्लभ पंत अपने राजनीतिक विचारों में बड़े दृढ़ थे। प्रथम बार वे प्रदेश के मुख्य मंत्री बने थे तभी उन्होंने कुछ ऐसे निर्णय लिये थे जिनसे उनका सिक्का बैठ गया था। उस समय की एक घटना बहुत प्रसिद्ध है। उनके पार्लियामेंट सेक्रेटरी बाबू गोविन्द सहाय एक जिले के दौरे पर गये तो वहां का आई. सी. एस. अफसर उनका स्वागत करने स्टेशन पर नहीं आया। उसे अपने आई.सी.एस.पने का अभिमान था। श्री गोविन्द सहाय ने किसी प्रसंग में यह बात पंतजी को बता दी। उस समय के विधि-विधान के अनुसार पंतजी उक्त अफसर के विरुद्ध कोई कार्रवाई नहीं कर सकते थे, लेकिन इतना अधिकार था कि यदि चाहें वे तो उसे किसी अन्य स्थान पर भेज सकते हैं और गवर्नर कोई हस्क्षेतप नहीं कर सकता। पंतजी ने उक्त अफसर को अच्छा-सा पाठ पढ़ाने का निश्चय कर लिया और उसका तबादला एक तहसील के इंचार्ज के रूप में कर दिया। उनकी इस कार्रवाई से सारे उत्तर प्रदेश में तहलका मच गया। वह भागा-भागा अंग्रेज गवर्नर के पास पहुंचा। लेकिन गवर्नर कर ही क्या सकता था। उसने जब पंतजी से पूछा तो उन्होंने उत्तर दिया, 'इस तहतील की स्थिति कुछ खराब थी, इसलिए एक योग्य प्रशासक के नाते मैंने ऐसा किया है।' तब बेचारे आई. सी. एस. को पता चला कि उसके अमुक कार्य से ऐसा हुआ और उसने क्षमा मांगी।

—डा. गोपाल प्रसाद 'वंशी'

□

पंचायती राज विधेयक

□ जयदेव सिंघानिया, एडवोकेट

भारतीय गणतंत्र के इतिहास में २६ जनवरी १९५० की तरह ही १५ मई १९८९ एक चिर स्मरणीय दिन माना जायेगा। इसी दिन लोकसभा में प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी ने ६४ वां संविधान संशोधन विधेयक प्रस्तुत किया। यह विधेयक संविधान के अनुच्छेद ३६८ के अंतर्गत 'पंचायती राज' को संविधान सम्मत विधि का रूप देने के लिए प्रस्तुत किया गया है।

'पंचायती राज' की परिकल्पना हमारे देश के लिए नयी नहीं है। पंचायत हमारा बड़ा पुराना और सुंदर शब्द है। उसका शाब्दिक अर्थ है गांव के लोगों द्वारा चुने हुए पांच आदमियों की सभा। यह शब्द उस पद्धति का सूचक है, जिसके द्वारा भारत के असंख्य ग्राम लोकराज्यों का शासन चलता था। लेकिन ब्रिटिश सरकार ने महसूल वसूल करने की अपनी कठोर पद्धति से इन प्राचीन लोक राज्यों को लगभग नाश ही कर डाला।

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी गांवों को सबसे अधिक महत्व देते थे। गांधीजी हमारे शासन-तंत्र का आधार ग्राम-पंचायतों को करना चाहते थे। उनका कहना था कि 'आजादी नीचे से शुरू होनी चाहिये। हर एक गांव में प्रजातंत्र या पंचायत का राज हो, उसके पास पूरी सत्ता और ताकत हो।' (महात्मा गांधी–ग्राम– स्वराज पृ. ६९)

कांग्रेस ने पंचायती राज पद्धति को सिद्धांततया आजादी के पहले ही स्वीकार कर लिया था तथा इस पद्धति का कुछ क्षेत्रों में सीमित प्रयोग भी किया गया। हमारे 'संविधान' के निर्माताओं के मस्तिष्क में भी 'पंचायती राज' पद्धति थी, लेकिन तत्कालीन राजनीतिक, सामाजिक व आर्थिक स्थिति को ध्यान में रखकर उन्होंने पंचायतों को स्वशासन की इकाइयों के रूप में गठित करने का निर्देश 'राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांतों' के अंतर्गत तो किया, लेकिन संसद एवं विधान सभाओं की भांति 'पंचायतों' को संवैधानिक स्वशासन की स्वायत्त संस्थाओं के रूप में मान्यता नहीं दी।

'संविधान' में 'ग्राम–प्रशासन' का विषय सातवीं अनुसूची की 'राज्य–सूची' में है। अत: यह राज्य विधान मंडलों व राज्य प्रशासन के अधिकार क्षेत्र में आता है। गांवों की समस्याओं के हल और उनके विकास के लिए, अनेक राज्यों ने अपने-अपने पंचायत अधिनियम बनाये और उनके अंतर्गत पंचायतों का गठन भी हुआ।

लेकिन देश के अधिकांश भागों में पंचायती राज संस्थाओं से जो उम्मीदे थीं, वे पूरी नहीं हो सकीं जैसा कि प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी ने विधेयक प्रस्तुत करते हुए कहा है। वे अनेक अनियमताओं की शिकार हो गयीं और वे जनता को वह स्वशासन नहीं दे सकी, जिसकी अपेक्षा थी। राज्य प्रशासन और ग्रामीण जनता के वीच वे संपर्क का साधन भी न वन सकी।

हमारे प्रधान मंत्री श्री राजीव गांधी ने ग्रामीण क्षेत्रों का स्वयं निरीक्षण किया, वहां की जनता की आशा-आकांक्षाओं का अध्ययन किया और ग्रामीण जनता की स्थिति सुधारने के लिए क्या किया जाये इस विषय पर देश के सभी जिला मजिस्ट्रेटों, राज्यों के मुख्य सचिवों और राज्यों के मुख्य-मंत्रियों की परिषदें आयोजित कीं और वे इस तथ्य पर पहुंचे कि ग्रामीण क्षेत्रों के विकास के लिए उनकी स्वशासन संस्थाओं को नियमित व वित्तीय दृढ़ता प्रदान करना अत्यंत आवश्यक है। आम गांव का आदमी भी स्वराज के स्फुरण को महसूस करे, इसी भावना से प्रस्तावित संशोधन विधेयक तैयार किया गया है।

६४ वां संविधान संशोधन विधेयक, पंचायती राज संस्थाओं को सीमित स्वायत्ता प्रदान करेगा और जो गांवों के विकास में एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकेगी। संविधान में पंचायती राज या गांवों की स्वशासन संस्थाओं का एक अध्याय जुड़ जायेगा, जिसके कारण राज्य विधान सभाओं को पंचायती राज अधिनियमों में उस अध्याय में वर्णित प्रावधानों को सम्मिलित करना या उनके अनुरूप अधिनियम वनाना अनिवार्य हो जायेगा। प्रस्तावित विधेयक के मुख्य-मुख्य प्रावधान निम्नलिखित हैं :

१. ग्रामोण, माध्यमिक तथा जिला स्तरों पर सभी राज्यों में पंचायतों की तीन चरणीय (स्तरीय) प्रणाली की स्थापना, परंतु जिन राज्यों की जनसंख्या २० लाख से कम होगी, वहां माध्यमिक स्तर पर पंचायतों की स्थापना अनिवार्य नहीं होगी।

२. पंचायतों की सभी सीटों को सभी स्तर पर सीधे चुनाव से भरा जाना।

३. अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जन जातियों तथा महिलाओं के लिए पंचायतों में आरक्षण सुनिश्चित करना।

४. पंचायतों का कार्यकाल पांच वर्ष का निर्धारित करना।

५. पंचायतों के द्वारा आर्थिक विकास, गरीवी उन्मूलन व सामाजिक न्याय की योजनाओं को तैयार करना तथा उन्हें क्रियान्वय करना। राज्य विधान मंडलों को पंचायतों को सत्ता व दायित्व हस्तांतरित करने का अधिकार प्रदान करना।

७. पंचायतों के अधिकार क्षेत्र के विषयों को प्रस्तावित ११ वीं अनुसूची में उल्लेख करना।

८. सार्वजनिक आवश्यकता की वस्तुओं के वितरण का दायित्व पंचायतों को देना।

प्रस्तावित संशोधन विधेयक के उपरोक्त प्रावधानों से सभी राज्यों में पंचायतों का

स्वरूप व गठन 'एक जैसा' हो जायेगा।

पंचायतों की जिम्मेदारी राज्य विधान मंडलों की होगी अतः राज्य सरकार का नियंत्रण एव निरीक्षण तो रहेगा, लेकिन कुछ विषयों में उनकी सत्ता बंट जायेगी। सत्ता के विकेंद्रीकरण के बिना कोई भी जनतंत्र स्थायी और सबल नहीं हो सकता है, अतः सत्ता के विकेंद्रीकरण का जो कदम उठाया गया है वह स्तुत्य है। यह विधेयक राज्य सरकारों को यह अधिकार देता है कि वे तय करें कि टैक्स की आमदनी का कितना हिस्सा पंचायतें रख सकती हैं, और कितना उन्हें सौंपा जा सकता है और राज्य की संचित निधि से कितना अनुदान उन्हें दिया जा सकता है। विधेयक में प्रस्ताव है कि ऐसा 'वित्त आयोग' बनाया जाये जो राज्य सरकार और विधान सभाओं को सिफ़ारिश करेगा कि वे कितना टैक्स पंचायतों को सौंपे और कितना अनुदान उन्हें दे।

पंचायत राज स्वशासन संस्थाओं का गठन सीधे चुनावों से होगा, अतः चुनाव लोकसभा व विधान सभा के चुनावों की तरह ही 'चुनाव आयोग' के तत्वावधान में निर्धारित काल के लिए हो सकेंगे। अतः निष्पक्ष व नियमित चुनाव इन संस्थाओं को स्वशासन की लोकप्रिय और संतोषजनक संस्थाएं बनाने में सहायक होंगे। हमारे देश में गावों की जो सामाजिक-आर्थिक स्थिति है, उसमें अनुसूचित जातियों और जन-जातियों में एक व्यापक और वाजिब डर है कि यदि उन्हें पंचायतों में उचित स्थान नहीं मिला तो पंचायतें गांव के श्रीमंतों के हाथों में दमन का साधन बन जायेंगी और वे इन संस्थाओं का उपयोग अपनी सुविधा-प्राप्त स्थिति को स्थायी बनाने में करेंगे। अतः इन अनुसूचित जातियों और जन-जातियों को आश्वस्त करने के लिए विधेयक में ऐसा प्रावधान है कि राज्य विधानसभाएं जो कानून बनायेंगी, उनमें जनसंख्या के अनुपात को देखते हुए अनु-सूचित जातियों और जनजातियों के लिए आरक्षण देना अनिवार्य होगा। एक दूसरा महत्वपूर्ण प्रावधान इस विधेयक में यह है कि राज्यविधान सभाएं जो कानून बनायेंगी, उनमें पंचायतों के हर स्तर पर महिलाओं के लिए ३० प्रतिशत सीटों का आरक्षण करना अनिवार्य होगा। स्थानीय स्वशासन संस्थाओं में जन संख्या के अनुपात में महिलाओं की संख्या बहुत ही कम है, अतः विधेयक में उनके लिए ३० प्रतिशत सीटों के आरक्षण की व्यवस्था होने से स्वशासन संस्थाओं में वे अपना सक्रिय सहयोग दे सकेंगी।

महिलाओं के योगदान का जिक्र करते हुए श्री राजीव गांधी ने बतलाया कि गांव की आर्थिक जिंदगी में महिलाओं का हिस्सा आधे से ज्यादा है और पंचायतों की बैठकों में उनकी उपस्थिति से पंचायतें ज्यादा ईमानदार, अनुशासित व जिम्मेदार बन सकेंगी। गांवों के प्रशासन में इस प्रकार महिलाओं की भूमिका न केवल महत्वपूर्ण होगी, वरन् उनमें आत्मविश्वास भी आयेगा

और वे गांवों के नवजागरण में पुरुषों के साथ सह नागरिकत्व भी भावना से काम कर सकेंगी। यह आशंका कि पंचायतों में 'गूंगी गुड़ियायें' भर जायेंगी व्यर्थ है, क्योंकि गांवों की अशिक्षित महिलाओं ने भी जब-जब आम चुनाव हुए हैं, तब-तब अपने-अपने वोट उचित प्रकार से दिये हैं। अपने राजनीतिक अधिकार का उन्होंने सोत्साह प्रयोग किया है, सरकारें वनायी व वदली हैं।

इस 'विधेयक' के द्वारा 'जनतंत्र' गांवों में पहुंचेगा। ग्रामीण जनता में राजनीतिक चैतन्य आयेगा एवं जनतंत्रीय कार्यप्रणाली का ज्ञान हो सकेगा। स्थानीय नेतृत्व के उदय व विकास का अवसर मिलेगा। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने कहा था—'मैं ऐसे भारत के लिए काम करूंगा, जिसमें गरीव से गरीव आदमी भी यह महसूस करेगा कि यह उसका देश है और इसके निर्माण में उसकी आवाज सुनी जायेगी।' प्रस्तावित विधेयक राष्ट्रपिता के सपनों को साकार करने में निश्चय ही एक महत्वपूर्ण कदम होगा। आदर्श को यथार्थ में परिणत करने का एक अवसर मिल सकेगा।

इस विधेयक से करीव तीस करोड़ ग्राम मतदाता प्रभावित होंगे। इस समय संसद व विधान मंडलों में करीव ५००० सदस्य हैं, जो ८० करोड़ जनता का प्रतिनिधित्व करते हैं, इस विधेयक से ७ लाख लोग सीधे चुने जायेंगे। ग्रामीण विकास के लिए वनायी गयी 'जवाहर रोजगार योजना' के अंतर्गत २१०० करोड़ रुपयों के व्यय का प्रावधान है। यह रकम राज्यों के माध्यम से पंचायतें वितरण करेंगी, जिससे वितरण उचित ढंग से हो सकेगा।

संसद में विधेयक के पारित हो जाने से ही पंचायती राज स्थापित नहीं होगा, वरन उसके लिए राज्यों के विधान मंडलों व राज्य सरकारों को भी अपना हार्दिक पूर्ण सहयोग देना आवश्यक है।

संसद द्वारा पारित संशोधन विधेयक तो मुख्य-मुख्य मार्गदर्शक सिद्धांत ही निर्धारित करेगा, लेकिन 'पंचायत राज', के संवंध में व्यौरेवार कानून बनाना, उसके नियम-उपनियम वनाना और उन्हें कर्मठता से क्रियान्वित करना यह तो राज्य विधान मंडलों व राज्य सरकारों पर ही निर्भर होगा। अत: जव तक जनता की आकांक्षाओं व अपेक्षाओं को दृष्टि में रखकर वे पंचायतों के संवंध में उदार दृष्टिकोण रखकर, वस्तुत: उन्हें शासन व वित्तीय अधिकार नहीं देंगी, तव तक इन संस्थाओं का समुचित संचालन संभव नहीं हो सकेगा।

अत: केंद्र ने सत्ता के विकेंद्रीकरण की दिशा में जो स्तुत्य कदम उठाया है राज्य विधान मंडलों और राज्य सरकारों को अपना मुक्त सहकार देना चाहिये, जिससे हम हमारे जनतंत्र को जनता का प्रत्यक्ष योगदान मूलक जनतंत्र वनाने में सफल हो सकें।

—२९ ए, बालाराम स्ट्रीट,
ग्रांट रोड, बंबई—४०००07

प्रकृति की अनुपम भेंट : नीबू

□ ललन कुमार प्रसाद

प्रकृति ने हमें अपना स्वास्थ्य बनाये रखने के लिए अनेक उपहार दिये हैं, उनमें नीबू भी एक है। प्रकृति द्वारा प्रदत्त यह एक अनुपम भेंट है। वैसे तो प्रत्येक फल गुणकारी होता है, लेकिन किसी फल में कम और किसी फल में अधिक गुण होते हैं। नीबू एक ऐसा गुणकारी फल है, यानी इसमें इतने गुण हैं कि इसकी उपयोगिता को भारतीय और पाश्चात्य चिकित्सक सभी स्वीकारते हैं। आज सारे विश्व में इसकी उपयोगिता का गुणगान हो रहा है। इसलिए इसे फलों में श्रेष्ठ फल माना जाता है।

नीबू साइटस परिवार का एक सदस्य है। इस परिवार के अन्य सदस्य हैं— मौसंबी, संतरा, माल्टा आदि। नीबू इस परिवार का अगुआ है, क्योंकि यह जितना सस्ता, सुलभ और गुणकारी है उतना इस परिवार के अन्य सदस्य नहीं। यह कच्ची अवस्था में हरा और पकने पर आकर्षक पीला हो जाता है। बाजार में नीबू की कई किस्में मिलती हैं – जंबीरी, गागल, पहाड़ी, बिजौरी, कागजी आदि। इनमें कागजी नीबू किस्मों तथा गुणों में सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। इसका छिलका बहुत पतला होता है। सामान्यतया खाने-पीने या अचार बनाने में कागजी नीबू ही काम में लाया जाता है। आयुर्वेदिक, यूनानी आदि औषधियों के निर्माण में भी इसी नीबू का अधिक इस्तेमाल होता है।

पोषक तत्व

नीबू में जल ८५ प्रतिशत, साइट्रिक एसिड ७.५ प्रतिशत, पोटाश २ से ३ प्रतिशत, प्रोटीन १ प्रतिशत, चरबी ०.९ प्रतिशत, कैलसियम ०.०७ प्रतिशत, फास्फोरस ०.०३ प्रतिशत, लौह प्रति १०० ग्राम नीबू के रस में २.३ मिली ग्राम और विटामिन सी की (एस्कार्बिक एसिड) प्रति १०० ग्राम नीबू के रस में ३९ मिली ग्राम होता है। इनके अलावा नीबू में विटामिन ए भी उचित मात्रा में पाया जाता है। नीबू के रस में उपस्थित विटामिन सी, कृत्रिम विटामिन सी की अपेक्षा बहुत अधिक प्रभावशाली होता है, क्योंकि इसके विटामिन सी के साथ बायोफ्लेवोनाइड्स (विटामिन पी) नामक तत्व संलग्न होता है। विटामिन सी के अलावा नीबू में नियासिन और थायामिन भी अल्प मात्रा में होता है। नीबू के रस के

प्रति १०० ग्राम से ५७ कैलोरी ऊर्जा मिलती है।

नीबू की विशेषताएं

झुलसती गर्मी हो या कड़कड़ाती ठंड, घनघोर बारिश हो या मनभावन वसंती मौसम—नीबू का उपयोग सभी ऋतुओं में लाभकारी है। इसकी सबसे बड़ी विशेषता यही है कि यह ऋतु विशेष के अनुसार उसके दोषों को दूर कर देता है।

यह एक ऐसा फल है जो बालक, जवान और वृद्ध सभी के लिए समान रूप से उपयोगी है तथा किसी भी रोग में नुकसान नहीं पहुंचाता है।

नीबू में विद्यमान खटाई तत्व दूसरे सभी फलों की अपेक्षा अधिक मात्रा में होते हैं। फिर भी यह दूसरी खटाइयों (जैसे इमली आदि) की तरह नुकसान नहीं पहुंचाता, क्योंकि शरीर पर इसका प्रभाव क्षारीय होता है।

नीबू केवल औषधि का ही काम नहीं देता, अपितु भोजन को स्वादिष्ट और सुपाच्य भी बना देता है। इसकी एक बड़ी विशेषता यह है कि जिस पदार्थ में यह मिलाया जाता है, उसके गुणों में वृद्धि कर देता है। यही कारण है कि भोजन व सलाद में इसका उपयोग कर उसे अधिक स्वादिष्ट और सुपाच्य बनाया जाता है। नीबू के अचार, मुरब्बे और सिकंजी भी बड़े स्वास्थ्यवर्द्धक एवं स्वादिष्ट होते हैं।

विषनाशक नीबू

विभिन्न प्रकार के विष को उतारने में नीबू का रस लाभदायक होता है। मधुमक्खी, बर्रे जैसे जहरीले कीड़े के काटे स्थान पर नीबू के रस में नमक मिलाकर मलने से विष उतरता है तथा दर्द कम होता है। बिच्छू के डंक मारे स्थान पर नीबू के रस में नमक मिलाकर मलने से विष दूर होता है तथा दर्द में कमी होती है। मकड़ी के विष में नीबू के रस में चना पीसकर लगाने से बहुत लाभ पहुंचता है। नीबू के रस में शक्कर मिलाकर पीने से धतूरे का विष दूर हो जाता है।

सर्वोत्तम सौंदर्य प्रसाधन

नीबू एक सर्वोत्तम प्राकृतिक सौंदर्य प्रसाधन है। रूप निखारने में यह इतना महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है कि महंगे से महंगे सौंदर्य प्रसाधन भी इसका मुकाबला नहीं कर सकते। ऐसा इसलिए कि महंगे सौंदर्य प्रसाधनों के उपयोग से जहां क्षणिक सौंदर्य प्राप्त है, वहां इस फल का प्रयोग स्थायी कांति प्रदान करता है। कारण कि सौंदर्य वृद्धि के लिए नीबू का प्रयोग बाहरी और भीतरी दोनों प्रकार से किया जाता है। फिर नीबू में विद्यमान तत्व हमारे शरीर के अवांछनीय पदार्थों को पसीने के साथ बाहर निकालने में सहायक होते हैं। असल में नारी या पुरुष के सौंदर्य का रहस्य शरीर के मात्र गौर वर्ण होने में नहीं, बल्कि त्वचा की स्वाभाविक स्निग्धता में निहित है। इस दृष्टि से नीबू बहुत ही उपयोगी है।

खून साफ करने में नीबू के रस से उत्तम

दूसरा कोई फल नहीं होता। कारण कि इसका प्रभाव सीधे रक्त पर पड़ता है। स्वाद और सुगंध से भरी इसका पाचक रस रक्त-विकार चुन-चुन कर निकाल फेंकता है। साथ ही दुर्गंधित वायु निकालकर रोम-रोम में ताजगी और चमक भर देता है। सच तो यह है कि शारीरिक-शुद्धि के लिए नीवू से वढ़कर उत्तम औषधि कोई दूसरी नहीं है।

यदि आप प्रतिदिन खाली पेट स्वच्छ शीतल ताजे जल में आधा या चौथाई नींवू चिचोड़कर सादे ही अथवा चीनी मिलाकर नियमित रूप से पिया करें। इससे आपकी पाचन शक्ति वढ़ जायेगी और कब्ज का नामोंनिशान मिट जायेगा। पांच-छह सप्ताह के अंदर ही आपके चेहरे पर स्वाभाविक स्निग्धता तथा लालिमा आ जायेगी। इससे चेहरे के दाग, झाइयां और मुंहासे भी धीरे-धीरे दूर हो जायेंगे। साथ ही त्वचा का तैलीयपन कम हो जायेगा।

एक बड़ी वाल्टी में आधे नीवू का रस निचोड़ें और उसमें एक चुटकी नमक डालकर मिला लें। फिर उस पानी से स्नान करें। कुछ दिनों तक ऐसा करने पर सारे चर्मरोग शांत हो जायेंगे, त्वचा में निखार आ जायेगा और रक्त-संचार वेग से होने लगेगा। शरीर सुंदर-सलोना दिखायी देने लगेगा। यदि आपके शरीर से अधिक पसीना आता हो और उसमें वदवू भी अधिक आती हो तो आप नीवू के रस मिले पानी से अवश्य स्नान करें।

यदि आपकी त्वचा सांवले वर्ण की है और आप उसे निखारना चाहते हैं, तो रात में सोने से पूर्व आंवले या सरसों के तेल में समभाग नीवू का रस मिलाकर चेहरे तथा गर्दन पर लगाकर आठ-दस मिनट तक धीरे-धीरे मालिश करें। इससे आपके चेहरे का वर्ण पहले की अपेक्षा अधिक साफ हो जायेगा और मुंहासे तथा चेहरे की झाइयां भी धीरे-धीरे मिट जायेंगी। साथ ही चेहरे का रूखापन दूर हो जायेगा और उस पर स्वाभाविक स्निग्धता आ जायेगी।

नीवू का रस, गाजर का रस और खीरे का रस एक-एक चम्मच मिलाकर चेहरे पर लगावें और दस-पंद्रह मिनट के वाद पानी से धो लें। आपका चेहरा निखर उठेगा। चौथाई नीवू का रस निचोड़कर उसमें थोड़ी मलाई मिला लें। इसे प्रतिदिन रात को लगातार एक महीने तक चेहरे पर लगाते रहिये। इससे सांवली त्वचा निखर उठेगी और चेहरा साफ-सुथरा लगने लगेगा। कच्चे दूध में नीवू का रस मिलाकर चेहरे पर लगावें और दस मिनट वाद गुनगुने पानी से धो डालें। इससे दाग-धब्वे वहुत हद तक मिट जायेंगे। इन उपायों से कील-मुंहासे भी प्राकृतिक रूप से ठीक हो सकते हैं।

जवानी चढ़ने पर कील-मुंहासे निकला ही करते हैं। खासकर तैलीय त्वचा पर मुंहासे अधिक होते हैं। इसलिए चेहरे का तैलीयपन कम करने के लिए नीवू के छिल्कों को चेहरे पर रगड़ें। नीवू का रस, गाजर का रस और थोड़ी-सी चीनी मिला_

कर पीने से मुंहासों से बचा जा सकता है। ग्लिसरीन में एक चौथाई नीवू का रस मिलाकर चेहरे पर लगाने से कील-मुहासों के दाग मिटने लगते हैं और मुख मुलायम बना रहता है। ग्लिसरीन की जगह नारियल का तेल भी इस्तेमाल कर सकते हैं। नीवू के रस में ग्लिसरीन व गुलावजल मिलाकर रात में सोने से पहले अपने चेहरे पर लगातार डेढ़-दो महीने तक लगाते रहने से कील-मुंहासों से मुक्ति मिल जाती है तथा चेहरा भी मुलायम और निखरा हुआ दिखता है।

शहद में नीवू का रस मिलाकर चेहरे पर लगाने से झुर्रियां ठीक हो जाती हैं। इससे त्वचा का रंग भी निखरता है और त्वचा कोमल वनी रहती है। एक चम्मच नीवू के रस में दो चम्मच गुलावजल मिलाकर चेहरे पर लगावें और दस मिनट बाद स्वच्छ जल से धो डालें। इससे आपके चेहरे की झाइयां जाती रहेंगी।

चेहरे पर चेचक का दाग हो तो पहले चेहरे पर भाप लें। फिर एक चम्मच मुल्तानी मिट्टी और आधा चम्मच टल्कम पाउडर को गुलावजल में मिलाकर पतली लेई (पेस्ट) वना लें। फिर उसमें एक चम्मच ग्लिसरीन और दो चम्मच नीवू का रस मिलाकर चेहरे पर लगावें। कुछ मिनट के बाद गुनगुने पानी से धो डालें। इससे चेचक का दाग बहुत हद तक फीका या कम हो जायेगा।

वरतन मांजने, सब्जी काटने, घर का पोछा आदि लगाने के कारण बहुत-सी गृहणियों की हथेलियों पर काली रेखायें उभर आती हैं, जिससे हाथ भद्दे हो जाते हैं। हाथों की इन काली रेखाओं को दूर करने के लिए घर के कामकाज से निवटकर सावुन से हाथ धो लें और उस पर नीवू तथा ग्लिसरीन के घोल को लगावें। इससे धव्वे और काली रेखायें मिट जायेंगी।

यदि आपकी कोहनियां काली पड़ जाने के कारण कुरूप दीखती हैं तो उनके नीचे आधा-आधा नीवू रस सहित रखें। एक सप्ताह के अंदर कोहनियों का कालापन स्वतः दूर हो जायेगा। एड़ी और घुटनों का मैल साफ करने के लिए नीवू की फांक उन पर मलें। एड़ी तथा घुटनों का मैल एवं कालापन स्वतः दूर हो जायेगा।

यदि ठंड के कारण आपके होंठ फट गये हों तो ग्लिसरीन और नीवू का रस मिलाकर लगावें। इससे वहुत लाभ होगा।

एक प्याले में चार वड़े चम्मच नारियल का पानी लें और उसमें एक पूरा नीवू निचोड़ें। इस घोल को एक घंटे तक अपने वालों में लगाये रखें। मात्र सात दिन के लगातार प्रयोग के वाद वाल झड़ने वंद हो जायेंगे। और आगे प्रयोग करते रहने से वाल लंवे और घने होने लगेंगे। सूखे आंवले को पीसकर उसमें नीवू का रस मिलावें और उसे सिर के वालों पर लगावें। इससे वाल काले, मुलायम और नैसर्गिक रूप से चमकीले होंगे।

पैतृक विरासत को छोड़कर यदि किसी

अन्य कारणों से आपका सिर गंजा हो गया हो अथवा गंजा हो रहा हो तो सिर के गंजे वाली जगह पर कटा हुआ नीवू प्रतिदिन रगड़ें। वाल नये सिरे से उगने लगेंगे।

रूसी अच्छे से अच्छे वालों की छवि बिगाड़ देती है। इसे दूर करने के लिए पहले गर्म पानी में तौलिया भिगोकर सिर पर लपेटें और तब नीवू के रस को वालों की जड़ों में लगाकर रगड़ें। पहले गर्म पानी में भिगोया हुआ तौलिया लपेटने से वालों की जड़ों के छिद्र खुल जाते हैं। इसके एक घंटे वाद दही व वेसन से सिर धो लें। नारियल के तेल में नीवू का रस और वहुत थोड़ा कपूर मिलाकर मालिश करें। इसके दो घंटे वाद आंवला व रीठा से वाल धो लें। इन दोनों क्रियाओं से निश्चित रूप से रूसी से मुक्ति मिल जाती है।

प्राकृतिक स्वास्थ्यवर्धक औषधि

नीवू में विटामिन सी प्रचुर मात्रा में होती है जो सर्दी-जुकाम का प्रतिरोधक है। इसलिए इसके सेवन से सर्दी, जुकाम, खांसी से वचाव होता है। जिन बच्चों को सांस फूलने की वीमारी हो उनको नीवू के रस में शहद मिलाकर चटाने से वहुत लाभ पहुंचता है। प्रचुर मात्रा में विटामिन सी का होना नीवू की एक वहुत बड़ी विशेषता है। यही कारण है कि स्कर्वी रोग में यह लाभकारी सिद्ध होता है। इसके सेवन से घाव व चोट जल्दी भरने में मदद मिलती है।

विटामिन सी के साथ विटामिन पी संलग्न होने के कारण नीवू शरीर की रक्त-वाहिनियों को मजवूत वनाता है। इसलिए इसके सेवन से शरीर के भीतर होने वाले रक्तस्राव वंद हो जाते हैं। इसी गुण के कारण नीवू का सेवन रक्तचाप के रोगियों को रक्तवाहिनियों की दुर्घटनाओं से वचाता है।

नीवू में मौजूद साइट्रिक एसिड कीटाणुनाशक है। इसलिए यह हैजा, मलेरिया आदि संक्रामक वीमारियों के जीवाणुओं को वढ़ने से रोकता है। इसी गुण के कारण नीवू शरीर में हानिकारक जीवाणुओं को नष्ट कर टिशुओं को पुष्ट करता है। हैजे के दिनों में नीवू का सेवन अवश्य करना चाहिये। इससे हैजे से पीड़ित होने का भय नहीं रहता।

दंत-रोग में लाभ

पिसी हुई लौंग में नीवू का रस निचोड़कर दांतों पर मलने से दांत-दर्द दूर हो जाता है। यदि आप पायरिया से पीड़ित हैं तो १०० ग्राम तिल के तेल में ३०-४० ग्राम नीवू का रस और थोड़ा-सा सेंधा नमक मिलाकर मंजन तैयार कर लें। प्रतिदिन इसी मंजन को दांत और मसूढ़ों पर मलें। इससे पायरिया रोग, मसूड़े फूलना तथा रक्त वहना ठीक हो जाता है। अकेले नीवू के रस को ताजे एवं स्वच्छ जल में मिलाकर कुल्ला करने से भी पायरिया, दांतों में कीड़े लगना, मसूढ़े फूलना तथा उससे रक्त वहना और स्कर्वी ठीक हो जाते हैं। वादाम के छिलके जलाकर उसको खूव

बारीक पीस लें और तब उसमें नीबू का रस मिलाकर दांतों पर मंजन की तरह मलें। इससे दांत सुदृढ़ होकर मोती के समान चमकने लगते हैं। रस निकले नीबू के छिलकों में दो-तीन बूंद सरसों का तेल और एक चुटकी नमक मिलाकर प्रतिदिन दांतों पर मलें। इससे मुंह की बदबू चली जाती है, दांतों का मटमैलापन दूर हो जाता है तथा दांत दूध की तरह सफेद और चमकीले हो जाते हैं।

चर्म रोग पर प्रभाव

चर्मरोगों पर नीबू आश्चर्यजनक रूप से फायदा करता है। नीबू के रस में पीसी हल्दी और सरसों बराबर-बराबर मात्रा में मिलाकर उबटन तैयार करें। इस उबटन को शरीर पर लगाने से खुजली से शीघ्र राहत मिलती है। नीबू के रस में नारियल का तेल मिलाकर तबतक हिलाते रहें जबतक उसका रंग दूधिया सफेद न हो जाये। इसे शरीर पर मालिश करें और दो घंटे के बाद स्नान कर लें। इससे खुजली में बहुत लाभ पहुंचता है। दाद में उसे तांबे के सिक्के से खूब खुजलाकर दिन में तीन-चार बार नीबू का रस लगावें। इससे कुछ दिनों के अंदर ही दाद ठीक हो जाता है।

नीबू की पत्ती तथा नीम की पत्ती को जलाकर राख बना लें। इस राख को नारियल के तेल में मिलाकर शरीर पर लगाने से फोड़े-फुन्सी ठीक हो जाते हैं।

मोटापा निवारक

मोटापा के कारण शरीर बदसूरत लगने लगता है तथा लोग कई बीमारियों के शिकार हो जाते हैं। इससे मुक्ति पाने के लिए एक गिलास पानी में एक नीबू का रस और दो छोटे चम्मच शहद मिलाकर पियें। ऐसा करने से शरीर की अनावश्यक चर्बी छंटती है। दो महीने तक लगातार सेवन करने पर मोटापा कम हो जाता है और कमजोरी भी नहीं होती। साथ ही हाजमा ठीक बना रहता है।

लू लगने पर

गर्मियों में घर से बाहर निकलने के पहले यदि नीबू का शरबत या सादे पानी में चौथाई नीबू का रस निचोड़ कर पी लिया जाये तो लू नहीं लगती है। नीबू के रस में पुदीने की कुछ बूंदें मिलाकर पीने से लू उतर जाती है। नीबू और प्याज के रस में पुदीने की बूंदें मिलाकर पीने से भी लू से मुक्ति मिल जाती है।

उदर रोग

पेट दर्द, बदहज्मी, पेट का भारी रहना, कब्ज, जी मिचलाना आदि रोगों में नीबू का सेवन रामबाण दवा है। अगर पेट भारी रहता है और वायु की शिकायत हो तो भोजन के बाद नीबू के रस में भिगोये हुए सौंफ का नियमित रूप से सेवन करें। इससे पेट भारी रहने तथा वायु रोग से छुटकारा मिल जायेगा और भूख भी खुलकर लगेगी। जी मिचलाना, खट्टी डकार, पेट की जलन, पेट दर्द आदि तकलीफें

होने पर नीबू के रस को गुनगुने पानी में मिलाकर पियें अथवा नीबू को काटकर उसमें नमक, काली मिर्च बुरक कर हल्का-सा गर्म करके चूसें। इससे बहुत लाभ पहुंचता है। एक कप ताजे पानी में एक नीबू निचोड़ कर दिन में तीन बार पीने से पेचिश से छुटकारा मिल जाता है।

उपयोगी हिदायतें

नीबू का रस पर्याप्त तेजाबी होता है। इसलिए इसका रस विशुद्ध रूप से न पियें, पानी में मिलाकर ही सेवन करें। एक गिलास (एक पाव) पानी में दो चम्मच से अधिक नीबू का रस नहीं लेना चाहिये। दोपहर के बजाय सुबह में खाली पेट नीबू का रस लेना उचित होता है।

इस तरह हम पाते हैं कि नीबू के नियमित सेवन से शरीर में ताजगी तथा स्फूर्ति आती है और रूप-लावण्य बना रहता है। अर्थात् बुढ़ापा शीघ्र व्यक्ति के पास नहीं फटकता है।

सच तो यह है कि नीबू में कुछ ऐसे तत्व विद्यमान हैं जो स्वास्थ्य और आरोग्यता के लिए परम आवश्यक हैं। इस प्रकार नीबू हम सबके लिए कुदरत की अनुपम भेंट है।

इसलिए नीबू हर समय घर में रखें। यह बड़े काम की चीज है।

०००

नीबू के कुछ दिलचस्प उपयोग

अपने फ्रिज में नीबू काटकर रखिये, फ्रिज की बदबू तुरंत खत्म हो जायेगी।

चावल पकाते समय नीबू के रस की ६–७ बूंदें डालने से चावल छिटके बनते हैं और उनका रंग भी लाजवाब निखर आता है।

कपड़ों पर स्याही लगने की स्थिति में उस जगह पर नमक मिले नीबू के रस को लगाकर कुछ समय के लिए धूप में रख दें और तब साफ पानी से धो डालें। इससे स्याही के दाग पूरी तरह साफ हो जाते हैं।

यदि किसी कपड़े पर लोहे के जंग का दाग पड़ गया हो तो दाग लगे स्थान पर तीन-चार बार नीबू का रस लगावें और फिर साफ पानी से धो डालें। इससे कपड़े पर लगे जंग के दाग दूर हो जाते हैं।

इसी प्रकार कपड़ों पर फलों के दाग लगे स्थान पर नीबू का रस लगाकर धोने से वे दाग बहुत हद तक साफ हो जाते हैं।

जूतों पर कटा नीबू लगाकर १० मिनट के लिए धूप में छोड़ दें और तब पालिश लगावें। इससे पालिश ज्यादा दिनों तक बनी रहती है।

प्रेशर-कुकर में सब्जी बनाते समय रस निचोड़े गये बेकार लेकिन ताजे नीबू के छिलके को डाल दें। इससे आपका कुकर अंदर से काला नहीं होगा।

बरतनों को भी रस निचोड़े नीबू की फांक से रगड़कर साफ किया जा सकता है।

—प्राचीन भारतीय इतिहास और पुरातत्व विभाग, पटना विश्वविद्यालय, पटना–८०००५

□

ठहर गये बादल

सांझ हुई रंगों के निखर गये बादल
अंबर में आवारा बिखर गये बादल।

जादू औ' टोना सा, सेनुर औ' सोना सा
दर्पण में बिजली के संवर गये बादल।

बंसवट की फुनगी पर, अमुआ के झूले में
पुरुआ के संग-संग, लहर गये बादल।

बूंदों का गजरा ले, खुशबू के इंद्रधनुष
शिखरों से घाटी तक उतर गये बादल।

आंगन में, कोठे पर, ताल में, तलैया में
मधुवन के ठौर-ठौर फहर गये बादल।

हंसों की पांत बना, तितली के पंख लगा
सावन की खिड़की पर ठहर गये बादल।

चित्र : चंदन यादव
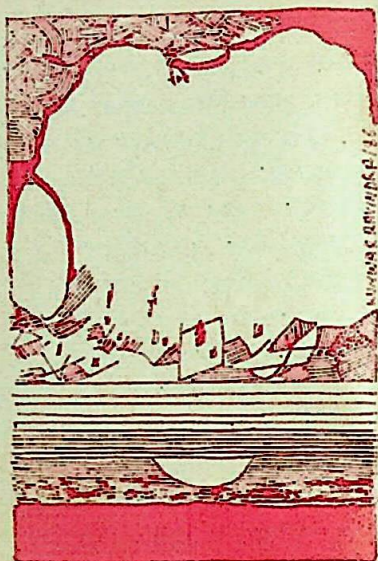
चित्र : के. रवीन्द्र

बिजलियां पकड़े हुए

आ गया सावन घटा की उंगलियां पकड़े हुए
भींजती चंचल हवा की पुतलियां पकड़े हुए।
जाल किरनों को समेटे चल पड़ा सूरज उधर
स्वर्ग-सेनुर रंग की कुछ मछलियां पकड़े हुए।
बादलों के पार मौसम आज फिर लिखने लगा
दर्द की कोई रुबाई, बिजलियां पकड़े हुए।
शब्द गूंगे, थरथरा के होंठ भी अब रह गये
मैंने देखा जब दृगों को बदलियां पकड़े हुए।
जंगलों में गंध की कुछ चुलबुली सी लड़कियां
खेलती हैं इंद्रधनुषी तितलियां पकड़े हुए।

—शिवप्रसाद कमल

—कल्पनामंदिर, चुनार, मिर्जापुर, उ. प्र.

कहानी

पापा

□ रविशंकर शर्मा

मेरी शादी घरवालों के लिए एक सिरदर्द बन गयी थी। कहीं लड़की का घर हमारे घर के स्तर का नहीं है, तो कहीं उसके पिता हमारे पिता के स्तर के नहीं हैं, तो कहीं लड़की के घर में कोई खोट है। हां, दहेज हमारे रास्ते में आड़े नहीं आ रहा था, क्योंकि पिता के अत्यधिक ईमानदार होने और स्वयं अपना एक आदर्श होने के कारण हमारी मांग कुछ नहीं थी। इन सबके ऊपर यदि सब कुछ ठीक निकला, तो फिर मुझे लड़की ही रास नहीं आती थी—कहीं मोटी, तो कहीं उसकी लंबाई कम हो, कहीं एकदम 'अन-इम्प्रेसिव पर्सनैलिटी' और यदि सब ठीक है तो अपील नहीं कर रही।

मां-बाप परेशान, भाई-बहन परेशान कि कहीं कोई और लड़की तो नहीं देख रखी है या किसी अन्य लड़की से प्यार-व्यार का चक्कर तो नहीं। मां सोचती, मेरा लायक असिस्टेंट एडमिनिस्ट्रेटिव ऑफिसर लड़का, देखने में इतना सुदर्शन, लंबा-चौड़ा कहीं कुंवारा ही तो बैठा न रह जायेगा। पिता कभी परेशान होकर चिल्ला पड़ते, 'कह दो अपने लाड़ले से कि कहीं से भी एक अदद लड़की ले आये, हम इसकी पसंद को स्वीकार लेंगे। हमारी पसंद की लड़की तो इसे पसंद आने से रही। और लाट साहब को खुद भी तो कोई लड़की पसंद आये। हम तो लड़की देखने से आजिज आये।' दादी की अपनी ही चिंता थी। 'अरे बेटा तुम लोग अब तक उंगलियों पर गिनकर इक्कीस लड़कियां देख चुके हो। मुहल्ले में बदनामी हो रही है, अब हमारे घर अपनी लड़की भी देने कोई नहीं आयेगा। सब कहेंगे इन्हें तो कोई लड़की ही पसंद नहीं आती।' बहन का गर्वोन्नत चेहरा, 'भैया के लिए इत्ते सारे रिश्ते आये। अब सब घटिया निकल गये तो क्या हुआ! मैं ही अपनी दोस्तों या सीनियर्स में से एकाध कोई ढूंढ़ूंगी।' फिर छुटका भी पीछे क्यों रहता, 'अच्छा हुआ भैया ने सबको रिजेक्ट कर दिया, मुझे भी एक्को पसंद नहीं थी। आखिर भाभी तो मेरी ही होगी न।' मैं खुद भी हैरान-परेशान था। सोचता था, चार-पांच रिश्ते आयें, उन्हीं में से कोई एक लड़की पसंद कर लूंगा। पर यहां तो ओर-छोर न था।

फिर किसी इतवार को जाड़े की कुनकुनी दोपहरिया में नीचे बरामदे में चौपाल जमती पापा जब छत पर धूप सेंकते हुए अखबार पढ़ने चले जाते थे, क्योंकि वह

थोड़े गंभीर किस्म के व्यक्ति थे। न किसी से खुद इस तरह की कोई बात करते और न दूसरा ही उनसे बेकार की बातें करने की हिम्मत करता था। यह दूसरी बात है कि बौद्धिक स्तर से नीचे की या काम की बातों से हटकर सभी बातों को वह फिजूल बातों के दायरे में ही रखते थे और उनमें समय गंवाना कभी भी गवारा नहीं करते थे। तो इस चौपाल का विषय होता था मेरी शादी। पहला रिश्ता कब आया था, कैसे आया था बात आगे कैसे बढ़ी थी, कब देखने गये थे, लड़की कैसी लगी? आदि विषयों पर विस्तृत चर्चा होती। फिर दूसरी का जिक्र, फिर तीसरी का, इस प्रकार सभी रिश्तों में आयी लड़कियों का जिक्र होता, उनका आपस में तुलनात्मक अध्ययन होता जो कि बहुत कठिन कार्य था—यानी इक्कीस लड़कियों से लेकर उनके परिवार तक का तुलनात्मक अध्ययन। पर यह जरूरी ही था। क्योंकि यह आजकल का हमारे घर 'होटेस्ट सब्जेक्ट' था, जिसमें पिता को छोड़कर बाकी सबकी गहरी रुचि होती। दादी बिचारी छत पर रहतीं, नहीं तो पचहत्तर वर्ष की उम्र में भी वह इस महत्वपूर्ण डिस्कशन से अपने को कभी भी वंचित नहीं रखना चाहती थीं।

फिर आया एक रिश्ता—परिवार साधारण ही था, पर मेरे चाचा ने इस रिश्ते की स्वयं सिफारिश की थी, कुछ इन शब्दों में—'मैंने आज तक जो चंद सुंदर लड़कियां देखी हैं, उनमें से एक यह है। थ्रू आउट फर्स्ट क्लास है। पी.एच-डी. कर रही है। घर के सभी कामों में निपुण है। परिवार यद्यपि साधारण है, पर घर में अकेली लड़की होने के कारण वह सब करेंगे, जिससे आपकी शान में कोई कमी न आने पाये। आप इस लड़की को अवश्य देखें।' सबकी आंखें एक बार आशा से फिर चमकने लगीं। मुझे बीच-बीच में निराशा व्याप जाती थी, जब शुरू-शुरू में आये एक रिश्ते की याद आती थी... हमारे एक करीबी परिचित ने यह रिश्ता बताया था। वह उनके बॉस की लड़की थी। बेइंतहा तारीफ की थी उन्होंने उस रिश्ते की। खैर हम लोग उनके घर पहुंच गये थे लड़की देखने। देखकर दंग रह गये—क्या यह वही लड़की है जो फोटो में देखी थी—यह तो कोई गोरे मांस का लोंदा ऐसी लगती है...। इस नये आये हुए रिश्ते को लेकर भी मैं यही सोच रहा था कि कहीं यहां भी टायं-टायं फिस्स न हो जाये, कहीं चाचा की पसंद एक गोरी, लंबी, सुशील लड़की भर न हो, जिसमें आकर्षण रत्तीभर न हो।

रिश्ता दूसरे शहर का था, पर रास्ता लंबा न था, कुल तीन-सवा तीन घंटे का। सो मैं, मां, बहन और छुटका चल दिये उसे देखने। स्टेशन पर लड़की वाले लेने आये थे, घर ले गये। थोड़ी ही देर में चाय-नाश्ता लेकर लड़की आयी। वह वास्तव में सुंदरी थी। एक ही नजर में सबको भा गयी। मां द्वारा पूछे गये प्रश्नों का उत्तर

बड़ी शालीनता से दिया। मेरी या बहन-भाई की तरफ एक नजर उठाकर भी नहीं देखा। मुझे बड़ी कोफ्त हो रही थी। फिर लड़की और मुझे कमरे में अकेला छोड़कर सभी बारी-बारी किसी न किसी बहाने से वहां से खिसक लिए। मैं सकपका उठा—एकांत में उस लड़की से बात कैसे करूं, जिससे मेरी एक 'हां' से जीवन-भर का साथ होना हो। इसके पहले कि मैं कुछ पूछता, उसने नजरें उठायीं और आंखों में डाल दीं। पर वहां तो निराशा के घोर बादल छाये हुए थे, माथे पर हलके-से बल भी पड़े थे, बीच-बीच में भौंह भी कांप उठती थी, होंठ हलके-हलके थर्रा रहे थे, मानो कुछ कहना चाहते हों। फिर उसने आंचल पकड़े हाथ की मुट्ठी से मुड़ा-तुड़ा एक पर्चा निकाला और मेरी ओर बढ़ा दिया और संयत स्वर में बोली, 'इसे पढ़ने के बाद ही अपना निर्णय लीजियेगा।' मैंने पर्चा चुपचाप जेब में रख लिया। मैं सारी स्थितियां भांप चुका था, इसलिये मैंने उस लड़की यानी अनामिका से कुछ और बात करना उचित न समझा। वह नजरें नीची किये बैठी रही, मैं उसके उथल-पुथल भरे चेहरे में कुछ पढ़ने का प्रयास करता रहा।

थोड़ी देर में सब लोग आ गये। लड़की के माता-पिता किसी न किसी रूप में मेरी सहमति या असहमति के विषय में जानना चाहते थे, पर मैं टालता ही रहा। अकेले में जब मां ने भी पूछा तो मैंने कह दिया, 'जल्दी क्या है मां, घर चलकर पापा वगैरह से विचार-विमर्श करके ही निर्णय ले लेंगे।' मां को मेरे इस उत्तर से बड़ी निराशा हुई। वह तो सोचे बैठी थीं कि उनका बेटा इतनी सुंदर-सुघड़ लड़की के लिए आंखें मूंदकर हां कर देगा।

वह दोपहर मैंने किस तरह काटी, मैं

ही जानता हूं। जेब में पड़ा वह पर्चा, जिसे मैं किसी न किसी की अपने पास उपस्थिति के कारण पढ़ भी न सकता था और जो मेरे मानस को उथल-पुथल किये दे रहा था। खैर, लौटने की घड़ी भी आ गयी, क्योंकि ट्रेन शाम को चार बजे थी। उस समय सबके साथ अनामिका ने भी विदा दी, हाथ जोड़कर। मैं बार-बार उसकी ओर देखता, फिर पर्चे का ध्यान आ जाता।

ट्रेन में रास्ते भर मैं अनमना-सा रहा। बहन और छुटका मजाक करते रहे, 'भैया तो अभी से भाभी की याद में खो गये।' मन करता था जोर से उन्हें डांटूं पर आवाज गले में ही अटककर रह जाती थी। सफर समाप्त हुआ, घर पहुंचे। पिताजी ने राय जाननी चाही। मैंने रात भर का समय सोचने के लिए मांग लिया। इसके बाद मैं लपककर कमरे में आया और कुंडी चढ़ाकर जेब से पर्चा निकाला। उसमें दो लाइनें लिखी थीं—

आदरणीय...

मैं किसी और को अपना पति मान चुकी हूं। आगे आप स्वयं समझदार हैं।

—अनामिका

अब इस रिश्ते के विषय में कुछ सोचना बाकी न रह गया था।

कभी अपने भाग्य पर तरस आता, तो कभी अनामिका पर गुस्सा—अरे किसी से प्यार करती है तो घर में बता क्यों नहीं देती? घरवाले उसकी शादी के लिए परेशान हैं और वह मोहतरिमा कहीं और रास रचा रही हैं। फिर खुद ही दलील देता, अरे प्यार में बुराई क्या है। दो युवा दिल मिले, एक-दूसरे को भा गये, अब एक-दूसरे को देखे बिना चैन नहीं पड़ता। शायद प्यार में पड़ना दुनिया का सबसे हसीन सपना है।

उस शाम मैं खाना न खा सका। पेट-दर्द का बहाना बना दिया। अगली सुबह, जब नाश्ते के लिए सब डाइनिंग टेबल पर जमा हुए तो मैंने अपना निर्णय सुना दिया, 'मैं वहां विवाह नहीं करूंगा।' सबकी प्रश्नवाचक निगाहों के तीर मेरे चेहरे पर आ लगे—क्यों भला क्या खराबी है अनामिका में, इतनी सुंदर-सुशील! मैं कुछ देर सोचता रहा कि यदि मैं बिना कारण मना करता रहा तो सब मुझे कोसेंगे और कई दिनों तक पूछ-पूछकर परेशान करते रहेंगे। साथ में वे खुद भी परेशान होंगे। मैंने सेफ साइड अपनाया और कहा, 'दरअसल उसने अकेले में बातचीत के दौरान मुझे अपने भूतकाल के विषय में कुछ ऐसा बताया कि मैं उसे अपनी पत्नी के रूप में स्वीकार नहीं कर सकता।' फिर मैंने एक धमाका और किया—'और अब आप सब मेरी शादी के बारे में चिंता न करें। मैं शादी नहीं करूंगा।' इतना कहकर मैं मेज पर से उठ गया।

पर घरवाले इतनी आसानी से कहां हथियार डालने वाले थे। वे मेरे पीछे पड़े ही रहते। तब मैंने परेशान होकर अपना

ट्रांसफर दूसरे शहर स्थित रीजनल ऑफिस में करवा लिया। घरवाले मेरी भावनाओं को नहीं समझ सकते थे। इस घटना से मैं इतना मर्माहत हुआ था कि मैंने आजीवन विवाह न करने का फैसला कर लिया था।

रीजनल ऑफिस में आने के बाद धीरे-धीरे मेरा रसूख बढ़ने लगा। दो वर्ष बाद ही मैं एडमिनिस्ट्रेटिव ऑफिसर हो गया। फिर धीरे-धीरे सात-आठ वर्ष और बीत गये। एक शहर से दूसरे में ट्रांसफर होता रहा और मैं डिप्टी जनरल मैनेजर हो गया। फिर सिर के आधे बाल सफेद हो गये और पचास तक पहुंचते-पहुंचते, जनरल मैनेजर भी हो गया। अब अकसर ही नये एपॉइंटमेंट्स के सिलसिले में इंटरव्यूज में बैठना पड़ता था।

एक बार 'रिसेप्शनिस्ट' का इंटरव्यू चल रहा था। एक-एक करके महिला अभ्यार्थी आ रही थीं। तभी कमरे में आयी एक तरुणी को देखकर मैं ठगा-सा रह गया। यह तो हूबहू अनामिका ही थी, जैसा मैंने उसे आज से बाइस वर्ष पूर्व देखा था। पर यह तो अनामिका हो ही नहीं सकती, वह तो तभी बीस-इक्कीस की रही होगी, और यह तो अभी उन्नीस-बीस की ही होगी। एकदम वैसी ही आंखें, वैसी ही नाक और चेहरा-मोहरा। इस तरुणी की आंख में भी आज वैसी ही दीनता झलक रही थी, जैसी बाइस वर्ष पूर्व अनामिका की आंखों में थी। मैंने झटके से उसका आवेदन पत्र उठाया और 'पिता का नाम' कॉलम पर नजर डाली। वहां लिखा था, श्रीमती अनामिका वशिष्ठ। मेरा अंदाजा सही निकला था, यह अनामिका न सही उसकी बेटी अवश्य थी, तभी तो उसके जैसा चेहरा-मोहरा पाया था। तो क्या इसके पिता नहीं रहे, जो इसने 'पिता का नाम' के कॉलम में काटकर अपनी माता का नाम लिखा है? उस तरुणी का नाम था ऋतु। अपनी काबलियत और बोल-चाल के तौर-तरीके के ठोस आधार पर उसकी नियुक्ति हो गयी। यद्यपि आवेदन-पत्र पर उसका पता भी अंकित था, किंतु वह इतना लंबा था कि मैं जुबानी याद न रख सका।

घर आते ही मैंने पहला काम किया अपने संदूक से एक पुरानी पोटली निकालने का। इसमें अनामिका का वही पत्र और शादी के लिए घर आया हुआ उसका फोटो था। काफी देर तक मैं उसे देखता रहा, फिर मैंने फैसला किया अनामिका से मिलने का।

अगले ही दिन ऑफिस में ऋतु को बुलाया और उससे उसके घर का पता पूछा, तथा शाम को घर आने के लिए भी कह दिया। वह भौंचक हो मेरा मुंह देखने लगी कि आखिर इस बुड्ढे को क्या पड़ी है मेरे घर का पता लेने और घर आने की? मुझे उसका उस तरह देखना भी अच्छा लगा। मैं उसमें अपनी बेटी का अक्स देखने लगा।

ऑफिस में समय कट ही न रहा था। किसी तरह से पांच बजे और मैंने अनामिका के घर की राह पकड़ी। दरवाजा खटखटाया

तो एक दुर्वल-काया ने किवाड़ खोला। क्या यही अनामिका है? वह अनामिका ही थी—अत्यंत दुवली, बाल काफी सफेद, आंखों के नीचे गड्ढे और आवाज भी अत्यंत क्षीण, जैसे कोई सत्तर वरस की बुढ़िया हो। अब तक अनामिका भी मुझे पहचान चुकी थी। उसकी आंखें पहले चमकीं फिर एकदम बुझ गयीं, जैसे सौ वॉट का वल्व एकदम जलकर बुझ जाये। उसके मुंह से बोल नहीं फूट रहे थे—'आप आइये न, अंदर आइये, वैठिये।' उसके इसरार पर मैं अंदर जाकर वैठ गया। मेरे मुंह से निकल पड़ा, 'यह क्या हाल बना रखा है तुमने अपना, अनामिका? तुम्हारे पति के विषय में जानकर दु ख हुआ।' मेरे यह कहने पर उसकी आंखों से अश्रु झर उठे। तव उसने मुझे अपनी दर्दभरी दास्तान सुनायी, 'जिस लड़के के विषय में मैंने आपको लिखा था, वह वहुत वड़ा धोखेवाज निकला। जब मैंने उसे वताया कि मैं गर्भ से हूं तो वह कायर कहीं और भाग गया, मुझे अकेला छोड़कर। अपने भाग्य की मारी मैंने 'एवॉर्शन' नहीं करवाया। फिर उस मुहल्ले में रहना ही मुश्किल हो गया। सबकी आंखें मुझे घूरती रहती थीं। ऐसे में मुझसे शादी भला कौन करता? मुझे आदमी जात से ही घृणा हो गयी थी। मेरी एक फूल-सी कोमल वच्ची हुई। जब वह चार वर्ष की हो गयी तो मैं उसे लेकर इस शहर में चली आयी और एक प्राइमरी स्कूल में नौकरी कर ली। उसी की आमदनी से अपनी वच्ची को पढ़ाया-लिखाया और वड़ा किया। अब वह यहीं की एक इंश्योरेंस कंपनी में रिसेप्शनिस्ट हो गयी है। आज उसका पहला दिन था। आती ही होगी, उससे मिलवाऊंगी मैं आपको।' तव तक ऋतु भी आ गयी थी। मुझे देखते ही आश्चर्य से वोली, 'अरे आप आ गये! मां ये हमारे ऑफिस में जनरल मैनेजर हैं।' मैंने अनामिका को वताया, 'दरअसल तुम्हारा पता मुझे ऋतु से ही चला। जब यह इंटरव्यू देने आयी थी तो मुझे यों लगा जैसे तुम खड़ी हो।' अब तक ऋतु चाय-नाश्ता ले आयी थी। समोसे देखकर मैं सोचने लगा, 'अरे इसे कैसे पता कि मुझे समोसे पसंद हैं?'

फिर मैंने अनामिका से कहा, 'तुम्हें एतराज न हो तो एक वात कहूं।' अनामिका से 'हां' 'न' का उत्तर न पाकर मैंने कहा, 'मैं ऋतु को इसका पापा देना चाहता हूं, अपने रूप में।' मैंने देखा अनामिका मेरे चरणों की धूल उठाकर अपने सिर में लगा रही है और ऋतु भी लपककर मेरे कंधे पर आ लटकी, जैसे वह कोई छोटी-सी वच्ची हो। —२५३ ए, वाघम्बरी आवास योजना, अल्लापुर, इलाहाबाद-६

□

एक दुकान के वाहर लिखा था—'यहां शादी की हर चीज मिलती है?' एक ग्रामीण आया और वोला—'एक अच्छी दुलहिन दिखाइये।'

—सुबोध सहर

□

व्यंग्य

मरणोपरांत कार्यक्रम

□ रामेश्वर वैष्णव

मेरे अशुभचिंतकों को यह जानकर पर्याप्त प्रसन्नता होगी कि मैं हमेशा के लिए जिंदा नहीं रहूंगा। एक न एक दिन मेरी डोली उठ जायेगी यानी कि मैं बिना किसी रोमांटिक संदर्भ के बाकायदा मर मिटूंगा। अलबत्ता मेरे दुश्मनों को दारुण दुख होगा यह जानकर कि मरने के बाद भी मैं खाली नहीं बैठने वाला। सारा कार्यक्रम मैं अभी से तय किये देता हूं ताकि कम से कम मरने के बाद तो कोई काम मेरी मर्जी से हो।

मरने के लिए मैं जहरीली शराब को श्रेय देना चाहूंगा, क्योंकि इन दिनों मुआवजे की दृष्टि से इसका 'रेट' सबसे बढ़िया है। मुआवजे की राशि ठीकठाक हो तो मुझे बस या ट्रेन दुर्घटना में मरने में भी कोई आपत्ति नहीं होगी। मेरे दिन पूरे होते ही ऊपर वाला चाहे तो कोई 'मिक' जैसी गैस की रिसन करवा सकता है, साथ में बातें करने के लिए ढेरों लोग रहेंगे, मुझे सहूलियत रहेगी। कवि की सबसे बड़ी कमजोरी होती है 'श्रोता मंडली।' इसी बहाने और लोगों के साथ-साथ मेरे परिवार को भी गैस पीड़ित होने के नाते कुछ लाभ हो जायेगा। वैसे हवाई दुर्घटना में मारे जाने में मेरी विशेष रुचि है। उस जमाने तक तो हवाई किराया भी इतना बढ़ चुका होगा कि शायद ही कोई हवाई यात्री सकुशल पहुंचने की इच्छा रखे। बहरहाल यह तय होते ही कि मैं मर चुका हूं आकाशवाणी और दूरदर्शन से निम्न समाचार प्रसारित किया जाय—'अभी-अभी प्राप्त समाचार के अनुसार हिंदुस्तान के प्रख्यात गीतकार एवं व्यंग्यकार श्री रामेश्वर वैष्णव का हवाई दुर्घटना में पूर्व नियोजित देहावसान हो गया। वे अपने पीछे क्या-क्या छोड़ गये हैं, इसकी जानकारी देना उन्होंने उचित नहीं समझा। ज्ञात हुआ है कि अंतिम क्षणों में वे अपने सहयात्री को अपनी ताजी रचना सपारिश्रमिक सुना रहे थे। उन्होंने कई फिल्मों में गीत व संवाद लिखे जिनका नाम स्मरण में रखना संभव नहीं है। श्री वैष्णव बहुमाध्यम कुशल, बहुविद्या पटु एवं बहुआयामी व्यक्तित्व के ज्येष्ठ व श्रेष्ठ उदाहरण थे। उन्होंने पहले से ही कह रखा था कि लोग उनकी आत्मा की शांति के लिए ईश्वर से प्रार्थना न करें। क्योंकि वे अशांत या असंतुष्ट रहने के आदी नहीं। फिर भी देश के कई वरिष्ठ व कनिष्ठ मंत्रियों ने ऐसा किया है। श्री वैष्णव ने देश के व्यंग्यकारों से जाते-जाते अपील की है कि वे हवाई यात्रा से हर संभव बचें। उन्होंने

कोई काम बचाकर नहीं रखा है, अतः उनके बचे कार्यों को पूरा करने की कोई कोशिश न करे।'

इस समाचार के साथ दूरदर्शन चाहे तो मेरा हंसता हुआ फोटो दिखा सकता है। खबरदार! मेरे शव के पास किसी को रोता हुआ दिखाना सख्त मना है। कोई भी शख्स मेरे शव पर फूलमाला चढ़ाकर फूलों की बेइज्जती न करे। कागज के फूल जो सस्ते हों, चढ़ा सकते हैं बल्कि सिर्फ कागज ही चढ़ाये जायें जिसमें राह खर्च के लिए पांच रुपये का एक नोट हो। अगर किसी ने महंगा फूल चढ़ाया तो मुझे गुस्सा आ सकता है, हो सकता है मैं क्रोधवश जी उठूं।

वैसे इस तरह का प्रयास व्यर्थ होगा। मेरे अंतिम दर्शन के लिए आये हुए लोग सप्रयास मुंह लटकाकर कृपया मुझे बोर न करें। उन्हें मुस्कराते हुए देखने की मेरी अंतिम इच्छा है। 'अंतिम दर्शन' कार्यक्रम के दौरान अनूप जलोटा के भजन और मुकेश का रामायण पाठ जरूर बजाया जाये। मेरा घर छोड़ने का दुख कुछ कम होगा। अंतिम यात्रा मैं जीप की ट्राली पर तय करना पसंद करूंगा।

लोग मुझे कंधा दें यह स्वीकार नहीं होगा। फिर मैं यह भी नहीं चाहता कि मुझे कंधा देनेवाला कोई शख्स मेरा हमसफर बने। अंतिम यात्रा में, आकाशवाणी के ऐसे गायक जिन्होंने मुफ्त में मेरे गीतों को गा-गाकर प्रसिद्धि लूटी है। यह गीतमय संगीत गाते चलें—

रघुपति राघव राजाराम
वैष्णव आज चले सुरधाम
हीरा गोविंदम के नंदन
तुमने किया धरा का वंदन
करते सबको पुनः प्रणाम
आंखों में अंचल उग आया
दिल में हिंदुस्तान समाया,
चिंतन में ले विश्व तमाम...
जीवन को गा-गाकर काटा
हंसकर खाया गम का चांटा
सच के लिए हुए बदनाम...
असुरों को भी सुर में साधा,
लादा नहीं किसी पर बाधा,
जितना हुआ किया सत्काम...
पुल की तरह तटों को जोड़ा
दर्प जड़ित पर्वत को तोड़ा
बनकर नदी बहे अविराम...
शब्दों में भर दिया उजाला
चमचा अब तक एक न पाला
लेते रहे प्रभु का नाम।

इस भजन के साथ-साथ उत्साही बंधु 'डांस' भी कर सकते हैं बशर्ते कि उन्हें मेरे पुत्रों से कोई खतरा महसूस न हो। अंतिम यात्रा के महादेव घाट पहुंचते ही बिना देर किये मेरे शव को नहलाया-धुलाया जाय। इस दौरान मुकेश का गाया यह गीत मुझे सुनाया जाये—

बहुत दिया देने वाले ने तुझको
आंचल ही न समाया तो क्या कीजै।
बीत गये जैसे दिन रैना
बाकी भी कट जायें दुआ कीजै।

नहलाने-धुलाने के बाद चंदन का सेंट मुझ पर स्प्रे किया जाये, फिर मुझे चिता पर लिटाया जाये। रोज नहाने के बाद मैं दो पेज रामचरित मानस और दो पेज गीता पढ़ता हूं, उसे पूरा किया जाय। मानस और गीता का पाठ पूरा होने पर मुझे नाश्ता दिया जाय। क्योंकि बिना नाश्ता किये कहीं नहीं जाता था। फिल्म उजाला का यह गीत सुनाया जाय—

दुनिया वालों से दूर जलने वालों से दूर आजा आजा चलें कहीं दूर कहीं दूर कहीं दूर....

गीत के अंतिम बंद शुरू होने तक मुझे अग्नि के हवाले कर दिया जाये। मेरे उपस्थित कवि मित्र अपनी-अपनी एक-एक श्रेष्ठ कविता कागज में लिखकर मेरी चिता में डालें। गिनीज बुक ऑफ वर्ल्ड रिकार्ड रखने वाले बराबर नोट करें कि मेरी चिता में कितनी कविताएं सती हुईं। आगे चलकर कोई-न-कोई कवि जरूर मेरे रिकार्ड को तोड़ने के लिए पैदा होगा ही। मेरी मैयत में आने वाले लोग इसके बाद नहायें-धोयें फिर एक-एक मधुर मुनक्का की गोली खाकर चाहें तो घर जाकर हंसें और चाहें तो रोयें।

मेरे बारे में समाचार-पत्रों में कुछ इस तरह छपना चाहिये—

'हमारे पाठकों को यह समाचार देते हुए कलेजा मुंह को आता है कि छत्तीसगढ़ अंचल के देशप्रसिद्ध लोकप्रिय कवि व शोकप्रिय व्यंग्यकार श्री रामेश्वर वैष्णव को स्वर्गीय कवि-सम्मेलन की स्थायी अध्यक्षता हेतु भगवान विष्णु द्वारा वैकुंठ आमंत्रित किया गया है। वैसे तो यह कविवर वैष्णव का अंतिम प्रमोशन है किंतु देवताओं ने

हमेशा की तरह अपने स्वार्थ के लिए पृथ्वी के इस वरदान को हमसे छीन लिया है। अब श्री वैष्णव सुखों से ऊबे देवताओं को अपनी व्यंग्य कविताएं सुनायेंगे। प्रथम फरवरी सन १९४६ को रायगढ़ जिला के खरसिया नगर में जन्मे कविवर श्री रामेश्वर वैष्णव बी. ई. द्वितीय वर्ष तक शिक्षा प्राप्त कर सके। वचपन से ही वे कुशाग्र बुद्धि के थे सो शब्द से अर्थ प्राप्त करना खूब जानते थे। जिंदगी भर उन्होंने यही काम किया। जीवन चलाने के लिए आपको डाक तार विभाग में कई वर्षों तक नाक, एड़ी, चोटी और माथा रगड़ना पड़ा। आप उपन्यास, गीत, नवगीत, व्यंग्य, गजल, व्यंग्यगीत आदि कई विधाओं में सृजन करते रहे। आपने जिस विधा में हाथ डाला उसी में चमत्कार पैदा किया। आपने करीब वीस पुस्तकें लिखीं। आपका जीवन उन लोगों के लिए एक प्रेरणा दीप की तरह रहा जो वहुत साधारण परिस्थिति के होते हुए भी असाधारण इच्छा शक्ति से उपलब्धियों की तमाम ऊंचाइयों को छू लेते हैं, जो तृण की तरह उगते हैं और वरगद की तरह ढहते हैं। आपने कई फिल्मों में गीत और संवाद भी लिखे। कई-कई पुरस्कारों से विभूषित होने के वावजूद आपको अहं छू तक नहीं गया था, हालांकि आपकी ऊंचाई ज्यादा नहीं थी। इन्होंने अपने अंतिम संदेश में युवा व्यंग्यकारों से आग्रह किया है कि वे हवाई यात्रा से स्वयं को वचायें।'

शेष फिर कभी...। –डाकघर, वैकुंठ-४९३११६, जि. रायपुर, म. प्र.

□

स्वराज्य के कुछ समय वाद ही, शायद जश्ने-जम्हूरियत के सिलसिले में लाल किले में एक साहित्यिक समारोह हुआ था। उसमें देश की प्रायः सभी भाषाओं के वड़े-वड़े साहित्यकार सम्मिलित हुए थे। उसी समारोह में भाषण करते हुए मौलाना आजाद साहव ने देश में अनेक भाषाओं की शिकायत करने वालों को जवाव देते हुए कहा था कि हमारे मुल्क में अनेक भाषाएं हैं, यह उसके वड़प्पन की निशानी है। उसे देश की कमी न मानकर, उसकी अच्छाई माना जाना चाहिये। भारत माता के गले में चौदह-चौदह भाषाओं के हार पड़े हैं। उससे उसकी चमक चौदह गुनी हो गयी है।

उन्होंने आगे कहा था कि अधिक भाषाएं होने की एक खूबी और भी है। जिस तरह अधिक अलंकार धारण किये हुए कोई महिला घमंडी की तरह ऊंचा सिर उठाकर नहीं चलती, वल्कि विनय और शाइस्तगी से उसका मस्तक नत ही रहता है, उसी तरह भारत हमेशा विवेक और संजीदगी के रास्ते पर चलता रहेगा। कई जवानों की शिकायत लोग करते हैं जो मुल्क को सिर्फ एक जवान अंग्रेजी में वांधे रखना चाहते हैं। मैं अंग्रेजी का मुखालिफ नहीं, लेकिन अकेले वही एक जवान इस सारे देश की रहे, इसका हामी भी नहीं।

–डा. गोपालप्रसाद 'वंशी'

□

धूप-छांव : संस्मरण

□ प्रो. कृष्णदत्त वाजपेयी

एक कवि की उक्ति है :

'यह जीवन बीता जाता है—
धूप-छांव के खेल सदृश।'

जीवन-प्रवाह के साथ धूप-छांव के खेल की तुलना युक्ति संगत लगती है और रोचक भी। हमारे जीवन में सुख-दुःख, आशा—निराशा के क्षण आते रहते हैं। यदि ऐसा न हो तो जीवन नीरस हो जाये। समरसता उन्हीं गिने-चुने भाग्यवानों को प्राप्त होती है जो सभी प्रकार के बंधनों से मुक्त होते हैं। उन्हें सांख्य दर्शन के आधार पर 'स्थितप्रज्ञ' या 'जीवनमुक्त' कहा जा सकता है। पर ऐसी स्थिति बहुत कम मानवों को प्राप्त होती है।

हमारे प्राचीन साहित्य में भारत देश की बड़ी महिमा गायी गयी है। यह कहा गया है कि इस पुण्यभूमि में अवतरित होने के लिए स्वर्ग के देवता भी लालायित रहते हैं। प्राचीन भारत ने एक ऐसी संस्कृति का निर्माण किया, जिसमें जीवन के तीनों स्पृहणीय पक्षों—सत्य, शिव और सुंदर—का समन्वय है। श्रीलंका में जन्मे प्रसिद्ध विद्वान् डाक्टर आनंदकुमार स्वामी का कहना था कि वे भारत की संस्कृति के इसलिए प्रशंसक नहीं थे कि वह भारतीय है, बल्कि इसलिए कि वह सच्ची संस्कृति है।

अब से इकहत्तर वर्ष पहले उत्तर प्रदेश के रायबरेली जिले के रायपुर नामक गांव में मेरा जन्म शीतला अष्टमी, बृहस्पतिवार को हुआ। जन्मकुंडली बनाने वाले पंडितजी ने लग्न को शुभ बताया और बृहस्पति के दिन जन्म लेने के कारण मुझे विद्यानुरागी होने का आशीर्वाद उनसे मिला। मेरे माता-पिता धार्मिक प्रवृत्ति के थे। पिताजी श्रद्धेय पंडित शिवकुमारजी का संस्कृति के प्रति विशेष अनुराग था। मुझे स्मरण है कि वे प्रातः उठकर संस्कृत के श्लोकों का पाठ मधुर स्वर में करते थे। मेरे माता-पिता और ज्येष्ठ भ्राता स्वर्गीय सूर्यदीन वाजपेयी का मेरे आरंभिक जीवन के निर्माण में विशेष योगदान रहा। साहित्य प्रेमी इन्हीं बड़े भाई के साथ मुझे काशी में महाकवि जयशंकर प्रसादजी के दर्शनों का लाभ मिला।

मेरी आरंभिक शिक्षा गांव की पाठशाला में तथा नीवी ग्राम के मिडिल स्कूल में हुई। हाईस्कूल शिक्षा शासकीय विद्यालय, रायबरेली में संपन्न हुई। गणित, संस्कृत और इतिहास मेरे प्रिय विषय थे। तीनों विद्यालयों के अनेक शिक्षकों के नाम मुझे अभी

तक याद हैं। वे अपने योग्य शिष्यों को मेधावी बनाने के लिए कितना श्रम करते थे, इसका स्मरण कर मुझे गौरव का अनुभव होता है! कानपुर के वी. एन. एस. डी. कालेज से मैंने इंटर परीक्षा उत्तीर्ण की। कालेज के प्राचार्य श्री हीरालाल खन्ना समय की कठोर पाबंदी के लिए प्रसिद्ध थे। विद्यार्थियों की क्या मजाल कि वे प्रातः-कालीन प्रार्थना-सभा में, कक्षाओं में या खेल के मैदान में समय से न पहुंचें। देर करने वाले अध्यापकों को भी वे हल्की चपत लगाकर उनके कर्तव्य की याद दिला देते थे। कोई अध्यापक समय से पहले क्लास की छुट्टी करने या देर से पहुंचने का साहस नहीं कर सकता था। उस विद्यालय के अनुशासन से मैं और मेरे अनेक साथी बहुत लाभान्वित हुए। हाईस्कूल में अध्ययन करते समय ही मुझे मेरे गांव से कुछ दूर दौलतपुर ग्राम में आदरणीय आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के दर्शनों का दो बार सौभाग्य मिला।

इंटर पास करने के बाद मैंने प्रयाग विश्वविद्यालय में अध्ययन जारी करने का विचार किया। जब मैं आचार्य द्विवेदीजी का आशीर्वाद प्राप्त करने के लिए, उनके मित्र पंडित प्रयागनारायण तिवारी के साथ, दौलतपुर पहुंचा, तब आचार्यजी ने कहा कि प्रयाग की जगह काशी हिंदू विश्वविद्यालय में उच्च शिक्षा प्राप्त करना मेरे लिए अधिक लाभप्रद होगा।

द्विवेदीजी का सुझाव मेरे लिए आदेश था। काशी जाने का मुहूर्त बन गया। उस समय हिंदू विश्वविद्यालय के कुलपति महामना मदनमोहन मालवीयजी थे। उनके नाम द्विवेदीजी ने एक पत्र मुझे दिया। वह पत्र मालवीयजी को देने के बाद मैं उनका स्नेहपात्र बना। उन्होंने दो विशेष शिक्षाएं मुझे दीं—जीवन को सरल बनाना और पूरी लगन के साथ विद्यार्जन करना। उनकी ये शिक्षाएं मेरे जीवन का आदर्श बनीं।

काशी हिंदू विश्वविद्यालय में मुझे अनेक विभूतियों के दर्शनों और उनसे शिक्षा प्राप्त करने का सौभाग्य मिला। मेरे पूर्व जन्म के संस्कारों के कारण ही यह संभव हो सका। मालवीयजी के अलावा वहां डा. सर्वपल्ली राधाकृष्णन्, आचार्य रामचंद्र शुक्ल, पंडित अयोध्यासिंह उपाध्याय, डा. ए. एस. अलतेकर, पंडित बटुकनाथ शर्मा, आचार्य बलदेव उपाध्याय—जैसे मनीषियों के चरणों में बैठकर मैंने अध्ययन किया। इनमें अब केवल आचार्य बलदेवजी जीवित हैं। उक्त सभी महानुभाव सादा जीवन और उच्च विचार की परंपरा के अनुयायी थे।

काशी में रहने का मुझे यह भी लाभ मिला कि महामहोपाध्याय गोपीनाथजी कविराज, प्रमथनाथ तर्कभूषण, रायकृष्णदासजी जैसे प्रख्यात विद्वानों के संपर्क में मैं आया। भारतीय धर्म-दर्शन और कला का ज्ञान मुझे इन महानुभावों से प्राप्त हुआ। प्राचीन भारतीय इतिहास और

संस्कृति विभाग के अध्यक्ष प्रोफेसर अनंत सदाशिव अलतेकर का तथा कला-मनीषी रायकृष्णदासजी का मेरे भावी जीवन-निर्माण में विशेष हाथ रहा।

१९४२ की एम. ए. परीक्षा में मुझे प्रथम श्रेणी में सर्वाधिक अंक प्राप्त हुए और मुझे श्री दयाराम साहनी स्वर्णपदक प्राप्त हुआ। उसके बाद मेरी प्रथम नियुक्ति राज्य संग्रहालय, लखनऊ में पुरातत्व विभाग के अभिरक्षक पद पर हुई—वेतन था—७५ रुपये मासिक और १२ रुपये मासिक महंगाई भत्ता। शीघ्र ही मेरा चुनाव सर मार्टिमर व्हीलर के पुरातत्व प्रशिक्षण स्कूल, तक्षशिला के लिए हो गया। मैंने १९४४ में डा. व्हीलर के निर्देशन में चार महीने प्रशिक्षण प्राप्त किया। तक्षशिला में सबसे उत्तम किशमिश छह आने में सेर भर मिलती थी। बादाम, पिश्ता आदि मेवे तथा फल भी बहुत सस्ते थे।

उत्तर प्रदेश के पुरातत्व विभाग में मैंने लगभग पद्रह साल काम किया। तीन वर्ष तक लखनऊ में प्रदेश के पुरातत्व अधिकारी के रूप में रहा। प्रदेश के मुख्य मंत्री श्री गोविंद वल्लभ पंत तथा शिक्षा मंत्री डा. संपूर्णानंद इतिहास और संस्कृति के प्रेमी थे। उनके निर्देशन में काम करने में विशेष आनंद आता था।

स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद के लगभग पंद्रह वर्ष देश के सर्वतोमुखी विकास के वर्ष थे। उन दिनों राजनीति में आपाधापी और चारित्रिक दोषों की मात्रा बहुत

प्रो. कृष्णदत्त वाजपेयी

कम थी और नेताओं में देश के प्रति निष्ठा थी। पंडित नेहरू के नेतृत्व में भारत बराबर उन्नति कर रहा था।

१९५८ से १९७७ तक मैं सागर विश्वविद्यालय के प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति और पुरातत्व विभाग का अध्यक्ष रहा। १९६३ में मुझे टैगोर प्रोफेसर बनाया गया। उसके बाद वहीं एक वर्ष तक विजिटिंग प्रोफेसर पद पर रहा। मध्य प्रदेश में मुझे इतिहास और पुरातत्व की अपार स्रोत-सामग्री मिली। इतनी बहुविध सामग्री भारत के किसी अन्य क्षेत्र में प्राप्त नहीं है। यहीं आर्य और अनार्य संस्कृतियों में मेल हुए। यहीं श्रीकृष्ण और श्रीराम की प्रारंभिक मूर्तियों और मंदिरों का निर्माण हुआ। बुंदेलखंड क्षेत्र

में सर्वप्रथम पूज्य रूप में हनुमानजी की मूर्तियां बनायी गयीं। प्रकृति और मानव जीवन के विविध रूपों के दर्शन इस क्षेत्र में मिलते हैं। अपने सहकर्मियों तथा विद्यार्थियों के सहयोग से मैं मध्य प्रदेश में पुरातत्व के क्षेत्र में विशेष अनुसंधान कार्य तथा उसका प्रकाशन करने में सफल हो सका।

सागर विश्वविद्यालय से सेवा-निवृत्ति के बाद मैं इसी नगर में बस गया हूं। अपने जीवन के पिछले सात दशकों का सिंहावलोकन करता हूं तो पाता हूं कि अनेक भौतिक क्षेत्रों में भारत ने उन्नति की है। यह उन्नति आगे भी जारी रहेगी। पर यह देखकर दुःख होता है कि मानव-मूल्यों में बराबर कमी आ रही है। महात्मा गांधी ने इस देश को राजनीतिक स्वतंत्रता दिलाने में प्रमुख भूमिका निवाही। उन्होंने सामाजिक, आर्थिक तथा शैक्षिक पुनरुत्थान की जो योजनाएं बनायी थीं उन्हें कार्यान्वित किया जाता तो यह देश बहुत आगे बढ़ जाता। पर ऐसा नहीं हो सका। यह दुर्भाग्य की बात है कि भारतीय संस्कृति के हितकारी सिद्धांतों को, जिन पर गांधीजी तथा हमारे अन्य मनीषियों की गहरी आस्था थी, भुलाया जा रहा है। नैतिकता की उपेक्षा कर देश सही दिशा में विकास नहीं कर सकता। पं. जवाहरलाल नेहरू से जब मैं पहली बार १९५१ में मिला था तब उन्होंने कहा था कि अपनी आध्यात्मिक विरासत के आधार पर आधुनिक विज्ञान तथा तकनीकी ज्ञान का सहारा लेकर यह देश संसार में अपना उचित स्थान बना सकेगा। नेहरूजी का यह कथन आज की स्थिति में विशेषरूप से विचारणीय है।

—एच/१५, पद्माकर नगर, सागर-४७०००४

□

बोझिल मन

फिर दो बोझिल मन मिलते हैं
टंकण के शब्दों से
जाने पहिचाने पथ पर।

मैं पेन्डुलम-सा झूमता रहा
कुतुबनुमा-सा ईस्ट में रहता
धूल भरी फाइलों-सी
कुंठायें पीता रहा।

उधर तुम रिमार्कों-सी उड़ती रहीं,
कालबेल-सी कूजती रहीं,
कमेन्ट-सी तेवरें बदलती रहीं।

सायं दोनों ही
शिकनों को झाड़ते—
कागजी मुस्कानों में,
फिर चल देते
एकाकी मूक सिंदवाद जैसे—
निज जाने-पहिचाने पथ पर।

□ दीपक कृष्ण वर्मा

—८ बी, राजकीय कालोनी, प्रतापगढ़, उ. प्र.

विदेशी कहानी

गुदगुदाती यादों के भंवर

□ ग्राहम ग्रीन

बड़ी शांति और निश्चितता अनुभव कर रहा था, फिलिप बयालीस साल की उम्र में दूसरा विवाह करके।

शादी की सब रस्मों में उसने नौजवानों की भांति बड़ी खुशी के साथ भाग लिया। बड़ा हल्का महसूस कर रहा था वह।

हां, यह खुशी थोड़ी तब जाकर कम हो गयी, जब उसकी पहली पत्नी जोसेफाइन की आंखों में तब अनायास आंसू आ गये थे, जब उसने उसे उसकी दूसरी पत्नी के साथ गिरजे से बाहर आते देखा था।

कोई जरूरत नहीं थी, जोसेफाइन की आंखों में आंसू आने के, कारण शादी उसने अपनी पहली पत्नी से स्वीकृति लेकर ही की थी। और, जूलिया से भी उसने कुछ नहीं छिपाया था। बता दिया था कि किस प्रकार उसने पिछले दस वर्षों में कैसे जोसेफाइन ने अपने चिड़चिड़े और ईर्ष्यालु स्वभाव के कारण उसका जीना दूभर कर दिया था।

मगर जूलिया की हमदर्दी पूरी तरह जोसेफाइन के साथ ही थी। वह फिलिप से कहती, 'वे शंकाकुल थीं न, इसीलिए खुद परेशान रहती थीं, और खुद अपने आप को भी परेशान रखती थीं। आप देखते जाइये, वे जल्दी ही मेरी बड़ी पक्की सहेली बन जायेंगी।'

'मुझे तो इससे संदेह है, प्रिये,' फिलिप कहता।

'क्यों, संदेह क्यों है? आप यह सीधी-सी बात क्यों नहीं समझते कि जिसने आपको प्यार किया था, उसे मैं भी प्यार किये बिना नहीं रह सकती।'

'प्यार? बड़ा बेरहम प्यार था उसका।'

'हां, शायद आखिरी दो-तीन सालों में हो गया हो, मगर आप दोनों एक साथ कभी सुखी भी तो रहे होंगे न।'

'हां, मगर अब मैं पूरी तरह यह भूल जाना चाहता हूं कि मैंने तुम्हारे अलावा कभी किसी को प्यार किया था।'

फिलिप को जूलिया की उदारहृदयता पर बड़ा आश्चर्य होता था।

ooo

हनीमून के सातवें दिन जब वे समुद्र तट पर स्थित एक छोटे से रेस्तरां में बैठे थे, फिलिप जेब से जोसेफाइन का एक पत्र निकालकर चुपके से देखने लगा, जो उसे एक दिन पहले ही मिला था। पत्र का जिक्र उसने जूलिया से नहीं किया था यह सोचकर कि शायद जूलिया को इतनी जल्दी जोसेफाइन का पत्र उसके नाम आया देखकर अच्छा न लगे। मगर, वह यह

ज़रूर सोच रहा था कि अपनी आदत के मुताबिक जोसेफाइन से इतनी जल्दी भी चुप न रहा गया! उसे याद आ रहा था कि जोसेफाइन के शब्द भी उसके वालों की भांति छोटे, साफ और काले थे। जूलिया के वाल सुनहरे थे।

और, अव न जाने जोसेफाइन की किस तरकीव की वजह से वह पत्र, जिसे वह अपने और जूलिया से गुप्त रखना चाहता था, उसके हाथों आ गया था, और वह परेशान था कि उसे कैसे छिपाये?

'किसका पत्र है, डार्लिंग? डाक कब आयी?' जूलिया ने पूछा।

'जोसेफाइन का पत्र है। कल आया था यह।'

'और तुमने उसे अभी तक खोला भी नहीं?' जूलिया के लहजे में आश्चर्य था, शिकायत नहीं।

'मैं...मैं उसके वारे में सोचना भी नहीं चाहता।'

'मगर, डार्लिंग, शायद वे वीमार हैं।'

'नहीं।'

'शायद आर्थिक संकट में हों।'

'वह एक नया फैशन डिजाइन वनाकर एक दिन में इतना कमा लेती है, जितना मैं एक कहानी लिखकर भी नहीं कमा सकता।'

'डार्लिंग, इतने निष्ठुर न वनो। हम लोग खुश हैं। हमें निष्ठुर नहीं होना चाहिये, उदार होना चाहिये।'

फिलिप ने लिफाफा खोलकर पत्र पढ़ना आरंभ किया। पत्र में कोई शिकायत नहीं की गयी थी। वह अत्यंत प्रेम पूर्वक लिखा गया था। उसने मुंह विगाड़कर पढ़ना आरंभ किया—'प्रिय फिलिप! विदाई के अवसर पर मैं नहीं आयी ताकि तुम दोनों की खुशी मुझे देखकर कम न हो लेकिन, यकीन मानो, मैं हृदय से तुम दोनों की खुशी की कामना करती हूं। जूलिया के पास यौवन भी है, और सौंदर्य भी। उसकी देखभाल मन से करते रहना। तुम्हें प्यार और देखभाल करना आता है, यह मैं अपने अनुभव से जानती हूं। जूलिया को देखकर मुझे आश्चर्य हुआ था कि तुमने मुझे छोड़कर, उसे अपनाने में इतनी देर क्यों लगायी? ऐसे कामों में देर नहीं होती, फिलिप डियर!

'मेरे वारे में कुछ जानना चाहोगे? अधिक नहीं, तो थोड़ी चिंता तुम्हें जरूर होगी, मेरे वारे में। इधर एक नया काम मिला है, जिसमें पैसा भरपूर मिलेगा। वहुत ज्यादा व्यस्त रहती हूं, इसलिए ऐसे-वैसे ख्याल मन में भी नहीं आते। एक स्केच रह गया था, घर में (माफ़ कर देना, कभी-कभी अपने पुराने घर को, इस तरह याद करने में), वहीं मिला, जहां उसके मिलने की उम्मीद थी। उसी दराज में, जिसे हम दोनों 'आइडिया वैंक' कहा करते थे। तुम्हारी उसी अधूरी कहानी के पत्रों के वीच में, जो तुमने पिछले साल गर्मियों में लिखनी शुरू की थी।

'इस तरह तो लिखे ही जाऊंगी, और लिखना कभी खत्म नहीं होगा। असल में

तो मुझे सिर्फ इतना कहना था कि तुम दोनों सुखी रहो, हमेशा सुखी रहो।—प्यार सहित—जोसेफाइन।'

०००

पत्र, जूलिया को देते हुए, फिलिप ने सिर्फ इतना कहा, 'शुक्र है!' लेकिन, जूलिया ने पूछा, 'यह पत्र तुम्हारे लिए था, तुमने मुझे क्यों सुनाया?'

'नहीं, नहीं, यह हम दोनों के लिए था,' फिलिप को बड़ी खुशी हो रही थी कि अब उसके और उसकी पत्नी के बीच कोई दीवार नहीं है। पिछले दस वर्ष कितनी मानसिक परेशानी में गुज़ारे थे उसने! जोसेफाइन को गलतफहमी न हो जाये, वह नाराज न हो जाये, गुमसुम न हो जाये, इसलिए उससे संभल-संभलकर बात करनी पड़ती थी। कितने सारे राज जमा हो गये थे उसके पास!

और अब? अब कितना आराम है!, कोई राज नहीं है, जिंदगी में! कितनी सांत्वनापूर्ण है यह अनुभूति कि जूलिया उसके सब दोषों को, सब खामियों को सहृदयतापूर्वक स्वीकार कर लेगी।

उसने कहा, 'कल यह पत्र खोलकर दिखाना भूल गया था। कैसा बेवकूफ़ हूं मैं! पर, आगे से ऐसी गलती नहीं होगी।'

पत्र पूरा पढ़कर, जूलिया ने कहा, 'कितनी अच्छी हैं वे! कितना प्यारा पत्र लिखा है! मैं... ... कभी-कभी उनके बारे में सोचने लगती हूं। और, सच तो

यह है कि दस साल के वैवाहिक जीवन के बाद, कौन महिला अपने पति से अलग रहना चाहेगी ? कम से कम, मैं तो नहीं ।'

लौटते समय दोनों टैक्सी में साथ-साथ बैठे। दोनों के कंधे मिले हुए थे, मगर फिलिप को लग रहा था, मानों जूलिया अव उसके उतनी नजदीक नहीं है, जितनी पहले थी।

उस रात जूलिया ने अपने पति से कहा, 'उनके साथ पत्र-व्यवहार जारी रखना ठीक होगा।'

'जोसेफाइन के साथ ? हर्गिज नहीं।'

'डार्लिंग, मैं तुम्हारी भावनाओं की कद्र करती हूं, लेकिन इतना प्यारा पत्र अनुत्तरित नहीं रहना चाहिये।'

'बस, एक पिक्चर-कार्ड भेज दो।'

०००

लंदन वापस आने पर उन्हें मौसम का फर्क एकदम महसूस हुआ। हलकी, हलकी सर्दी पड़नी शुरू हो गयी थी। टैक्सी में घर आते हुए फिलिप ने कहा, 'घर पहुंचते ही, बिजली की अंगीठी जला दें। फौरन गरमी आ जायेगी।'

लेकिन, फ्लैट खोलते ही उन्होंने पाया कि अंगीठी पहले ही जली हुई थी। इतना ही नहीं, फ्लैट रोशनी से जगमग था।

'किसी परी का काम है,' जूलिया ने कहा।

'परी-वरी नहीं, मुझे मालूम है, यह काम किसका है,' फिलिप ने अंगीठी के ऊपर रखा हुआ, वह लिफाफा साफ-साफ देख लिया था, जिस पर काली स्याही में साफ़ साफ़ लिखा था—श्रीमती फिलिप कार्टर। पत्र में लिखा था—

'प्रिय जूलिया,

इस संबोधन से नाराज़ तो नहीं हो न ! हम दोनों ने एक ही पुरुष से प्रेम किया है, इसलिए हममें एक यह समानता तो है ही। आज सुबह ठंड बहुत थी, और मुझे मालूम था कि गरम जगह से आने पर तुम्हें कैसा लगेगा। मेरे पास फ्लैट की एक चाबी थी, जिससे फ्लैट खोलकर, उसे गरम करने की गुस्ताखी मैंने कर दी है। मगर, यकीन दिलाती हूं, ऐसा फिर कभी नहीं करूंगी। यकीन को पुख्ता करने के लिए चाबी दरवाजे पर बिछे पायदान के नीचे छोड़े जा रही हूं। एयर-पोर्ट फोन करके देख लूंगी। अगर जहाज़ देर से आया, तो फिर अंधेरा और ठंडा कर जाऊंगी। (बिजली की दरें बहुत ऊंची हैं, आजकल)। अपने नये घर में सुखी, गरम और स्वस्थ रहो। इस कामना के साथ, सस्नेह—जोसेफाइन।'

'पुनःश्च: काफी का डिब्बा खाली था। 'ब्लू माउंटेन काफी' का एक पैकेट छोड़े जा रही हूं। फिलिप को यही काफी पसंद है।'

जूलिया ने हंसते हुए कहा, 'मानना पड़ेगा, उन्हें हर बात का खयाल रहता है।'

'अब वह हमारा खयाल छोड़ दे, मैं तो यही चाहता हूं।'

'वे खयाल न रखतीं, तो न फ्लैट गरम मिलता, न काफी।'

'मेरा तो खयाल है कि वह यहीं आस-पास है, और किसी भी क्षण प्रकट हो जायेगी।'

'हमेशा उनकी बुराई ही करोगे। प्रकट होना होता, तो चाबी यहां क्यों छोड़ जातीं ?'

'उसका कोई भरोसा नहीं है ? डुप्लीकेट चाबी बनाकर रख ली होगी।'

०००

कई सप्ताह गुज़र गये। हंसी-खुशी और चितारहित क्षणों वाले सप्ताह। दोनों को एक दूसरे को अपने सफल वैवाहिक जीवन के लिए श्रेय देने का आनंद मिलता।

ऐसे ही किसी एक क्षण में जूलिया ने अपने पति से पूछा, 'यह बताओ कि तुम जोसेफाइन से क्यों अलग हुए ? वे तो तुम्हें आज भी इतना चाहती हैं।'

'शुरू से ही मुझे लगा था कि हम दोनों का निवाह नहीं हो सकेगा।'

'क्या हम दोनों का निवाह हो सकेगा।'

'अगर हम दोनों का निवाह न हुआ, तो किसी भी पत्नी का निवाह कभी नहीं हो पायेगा।'

नवंबर की एक शाम को फिलिप कार्टर ने अपना पुराना 'आइडिया बैग' खोला। इस दराज में वह अधूरे वार्तालापों और कहानियों के आइडिया रख देता था, और जोसेफाइन अपने डिजाइनों के स्केच रख दिया करती थी।

दराज खोलते ही उसकी निगाह एक पत्र पर पड़ी, जिस पर जोसेफाइन ने बड़े-बड़े अक्षरों में लिखा था, 'अत्यंत गोपनीय।' बड़ी अरुचि और बेरुखी के साथ उसने पत्र पढ़ना आरंभ किया,

'प्रिय ! मुझे यहां पाने की आशा नहीं कर रहे थे न ! मगर दस साल की, दिन में सैकड़ों बार गुड मार्निंग, गुड नाइट, या सिर्फ कैसे हैं ? ठीक। कहने की आदत का यह असर है। भगवान तुम्हारा भला करे, प्रिय ! बहुत-बहुत प्यार के साथ, तुम्हारी जोसेफाइन।'

उसने गुस्से में दराज़ इतनी ज़ोर से बंद की कि दूसरे कमरे में बैठी जूलिया ने आश्चर्य के साथ पूछा, 'क्या हुआ, डार्लिंग ?'

'जोसेफाइन, और क्या ?'

पत्र पढ़कर, जूलिया ने कहा, 'बेचारी जोसेफाइन ! तुम उन्हें कभी नहीं समझ पाओगे। यह क्या ? पत्र फाड़ क्यों रहे हो ?'

'और क्या करूं ? उसके पत्रों का संग्रह करना शुरू कर दूं ?'

'पत्र फाड़ना तो बेरहमी होगी।'

'बेरहमी ? तुमने उसकी बेरहमी देखी होती तो ऐसा कभी न कहतीं। उसे गुस्सा आता था तो वह घायल शेरनी की तरह, सबको नोचने-खसोटने लगती थी।'

'स्त्री को जब यह भरोसा नहीं रहता कि पति उसे चाहता है तो उसकी यही हालत हो जाती है। उनकी इस स्थिति के लिए मैं अपने को पूरी तरह जिम्मेदार मानती हूं।' इधर कुछ दिनों से जब भी जोसेफाइन का जिक्र होता, तो इसका अंत जूलिया की इसी टिप्पणी से होता था।

दो दिन बाद, सुबह उठकर जूलिया ने कहा, 'इस गद्दे को बदलना होगा। बीच से कितना ढीला पड़ गया है।'

'हूं मैंने इस पर ध्यान ही नहीं दिया था,' फिलिप ने कहा।

'गद्दा हमेशा बदलते रहना चाहिये।'

'जोसेफाइन तो हमेशा बदलती रहती थी इसे।'

दोनों गद्दे को लपेटकर नीचे बदलने लगे। तभी, फिलिप को स्प्रिंग पर पड़ा एक और पत्र दिखायी दिया। निश्चय ही जोसे-फाइन का था। वह इस पत्र को चुपके से उठाकर, जेब में रख लेना चाहता था कि जूलिया ने उसे ऐसा करते देख लिया, और पूछा—'क्या है?' फिलिप ने नाराजगी से कहा, 'आपकी जोसेफाइन है!'

जूलिया ने पत्र पर अपना नाम पढ़कर कहा, 'मगर यह पत्र तो मेरे नाम है। तुम इसे मुझसे क्यों छिपाना चाहते थे? भूल गये अपना वायदा कि मुझसे कुछ भी नहीं छिपाओगे।' पत्र जूलिया को देते हुए, फिलिप ने कहा, 'जब वायदा किया था, तब यह खयाल नहीं था कि जोसेफाइन हमें इस प्रकार तंग करेगी।'

पहली बार, जोसेफाइन का पत्र खोलने में जूलिया को हिचकिचाहट महसूस हुई। 'बड़ा अजीब लगता है, ऐसी जगह से पत्र पाने में। संयोग तो नहीं है यह।'

'नहीं, इसे संयोग नहीं कह सकते।'

पत्र पढ़कर, उसे फिलिप को देते हुए, जूलिया ने कहा, 'ठीक तो है! एकदम स्वाभाविक!'

पत्र में लिखा था—

'प्रिय जूलिया,

हनीमून मनाने यूनान जातीं तो कितना अच्छा रहता! फिलिप को यह बताने की ज़रूरत नहीं—कि (ओह, लेकिन, तुम तो एक दूसरे से कुछ छिपाते हो नहीं न!) कि वहां फ्रांस से ज्यादा खुशनुमा मौसम रहता है। फिलिप के साथ मैंने भी कई बार यूनान जाने की योजना बनायी थी, लेकिन खर्च का सवाल आड़े आ जाता था।

'आज अपना एक स्केच खोजने आयी, तो देखा कि गद्दा काफी दिनों से बदला नहीं गया है। कारण अपने विवाहित जीवन के अंतिम दिनों में ऐसी बातों की ओर न मेरा ध्यान जाता था, न फिलिप का। फिर भी, मुझे खयाल आया कि हनीमून से वापस आने के बाद, ढीले गद्दे पर सोना उन्हें अच्छा नहीं लगेगा। गद्दा हफ्ते में एक बार ज़रूर बदलती रहना, नहीं तो वह बीच से फैल जायेगा। हां, गरमियों के परदे मैंने धुलने दे दिये हैं, और सर्दियों के लगा दिये हैं।

क्लीनर का पता है—१५३ ब्राम्पटन रोड। प्यार के साथ—जोसेफाइन।'

'कितना अच्छा किया, उन्होंने यह पत्र लिखकर! मुझे तो न गद्दों के बारे में पता था, न परदों के बारे में' जूलिया ने कहा।

'ऐसे न जाने कितनी पुराने पत्र इस फ्लैट में छिपे पड़े होंगे। फ्लैट की पूरी खोज करनी पड़ेगी।'

'तुम बेकार बात का बतंगड़ बना रहे हो मालूम नहीं, तुम उनसे इतना डरते क्यों हो, आखिर ?'

'या खुदा !'

जूलिया फौरन वहां से चली गयी, और वह अपने काम में लग गया।

दिन भर, उसकी यही कोशिश रही कि उसे जोसेफाइन का खयाल बिलकुल न आये। इसलिए, वह लगातार अपने काम में व्यस्त रहा।

कुछ दिन बाद, फोनोग्राम भेजने के लिए उसने टेलीफोन डायरेक्टरी उठायी। खोलते ही उसे एक पृष्ठ पर वे सब नंबर साफ-साफ टाइप किये हुए मिल गये, जिसकी आवश्यकता उसे प्रायः पड़ती रहती थी।

जूली ने इस सूची को देखते ही कहा, 'यह तो कमाल की दीदी निकला ! जो चाहिये, उनकी कृपा से हाजिर हो जाता है। इसे फोन के साथ लगा लें।'

'शुक्र है, उसने इस बार कोई मजाक नहीं किया।'

'डार्लिंग ! इतने बुद्धू मत बनो। मुझे तो अभी तक उनकी किसी बात में कोई मजाक दिखायी नहीं दिया। सब बातें बड़े प्रेम और आत्मीय ढंग से कही गयी थीं। तुम्हें तो न मालूम क्यों उनकी हर मेहरबानी मज़ाक मालूम पड़ती है।'

'मेहरबानी ?' आश्चर्य से फिलिप ने पूछा।

'तुम अपराध-भावना से ग्रस्त हो, इसीलिए तुम उनकी मेहरबानियों को मेहरबानियां नहीं मानते।'

ooo

शाम को डाकिये के आने की आवाज सुनकर जूलिया ने लेटरबॉक्स खोलकर, पाया कि एक कार्ड द्वारा महिलोपयोगी पत्रिका 'वोग' के व्यवस्थापकों ने उसे सूचित किया है कि कुमारी जोसेफाइन ने उसके नाम पर एक साल का चंदा भर दिया है।

'कितनी अच्छी हैं वे !' जूलिया ने गद्-गद् होकर कहा।

'उसने इस पत्र को अपने कुछ डिजाइन बेचे थे। देखो, इस पत्र को मेरी नज़र से दूर ही रखना।'

'बच्चों जैसी बातें क्यों करने लगते हो ? उन्होंने तो तुम्हारी किताबें पढ़नी बंद नहीं की हैं।'

'मैं चाहता हूं कि आने वाले कुछ हफ्तों में मेरे-तुम्हारे बीच में कोई न आ पाये। क्या यह मुमकिन है ?'

'तुम बहुत स्वार्थी हो।'

फिलिप को सहसा बड़ी थकान अनुभव होने लगी। पर, थकान के साथ-साथ वह एक अजीब तृप्ति और एक राहत-सी भी महसूस कर रहा था।

रात को उसने अपना मौन भंग करके, ब्राउनिंग की कविताओं का संग्रह हाथ में ले लिया, और कविता की यह लाइन जूलिया को सुनाने लगा— 'आज रात वृद्धावस्था का सा मौन मुझ पर व्याप्त है।'

'यह किसकी पंक्ति है ?' जूलिया ने पूछा।

'ब्राउनिंग का तो मैंने आज तक नाम भी नहीं सुना था। मगर, अच्छे कवि लगते हैं। सुनाओं न उनकी कुछ और कविताएं।'

'जोसेफाइन को भी ब्राउनिंग पसंद थे, और वह उनकी कविताएं अक्सर मुझसे सुना करती थी,' उसने जूलिया को ठेलते हुए कहा।

'तो, क्या हुआ., डार्लिंग? तुम्हारे और उनके बीच जो कुछ घटा, उसमें से कुछ की पुनरावृत्ति तो हम दोनों के बीच जरूर होगी ही।'

'ब्राउनिंग की जो कविताएं अब तुम्हें सुना रहा हूं, वे मैंने जोसेफाइन को कभी नहीं सुनायी थीं। उसे प्यार करता था, मगर जानता था कि यह प्रेम स्थायी नहीं है। शायद इसीलिए नहीं सुना पाया...

'अच्छी तरह जानता हूं कि क्या करूंगा,
शिशिर ऋतु की लंबी अंधेरी शामों में'

(वह पढ़े जा रहा था–)

जब दो जीवन जुड़ते हैं,
तब प्रायः दिल का कोई दाग
उन जुड़ी हुई जिंदगियों पर, रह ही जाता है
दोनों के एक हो जाने पर भी
उन पर किसी तीसरे की छाया पड़ जाती है
और कोई एक निकटस्थ दूर हो जाता है।

... तभी उसने अगला पृष्ठ पलटा। और, उसे दिखायी पड़ा, जोसेफाइन का एक और पत्र–

'फिलिप प्रियतम!

यह पत्र तुम्हारी और मेरी प्रिय पुस्तक के पृष्ठों में–सिर्फ तुम्हें 'गुड नाइट' कहने के लिए रख रही हूं। खुशकिस्मत हैं, हम दोनों, अलग होकर भी, एक सी यादों के जरिये, कभी-कभी मिल लेते हैं, मिलते रहते हैं। प्यार–जोसेफाइन।'

फिलिप ने क्रोध में वह पुस्तक और पत्र फर्श पर फेंक दिये।

ooo

पत्र उठाकर, उसे पढ़ते हुए, जूलिया ने कहा, 'उनके बारे में तुम इस तरह नहीं सोच सकते!' उसके स्वर की तेजी ने फिलिप को चकित कर दिया। 'क्या गलत किया है उन्होंने यह पत्र लिखकर? उनकी यादों से इतनी नफ़रत क्यों हो रही है तुम्हें? फिर आगे चलकर, हमारी-तुम्हारी यादों का क्या परिणाम होगा? ऐसा ही न!'

उस रात को वे दोनों अलग-अलग सोये। विवाह के बाद यह पहली रात थी, जब दोनों ने एक दूसरे का स्पर्श भी नहीं किया था। दोनों कुछ ज्यादा सो भी नहीं पाये।

सुबह को फिलिप कार्टर को फिर जोसेफाइन का एक पत्र मिला। इस बार ऐसी जगह में, जहां उसके मिलने की पूरी-पूरी संभावना थी। उन फुलस्केप कागजों के बीच जिन पर वह प्रायः कहानियां लिखा करता था।

पत्र की प्रारंभिक पंक्ति थी–

'प्रिय!'

कोई एतराज तो नहीं है, न, तुम्हें मेरे द्वारा इस सुपरिचित संबोधन के प्रयोग पर...'

[प्रस्तुति : हरि]

☐

क्या आपके बाल झड़ते हैं ?

□ डॉ. हेमेन शाह

अगर यह प्रश्न आप पूछिये तो सौ में से नव्वे व्यक्तियों का उत्तर हां में होगा तथा स्त्रियों का तो विशेष तौर से। सिर के वाल का झड़ना आखिर क्या है ? ये क्या दर्शाते हैं ? इनके कारण क्या हैं ? और इसके लिए क्या किया जा सकता है ? हमें इस पर विचार-विनिमय करना होगा।

शारीरिक दृष्टिकोण से देखा जाय तो सिर के वाल का कोई काम नहीं है, ये मात्र आभूषण हैं सुंदरता के लिए (और आभूषण ही कीमती होता है)। जब किसी पतली वस्तु की उपमा देनी होती है तो कवि वालों का आश्रय लेते हैं और कहते हैं वाल जितनी पतली। किंतु कवि महोदय यह कहां जानते हैं कि वाल में भी आठ परतें होती हैं।

वाल है क्या ?

वाल केरेटीन नामक प्रोटीन से निर्मित होता है। सिर के वाल नियमित ०.३५ मि. मी. लंबे होते हैं। इस प्रकार की वृत्ति मुख्य रूप से हार्मोन्स और पोषण तत्व पर आधारित होती हैं। वीस-तीस वर्ष की उम्र में सिर पर करीब एक लाख वाल होते हैं, क्षेत्रफल के हिसाब से देखें तो वर्ग से. मी. अनुमानतः ६१५। आयु बढ़ने के साथ वाल कम होने लगते हैं और अस्सी वर्ष की आयु में संभवतः ४३५ वाल होते हैं।

वालों की श्रेणियां

१. एनाजन : बढ़ने की श्रेणी।

२. केटाजन : मध्य की श्रेणी।

३. टेलोजन : रुकने की श्रेणी।

सिर के वाल में एनाजन तीन वर्ष, केटाजन तीन सप्ताह और टेलोजन तीन माह जितने होते हैं। यह समझने योग्य वात है। जो केश तीन वर्ष तक बढ़ते हैं वे दूसरी और तीसरी श्रेणियों में जाते हैं। जब तक तीसरी श्रेणी खत्म होती है तब ये बाल जड़ से अलग हो जाते हैं। और, तब बिलकुल नये उग आये वाल की बढ़ने की श्रेणी शुरू होती है। ये गिरे हुए वाल की जगह संभालते हैं। इस तरह गिरे हुए ये वाल हाथ में आ जायें तो इसका यह अर्थ नहीं कि सिर के वाल कम हो गये।

आप कितनी वार यह सोचते हैं कि भौंहों के वाल सिर के वाल इतने लंबे क्यों नहीं होते ? इसका कारण यह है कि भौहों के वाल के बढ़ने की श्रेणी (एनाजन) ६ माह और रुकने की श्रेणी (टेलोजन) भी ६ माह होती है। बढ़ने की श्रेणी (एनाजन) छोटी होने से वाल लंबे होने के पहले ही झर जाते हैं।

रुकने वाली श्रेणी में केश अपने मौलिक

रंग में नहीं होते और थोड़ा भी जोर देकर खींचने पर उखड़ जानेवाले प्रकार के होते हैं। जब स्वस्थ मनुष्य के वाल भी गिरते हैं तो प्रश्न यह उठता है कि चौवीस घंटों में कितने वाल झर सकते हैं? सिर के एक लाख वालों में से दस प्रतिशत अर्थात् दस हजार वाल रुकने की स्थिति में होते हैं। ये स्थिति तीन महीने (करीव सौ दिन) तक रहती है। अगर विश्लेषण करें तो रोज करीव सौ वाल रुकनेवाली स्थिति (टेलोजन) के अंतिम चरण में होते हैं। अर्थात् वाल के या किसी अन्य रोग के होने पर भी रोज करीवन सौ वाल तक झड़ सकते हैं।

इस प्रकार यह रही प्राकृतिक वाल झड़ने की वात। अव हम अप्राकृतिक रूप में वाल झड़ने के कारण देखेंगे।

टेलोजन एफ्लूवियम

यह परिस्थिति उस समय कही जायेगी, जव वीस प्रतिशत वाल एक साथ रुकने की स्थिति में आ जायें। मान लीजिये कि एक साथ तीस प्रतिशत वाल इस स्थिति में आ गये तो इस श्रेणी के अंत में इतना ही कि तीन माह के वाद एक साथ ये सभी वाल झड़ जायेंगे। इस समय रोज सौ से हजार तक वाल झड़ सकते हैं। टेलोजन एफ्लूवियम प्रसव के वाद, वुखार, टाइ-फाइड, मलेरिया, शारीरिक अथवा मान-सिक आघात, शल्यचिकित्सा (आपरेशन), अत्यधिक आहार नियंत्रण तथा लंवे समय की विमान-यात्रा से भी हो सकता है।

पोषण का अभाव

मुख्यतया लोहतत्व के प्रोटीनों और कुछ अंश में विटामिनों से युक्त आहार की अपूर्णता से केश झड़ जाते हैं। वालों की जड़ और मध्यभाग दोनों इससे कमजोर पड़ जाते हैं, वाल अपने मूल में से या मध्य में ही टूट सकते हैं।

संभाव्य कृत्रिम क्षति

केशसज्जा तथा धर्म, रीति-रिवाज एवम् फैशन पर आधारित क्रियाएं वालों पर संपन्न होती हैं। वालों को खींचकर वांधने से वाल का मूल निर्वल हो जाता है और धीरे-धीरे वाल गिरने लगते हैं जिसका प्रारंभ किनारे पर के केश से होता है। यह प्रकार वहुधा पोनीटेल रखनेवाली युवतियों तथा सिख युवकों में दृष्टिगोचर होता है।

'ब्लीचिंग' अथवा वाल के 'वीविंग' कराने से वालों में रासायनिक तत्वों के सम्मिश्रण से परिवर्तन होता है और उनके टिकाऊपन में कमी आ जाती है। रोलर्स, ब्लोचर्स अथवा डायर्स उपयोग में लाने से भी वालों को क्षति पहुंचती है। आज आप यह सव करेंगे तो कल आपके वाल नहीं झरेंगे, किंतु धीरे-धीरे दुष्परिणाम सामने आने लगेगा और एक निश्चित समय वाद केश इन सव क्रियाओं को सहन करने में असमर्थ हो जायेंगे एवं वे स्वयं झड़ने लगेंगे।

वहुत लोगों में अधिक मात्रा में तेल डालकर जोर से सिर की मालिश करने की आदत होती है। इससे लोग यह समझते

हैं कि जोर से मालिश करने से बाल की जड़ को पोषक तत्व मिलेगा, किंतु यह मान्यता भ्रम है, मिथ्या है। जोर से तेल मलने पर भी ये बाल की जड़ तक नहीं पहुंचते और उल्टे इससे बाल को नुकसान होता है।

बाल को रोज साबुन से नहीं धोना चाहिये। बाल धोनेवाले साबुन अथवा शैम्पू का उपयोग करें तो बेहतर है। कपड़े धोनेवाले साबुन का उपयोग तो कभी नहीं करना चाहिये।

बालों को नुकसान के कारण

थायरोइड ग्रंथि के हार्मोन्स कम या ज्यादा मात्रा में हों तो भी बाल गिर सकते हैं। काबू में न हो तो डायबिटिस से भी ऐसा हो सकता है।

कैंसर के उपयोग में आनेवाली दवाओं और रक्त न जमने देने वाली दवाओं के सेवन से भी बालों को नुकसान होता है और बाल झड़ने लगते हैं। विटामिन 'ए' भी अधिक प्रमाण में सेवन करने से बाल झड़ सकते हैं।

गंजापन वंशानुगत

पिता का सिर अगर गंजा है तो अधिक समय बीतने पर पुत्र में भी इस प्रकार गंजापन पाया जाता है। इस प्रकार का गंजापन वंशानुगत होता है। स्त्रियों में गंजापन नहीं पाया जाता है, क्योंकि इस वंश परंपरागत लक्षण के प्रकट होने के लिए टेस्टोस्टरोन (पुरुष हार्मोन्स की) जरूरत होती है। पिता को भी अमुक आयु में गंजापन आया इसका मतलब यह नहीं कि पुत्र को भी इसी आयु में गंजापन आये। अमुक आयु से अधिक में भी यह संभव है तथा कई बार गंजापन नहीं आये यह भी संभव है।

चिंता करने से बाल झड़ते हैं यह भी बहुत लोग मानते हैं। किंतु कितनी ही बार इसका उल्टा होता है। कितनी स्त्रियां अपने बाल झड़ने से चिंतित हो जाती हैं।

'उंदरी' का रोग टिनिया कैपिटिस

यह रोग मस्तिक पर होने वाला दाद है। ज्यादातर यह रोग बालकों को होता है। जहां-जहां बच्चों को टोपी पहनाने का रिवाज है वहां-वहां अधिक मात्रा में दिखायी पड़ता है। सिर के एक भाग से बाल झड़ जाते हैं।

ये भाग लाल हो जाते हैं और उनमें छोटी-छोटी फुंसियां निकल आती हैं। और उनमें से मवाद भी निकलने लगता है।

एलोपेशिया एराटा

इस रोग में भी सिर के अमुक भाग से बाल निकल जाते हैं पर वह भाग लाल नहीं होता है। तथा यह रोग बालकों की तरह वयस्कों में भी दिखायी देता है।

अन्य कारण

१. हेयर शाफ्ट डिफेक्ट्स : यह बहुत कम प्रत्यक्ष दृष्टिगत होता है अतएव निदान के लिए इसे सूक्ष्मदर्शक यंत्र से देखना पड़ता है।

२. यकृत (लीवर) की बीमारियां।

रूसी और बाल का गिरना

रूसी या 'खोडा' से बाल गिरते हैं यह भी एक मान्यता है। परंतु यह मान्यता सही नहीं है। बहुधा पर्याप्त मात्रा में रूसी होने पर भी केश नहीं गिरते। रूसी या खोडा होना और बाल का गिरना यह पृथक् प्रश्न है। कई बार एक ही व्यक्ति में ये दोनों दर्शित होते हैं।

बाल झड़ते हों तो. ..

बालों को सात दिन शैम्पू, साबुन, तेल तथा ड्रायर्स के उपयोग से दूर रखें। चौबीस घंटों में जो बाल कंघी के साथ निकले उन्हें कागज की एक थैली में एकत्र करें और सात दिन तक यह क्रिया चालू रखें। तत्पश्चात् एकत्रित बालों को गिनें। अगर कागज की थैली में एकत्रित बाल सौ से अधिक हों तब डाक्टरी इलाज और उसके साथ ही सूक्ष्मदर्शक यंत्र से बालों का परीक्षण आवश्यक हो जाता है।

यदि सिर के अमुक भाग से बाल निकल जायें और वहां गंजापन आ जाय तो उसका भी डाक्टरी परीक्षण, निदान और इलाज जरूरी है। केशों को जो कृत्रिम क्षति पहुंचायें वे सारी क्रियाएं बंद करनी पड़ेंगी। बाल क्यों झड़ते हैं। इन कारणों का पता लगाकर उसका उपचार करना बहुत ही आवश्यक है।

बालों की स्वस्थता के लिए

(१) पौष्टिक आहार लें (२) तेल लगायें पर जोर से बाल को घिसे नहीं (३) बालों को रोज साबुन से न धोयें (४) बालों को खींचकर न बांधें (५) ब्लोअर्स, डायर्स और रोलर्स का सतत उपयोग न करें। (६) लगातार ब्लीचिंग व वीविंग न करायें और (७) चिंता न करें।

—दार-उल-मुलुक, ग्राउंड फ्लोर २६, पं. रमाबाई मार्ग, गांवदेवी, बंबई-७

गीत

□ मधुकर खरे

रहने दो शब्दहीन
इस काली रात को।
निदियारे क्षितिजों को
व्यर्थ मत उलहने दो,
नखतों को अपनी
एकान्त व्यथा सहने दो,
कहने दो रामकथा
शुष्क सुधि प्रपात को।
अस्त–व्यस्त, बिखरे
संदर्भों के शोध में,
प्रश्न सब निरर्थक हैं,
इस विचार बोध में,
मत खोदो टूटे–
संबंधों की बात को।
भाषा की सीमा है
दोष नहीं व्यक्ति का,
चुप्पी ही माध्यम है
सच्ची अभिव्यक्ति का,
झेलो कुछ और अभी
इस झंझावात को।

—मुख्य मार्ग, लालगंज, रायबरेली, उ. प्र.

□

शोर पानी का जंजीरें पानी की

— दिनेश शुक्ल —

रास्ते अनजान
पुल
टूटा नदी का।

भर गया
अंधे कुंए में
शोर पानी का।

बादलों की
बस्तियों में
जोर पानी का।

टिमटिमाता
जा रहा
कंदील
इस अंधी सदी का।

पते भूले
गांव भूले ठांव भूले।

सुख और
दुख की
रेशमी वो छांव भूले।

कौन किस्सा
अब कहे नेकी-बदी का।

तावीज
आंसू के,
जंजीरें पानी की।

सुरमई
हवाओं के
आंचल क्या सरके।

सपनों के
रंग सभी
धूप पड़े दरके।

नींदों के
जंगल में
शहतीरें पानी की।

दूधिया
उजाले हैं
शरबती अंधेरे।

मछलियों को
चारा
डालते मछेरे।

सुख दुख की
परिभाषा
ये लकीरें पानी की।

—रामेश्वर रोड, खंडवा–४५०००१, म. प्र.—

□

कहानी

लैम्प-पोस्ट

□ सुधा गोयल

आज सुबह उसे आदेश हुआ था कि शाम को जरा जल्दी ही सारी वत्तियां जला दे। यह आदेश उसे ऊपर से मिला था। उसने उड़ता-सा सुना था कि आज कोई बड़े नेता आ रहे हैं, जलसा होगा। भिखारी मिट्टी के तेल से भरा पीपा लिये व चार डंडों वाली छोटी-सी सीढ़ी कंधे पर लटकाये, दूसरे कंधे पर मैला चीकट कपड़े का टुकड़ा डाले जिससे चिमनी रगड़कर साफ करनी थी, जल्दी-जल्दी अपनी मंजिल की तरफ वढ़ा जा रहा था। माचिस उसकी जेव में हर वक्त रहती थी। भिखारी के कपड़े मैल और मिट्टी के तेल की मिली-जुली गंध से गंधाते रहते। भिखारी नाम से ही भिखारी न था, वल्कि रूप-गुण और पहरावे से भी सचमुच भिखारी ही लगता। भगवान ने उसका रूपरंग भी विल्कुल हब्शियों जैसा दिया था। अक्सर नंगे पांव रहता पर ठंड में कभी-कभी मांगे हुए जूते पहनकर धप-धप करता चलता। जूतों का साइज कुछ वड़ा था। भिखारी को स्वयं असुविधा होती।

कान में खुशी हुई वीड़ी को निकाल वदवूदार हाथों से ही कश खींचने लगता। मिट्टी के तेल की वू उसके दिल और दिमाग में रम गयी थी। पता नहीं हाथों के द्वारा कितना मिट्टी का तेल उसकी आंतड़ियों में उतर चुका था, पर भिखारी पर उसका कोई असर न था।

गर्मियो में उसके वदन पर चीकट व अधफटे पाजामे के अलावा और कुछ न होता। हां, जाड़ों में अक्सर धिगड़ी लगा कुर्ता लटका लेता। एक स्वेटर भी उसके पास था जिसमें छोटे-छोटे वीसियों छेद थे। ये दोनों कपड़े उसकी पत्नी सुखिया ने अपनी मालकिन के यहां से लाकर दिये थे, जहां वह अक्सर घर की सफाई के साथ, अनाज व वर्तनों की सफाई भी करती थी। खेतों में मजदूरी भी करती थी। राह चलते ढोरों का गोवर इकट्ठा कर उपले वनाती। कुछ अपने लिए रखती कुछ वेच देती। कभी-कभी जंगल से लकड़ियां भी काट लाती और लौटते समय खेतों से ही साग-भाजी तोड़कर पल्लू में वांध लेती।

इसी प्रकार दोनों की गृहस्थी चल रही होती तो कुप्पियों में आधा तेल भरता, आधा वाजार में वेच देता। कभी कोई शिकायत करता तो जमाने भर को कोसने लगता। हाकिम के सामने गिड़गिड़ाकर कहता, 'हम कहा करें, माई-वाप। सव चोर

हो गये हैं । तेल के साथ चिमनी भी ले जाते हैं । अब हम कहां तक पहरा दें ।' भिखारी के बात करने का ढंग कुछ ऐसा था कि साहब को विश्वास करना पड़ता ।

बीस साल से भिखारी लैंपों में तेल डालने का काम करता आ रहा है । शुरू-शुरू में केवल बीस रुपल्ली मिलती थी । दिन भर में थोड़ी-बहुत मजूरी भी कर लेता था । भिखारी ने जब सुखिया से ब्याह रचाया तो दो पेटों की समस्या खड़ी हो गयी । भिखारी सुखिया को मेहनत-मजूरी करने से इंकार करता था । क्योंकि उनकी जात में औरतें कभी बंधकर नहीं रहीं । जिसके पास चार पैसे देखे उसी से आंखें लड़ा बैठीं और भाग गयीं । पर सुखिया ऐसी कहां थी? भिखारी के साथ कंधे से कंधा लगाकर चल पड़ी नहीं तो भूखों मरने की नौबत आ जाती । यह तो गनीमत थी कि भिखारी के कोई आस-औलाद न थी । न कोई आगे न पीछे बस वह और उसकी पत्नी । कभी-कभी उसके कलेजे में टीस-सी होती । पर अब, बुढ़ापे की दहलीज पर खड़े हो उसने यह सोचना भी बंद कर दिया था ।

बीस रुपये से बढ़कर अब उसके सौ रुपये हो गये हैं, लेकिन मंहगाई तो उससे भी तेज रफ्तार से बढ़ी है । पैसे कब मिले, कब उठे कुछ पता ही नहीं लगता । सुखिया भी खेतों से साग तोड़कर नहीं ला पाती, क्योंकि अब निगरानी ज्यादा होने लगी है । ठेकेदार लकड़ी काटने नहीं देता । भिखारी को लगता जैसे सबने साजिश कर ली है

और उसे अब भूखा ही मरना पड़ेगा। फसल पर वे दोनों खूब काम करते, पर अनाज तोलते समय मुंशी डंडी मारने से बाज न आता। जो मिलता उसी पर सब्र करना पड़ता।

एक-एक बात सोचता भिखारी अपनी मंजिल की तरफ बढ़ता जा रहा था, 'नेताजी आने वाले हैं। जलसा होगा। खूब भीड़-भाड़ होगी। सुबह-सुबह जवान चीख-चीखकर पूरे गांव में कह रहा था, भाइयो! सभी को पांच बजे पंडाल में इकट्ठा होना है। नेताजी आप सबकी खुशहाली के लिए उपाय करेंगे।' भिखारी के पास घड़ी तो है नहीं, समय का अंदाजा कैसे लगे? गांव में केवल दो-चार पढ़े-लिखे लड़कों के पास घड़ियां हैं। उनसे पूछते उसे लाज आती है कहीं बेबात डाट ही बैठें। दिन के झुटपुटे से ही उसे समय का आभास मिल जाता है।

लैंप पोस्ट के सहारे सीढ़ी लगा भिखारी ऊपर चढ़ गया। आहिस्ते से लैंप बाक्स खोला, चिमनी निकाली। कंधे पर पड़े कपड़े के टुकड़े से रगड़कर साफ की। एक 'पली' तेल लैंप में डाल भक्क से माचिस दिखा दी। लैंप जल उठा। शाम के झुट-पुटे में लैंप का मद्धिम पीला प्रकाश दूर-दूर तक फैलने लगा। तभी उसकी नजर दूर सामने बने पंडाल पर पड़ी। उसके पांव वहीं ठिठक गये और वह खड़ा-खड़ा पंडाल का जायजा लेने लगा। गैस की लालटेन जल रही थी। बड़ी-सी जाजम बिछी थी जिस पर गांव के काफी लोग बैठे थे। एक ऊंचे से तख्त पर सफेद धोती-कुर्ता पहने आठ-दस लोग बैठे थे और एक आदमी खड़ा हुआ जोर-जोर से कुछ कह रहा था। भिखारी की उत्सुकता चरम सीमा पर थी। अभी तीन लैंप और जलाने हैं यह बात अब उसके जेहन से बिलकुल निकल चुकी थी। वह बड़ी तन्मयता से उस सफेदपोश आदमी की बातें सुन रहा था—'भाइयो हमारी सरकार हर गांव में बिजली और पानी पहुंचाना चाहती है। आप सब अपना अमूल्य वोट देकर मेरे हाथ मजबूत करो। मैं आपके गांव को स्वर्ग बना दूंगा। कल से बिजली का काम शुरू हो जायेगा। सारे गांव में रोशनी हो जायेगी। ट्यूबवेल से सिंचाई होगी। पानी की किल्लत भी मिट जायेगी।'

पानी और बिजली का संबंध भिखारी की बुद्धि से परे था। एक बार उसने शहर में रात में भी दिन-सा उजाला देखा था, जिसे देखकर उसकी आंखें चौधियां गयी थीं, 'अरे वही बिजली अपने गांव में भी आ रही है' सोचते-सोचते भिखारी की आंखों में चमक आ गयी। कितना अच्छा लगेगा अपना गांव। सुखिया ने तो कभी बिजली देखी ही नहीं बस मिट्टी के तेल की कुप्पी और भक-भक जलती उसकी लौ ही देखी है।

पर ट्यूब-वेल वाली बात भी भिखारी की समझ से परे थी। बैल तो उसने अपने ही गांव में खूब देखे थे पर ट्यूब-वेल नहीं। शायद बैलों की किसी नसल का नाम हो, यही सोचकर वह चुप हो गया था।

अगले ही दिन से काम शुरू हो गया। सड़कों पर गड्ढे खुदने लगे। मोटे-मोटे पाइप सड़क के किनारे आकर पड़ने लगे। समय खिसकता गया। पाइप खड़े हो गये, तार खिंच गये।

जब भी भिखारी उन ऊंचे खंभों को देखता उदास हो जाता। वह पढ़ा-लिखा न था, पर इतना जरूर समझता था। बड़े बेमन से लैंपों में तेल डालकर जलाता और काफी देर तक उस मद्धिम प्रकाश को बड़े गौर से देखता रहता, जो चंद दिनों का मेहमान था।

कई सवाल उसके मन में उठे थे। एक तरफ गांव की खुशहाली थी, दूसरी तरफ सुखिया और उसके पेट का सवाल था। कभी अपना पेट भारी पड़ता, कभी गांव की खुशहाली। भिखारी में काम करने का उत्साह जैसे मर गया था। वह धीरे-धीरे घिसटता अपना काम पूरा करता। ऊंचे-ऊंचे खंभों के सामने लैंप पोस्ट जैसा अपना व्यक्तित्व उसे बौना-सा लगता।

एक दिन रात को किसी ने उसका दरवाजा खटखटाया। सामने वही सफेदपोश खड़े थे।

एक आदमी के हाथों में कागजों की गड्डी थी।

उसने एक कागज निकालकर भिखारी को समझाया कि कहां निशान लगाना है।

भिखारी ने सहमति में सिर हिला दिया। वे भिखारी को कंबल और एक दस का नोट देकर चले गये। भिखारी कंबल और नोट की राजनीति समझ ही न पाया था।

अगले दिन नेताजी आये। बटन दबाया, पूरा गांव रोशनी में नहा गया। चारों तरफ खुशी छा गयी।

अगले दिन लोगों ने देखा भिखारी लैंप पोस्ट के नीचे अकड़ा पड़ा था और उसके सिर के नीचे वही कंबल और दस का नोट रखा था।

—२९०-ए, कृष्णा नगर,
बुलन्दशहर-२०३००१, उ. प्र.

□

अपना सामर्थ्य ही सबसे श्रेष्ठ बल है। —मनुस्मृति

०००

मानव के पास बुद्धि और बल से बढ़कर उत्तम वस्तु कोई नहीं है। —महाभारत

०००

उसकी प्रार्थना सर्वोत्तम है जिसका प्रेम सर्वोत्तम है। —बिशप

०००

चरित्रवान लाभ-हानि का नहीं, उचित-अनुचित का ध्यान रखते हैं। —अज्ञात

सत्य ही सर्वोत्तम नीति है। —महात्मा गांधी

[प्रस्तुति : जे. पी. तिग्रवाल]

□

गांव लौट चलें

चलो
गांव
लौट चलें
पेड़ों की
छांव
लौट चलें
पंखों की
हवा
झुलसायेगी
प्रीति की
चाह
यहां तरसायेगी
आओ
लौट चलें
ढूंढ़ोगी
किसी को
कौन वतायेगा
अंक
भूल गयी
तो पत्थर भी
भरमायेगा
रिश्तों की
दरार
वहां
जितना
न सतायेगी
आओ
लौट चलें
गांव
लौट चलें।

चित्र : ज्ञानेन्द्रकुमार

बोल रहा काग

छत के मुंडेर पर
वोल रहा काग
हृदय में लगी है
आज कहीं आग
मछुआ ने
फेंका है
पानी में जाल
नियति के हाथ
मछली का
भाग
शहर के हाथ
विक रहा
सारा है गांव
छत के मुंडेर पर
वोल रहा काग।

—राजेंद्र परदेसी
गांधी नगर, बस्ती-२७२००१, उ. प्र.

□

कहानी

चौथा कंधा

□ शंकर सुल्तानपुरी

'खुदा सलामती रक्खे।'

रमजानी की यह नियमित दुआ विंदा वावू के तन-मन में अंधौरी जैसी चुनचुनाहट और छिपकली गिरने जैसी घिन पैदा कर देती है। वह जल्दी-जल्दी दुआ की परिधि पार करते हुए खुली हवा में आकर राहत महसूस करते हैं।

पिछले वीस वरस से, जब से रिटायर्ड होकर अपने पैतृक मकान में आये हैं, रमजानी की यह दुआ उनका प्रातः कलेवा वन गयी है।

सुवह मुंह अंधेरे भ्रमण के लिए गली के नुक्कड़ पर पहुंचते-पहुंचते वह रमजानी का चिरपरिचित स्वर सुनते हैं, घड़ी के निश्चित अलार्म की तरह। जैसे वह उनके आहट की प्रतीक्षा करता रहता हो।

ताज्जुव की वात है कि वाचनालय के चवूतरे के नीचे सड़े-गले काठ-कवाड़ की झुग्गी में पड़ा रमजानी गली से गुजरने वाले हजारों कदमों में, विंदा वावू की आहट पहचान लेता है। तमाम राहगीरों को अपनी झुग्गी को इत्मीनान की जगह मान कर मूत्र त्याग करने के लिए फूहड़ गालियां सुनानेवाला रमजानी सिर्फ विंदा वावू के लिए शुभ कामना करता है।

इसलिए नहीं कि विंदा वावू उस पर किसी तरह कृपालु हैं या उन्हें उसके प्रति कोई दया-मया है, वल्कि इसलिए कि विंदा वावू भी उसकी तरह असहाय हैं। इस कहावत की तरह, 'सतर पूत, वहत्तर नाती तो भी घर में दिया न वाती'।

वास्तव में चार पुत्र, दो पुत्रियां और दर्जन भर नाती-पोतों के वावजूद विंदा वावू का कोई अपना नहीं है, जो हवेली जैसे मकान को भरा-पूरा होने का आभास करा सके। उन्हें दो वक्त घर की रोटी-पानी दे सके। पुश्त-दर-पुश्त वाशिंदों से गुलजार रहनेवाला आनंदधाम अपने अतीत गौरव पर आंसू वहा रहा है। उल्लुओं, चमगादड़ों और निर्जनता प्रिय जीव-जंतुओं का आरामगाह वन गया है। किराये पर इस भय से नहीं चढ़ाते कि कल को किरायेदार मालिक वन वैठेगा। एकाधिकार का मोह कितना ही कष्ट दे, इंसान खुशी-खुशी सहता है। यही कारण है कि विंदा वावू अपने उजड़े आनंदधाम के एक मात्र

निवासी हैं।

उनके चारों पुत्र विभिन्न सुदूर स्थानों पर उच्च पदाधिकारी हैं और सपरिवार वहीं रस-बस गये हैं। उनके पास आधुनिक सुविधाओं से भरी-पूरी अपनी कोठियां हैं। वे आनंदधाम को सिर्फ वेचकर पैसा खड़ा करने में दिलचस्पी रखते हैं। लेकिन विंदा वावू अपने जीते जी यह अनर्थ कैसे होने दे सकते हैं? वह वाप-दादा की अचल संपत्ति अपनी आंखों के सामने मिटने नहीं देंगे।

दोनों वेटियां भी दूध-पूत से संपन्न हैं। मां की मौत के वाद उन्होंने कभी मायके की देहरी नहीं लांघी। वे तो चाहती हैं कि वावूजी वारी-वारी से वेटे-वेटियों के यहां रहकर अपना शेष वुढ़ापा चैन से काटें। मगर विंदा वावू को अपना अस्थिर वंटवारा मंजूर नहीं। वह स्थायी रूप से किसी एक के पास भी नहीं रह सकते, क्योंकि ऐसा होने पर दूसरा नाक-भौं सिकोड़ता है।

वह जीवन भर अपनी शर्तों पर जिये। अव अंतिम चरण में वेचारगी के पात्र कैसे वन सकते हैं! उनकी अपनी अलग जीवन शैली है और वह अनुभव कर चुके हैं कि बेटे-बेटी के साथ उनका ताल-मेल नहीं वैठ सकता, यही कारण है कि सगे-संवंधियों की भीड़ में वे एकदम अकेले हैं। वीरान में खड़े उस ठूंठ की तरह जो पतझर या वसंत में समरस रहता है। आस-पास की वीरानी या हरियाली जिसके लिए कोई मायने नहीं रखती। उन्हें अपनी शारीरिक चुकन और सामाजिक फालतूपन का भी अहसास है। मगर वह दूसरों की सोच का 'वेचारापन' ढोने को कतई तैयार नहीं हैं।

आखिर किसी के लिए समस्या या वोझ वनकर क्यों जियें? डेढ़ हजार मासिक पेंशन और लगभग दो लाख की वैंक एफ. डी.। इतनी बड़ी रकम के स्वामी होकर किसी वेटे-वेटी के रहमोकरम की रोटी क्यों तोड़ें?

रहमोकरम इसलिये कि अपने सामर्थ्य काल में तमाम लोगों को अपना कृपापात्र वनाये रखने वाले विंदा वावू ऐसी कृपालुता कैसे झेल सकेंगे?

इतना की नहीं। वेटे-वेटी उस मोटी रकम को लेकर तनाव ग्रस्त हैं जो विंदा वावू के वैंक खाते में कैद है और उनके जीवित रहते किसी औलाद को कोई सामयिक लाभ नहीं दे रही है। लेकिन अपने जीते जी विंदा वावू अपना संचित खजाना लुटाकर याचक वनने का खतरा नहीं मोल ले सकते। हाथ में पैसा रहते ही इंसान रोव-दाव से जी सकता है। यह एक सामाजिक विडंवना ही तो है कि अपनी औलादें या सगे-संवंधी भले ही दुख-मुसीवत में सहारा न वनें किंतु समृद्ध सहोदर के जन्मसिद्ध उत्तराधिकारी होने के गर्व-गुमान से मंडित रहते हैं।

ऐसी वात नहीं है कि विंदा वावू को अपने खून से कोई लगाव नहीं है। वेटे-वेटी और नाती-पोते के लिए उनका दिल

भी कचोटता है। अपने खून का हर कतरा आत्मीय संवेदना और अनुभूति से झकझोर देता है। वे वरावर कुशल-क्षेम का आदान-प्रदान करते रहते हैं और कभी-कभार वेटे-वेटियों के यहां फेरा भी लगा आते हैं। सव कुछ वैसे ही चल रहा है, जैसा कलयुगी समाज में चलता आया है। लेकिन यह चलना भी कैसा दयनीय चलना है। आगे-पीछे कोई नहीं।

पचहत्तरवीं ड्योढ़ी पर वैठे विंदा वावू अव डगमगाने लगे हैं। कभी होटल का खाना, कभी अपने हाथ की कच्ची-पक्की। मामूली ज्वर का झोंका आ जाय तो शरीर महीनों के वीमार जैसा शिथिल हो जाता है। ऐसे में कोई एक गिलास पानी देने वाला भी नहीं। हफ्तों वीत जाते हैं नजरवंद कैदी की तरह अपनी काल कोठरी में पड़े रहते हैं। सिर्फ डवलरोटी और भीगे चूड़े के वल पर। ऐसी दारुण स्थिति में भी सामर्थ्य से हार न मानने की जिद, वुढ़ापे की कुंठा ही कही जायेगी। किसी का एहसान न ओढ़ने का अहंकार शायद सांस रहे तक न जायेगा। कोई तीमारदारी के लिए आया तो कव तक टिकेगा ? और टिकेगा तो उसके खर्च का वोझ कहां तक ढोया जायेगा ? इससे अच्छा तो खुद का दुख-दर्द ही झेलो। 'आया है अकेला, जायेगा अकेला' अव तो यह सूक्ति विंदा वावू का जीवन-मंत्र वन गयी है।

असल में वुढ़ापा मोहमाया का चरमोत्कर्ष होता है। असमर्थ शरीर में वैठी आत्मा अपने कभी भी उड़ जाने के भय में भौतिकता और लौकिकता से और अधिक चिपट जाती है। ऐसी ही दशा विंदा वावू की है। जव तक शरीर में प्राण हैं उनकी आत्मा अपनी सकल संपदा पर कुंडली मारे वैठी रहेगी। वैचारिक वैराग्य और व्यावहारिक त्याग में यही तो अंतर है। हां, दिव्य आत्माओं के त्याग-विराग की वात अलग है। सामान्य जीवन-भोगी मनुष्य की दैहिक नियति यही है।

इस नियति को झेलते हुए विंदा वावू असहायता की चरम परणिति पर पहुंच चुके हैं। लेकिन हार कहां मानते हैं ? अपने भरोसे जीने-मरने का स्वाभिमान कितना ही दयनीय हो, उन्हें विगलित होने नहीं देता। अपने आप में अंदर ही अंदर कितना ही विखरें, व्यथित हों, मगर मनःस्ताप का धुआं वाहर नहीं फूटने देते। वह तो यह मानकर चलने वाले व्यक्ति हैं कि दुनियावी रिश्ते के हिसाव से उनके अपने अपना फ़र्ज निभाने का धर्म स्वयं पूरा करें। वे इसके लिए अनुनय या आग्रह नहीं करेंगे। भले ही जूझते हुए मर जायें। फिर मरने के वाद किसने देखा है कि उसके लिए क्या हुआ ? कितने मान-सम्मान से हुआ ?

उनकी आंतरिक व्यथा तो विगत वीस वर्षों से तन-मन को कुरेदती आ रही है। रिटायर्ड होने के वाद किसी वेटे-वेटी ने उन्हें श्रद्धेय आत्मीय के रूप में कव पूछा ? मगर यह चुभन वे वड़े धैर्य से अपने अंदर

समोये रहे हैं। औलादों को स्वार्थी और संवेदनहीन कहने के बजाय खुद को एकांत-प्रिय और निर्लिप्त सिद्ध करते रहे हैं। आत्मनिर्भरता की यह सनक बराबर पीड़ा ही देती रही। एक रात चैन से नहीं सो पाये। सबके रहते, कोई नहीं, की आत्मानुभूति बराबर सालती रही, आज भी साल रही है। इसीलिए तो रमजानी की दुआ बिंदा बाबू को अपने कटे पर नमक के छड़काव जैसी छलछलाहट की अनुभूति देती है। उन्हें लगता है कि यह उनके हालात पर एक कड़ुवा-कषैला व्यंग्य है।

कितने सलामत हैं वे, और कितनी सलामती हैं उनकी जिंदगी में, यह उनका दिल ही जानता है। रमजानी की बेअसर दुआ रोज-ब-रोज उनकी चिलकन को तरो-ताजा कर देती है।

जो रमजानी खुद सलामत नहीं है, घिसिट-घिसिट कर जी रहा है, उसकी शुभकामना क्या मायने रखती है। वह खुदा से खुद अपने लिए सुख-चैन क्यों नहीं मांग लेता। कितनी बेहया, बदसूरत जिंदगी जी रहा है वह, इंसान की शक्ल में जानवर से बदतर। उसकी सारी देह कुष्ठ के घेरे में है। चेहरा तो पके कटहल जैसा विद्रूप हो गया है। हर घड़ी मक्खियां भिनभिनाती रहती हैं। अपने सगे भी उसके पास नहीं फटकते। छूत के भय से लोग-बाग दूर से कतराकर निकल जाते हैं। फिर भी रमजानी अपने भरोसे जिंदा है। जब तक बल-पौरुख था ठेला खींच-खींच कर बाल-बच्चों को पाला-पोसा। जब पौरुषहीन हुआ तो उन्हीं सगे-सहोदरों के लिए फालतू का सामान हो गया।

किस्मत की मार या कर्म का भोग! नशे की लत ने कुष्ठ तक पहुंचा दिया। अपना खून अपने से नफरत करने लगा। एक कौर के लिए द्वार पर खड़े कुत्ते की तरह जब उसके सामने हिकारत का टुकड़ा फेंका जाने लगा तो पूंछ हिलाने के बजाय, उसका स्वाभिमान गुर्राया। नतीजा यह कि बेघर होना पड़ा।

अब तो बीस साल से ज्यादा हो गये यह खोखली और बेमतलब जिंदगी जीते कुढ़-कुढ़ कर। नुकद्दर को लानत करते हुए, होटल की जूठन बटोरकर पेट भरते हुए। कभी ज्यादा चढ़ी होने पर कलेजे की कसक भाप की तरह फूट निकलती है, 'या खुदा! इससे अच्छा तो बेऔलाद रहा होता। बेसहारा होने की कलक तो न होती।'

आम आदमी की तरह बिंदा बाबू भी रमजानी की हकीकत से परिचित हैं और उसका साया तक छूना गवारा नहीं करते। लेकिन रमजानी है कि बीस साल से उनकी कुशलता की कामना करता आ रहा है।

कैसी अकथ अनुभूति है। मन खिन्न हो तो दुआ में बद्दुआ की गंध आती है।

०००

क्या बात है, आज तो पूरे आठ दिन हो गये, सुखधाम के कपाट नहीं खुले? बिंदा बाबू सैर को नहीं निकले? निकलते तो रमजानी को दुआ देकर तसल्ली होती।

उनकी आहट लापता है। फिर रमजानी के वोल कैसे फूटें? एक लंवा सन्नाटा छा गया है उनकी नियमित चर्या के ताल-मेल में।

रमजानी के दिल–दिमाग में आशंका की लहर उठती है–ऐसा तो नहीं कि वावू साहव ने घिन के मारे औरों की तरह यह रास्ता वदल दिया हो। मगर वीस साल से चला हुआ रास्ता एकदम से क्यों वदल देंगे? ऐसा तो नहीं कि उनकी तवीयत नरम हो? वुढ़ापे की मार! हिम्मत जवाव भी तो दे सकती है।

यह जानते हुए भी कि वस्ती के लोग उसका पास-पड़ोस में डोलना पसंद नहीं करते। कभी-कभी भूले-भटके उधर गया तो नाक-भौं सिकोड़ते ह। मुंह वंद भद्दी गालियां देते हैं। वह विदा वावू की नफरत पहचानता है। उनकी चिढ़न और कुढ़न से उसका अंतरंग परिचय है।

तो भी उनकी सलामती के लिए वह सुखधाम तक जाने की वेचैनी नहीं संभाल पाया। पीड़ित को अपने से अधिक पीड़ित को देखकर ढाढ़स वंधता है। और किसी को विदा वावू की खैरियत की परवाह भी नहीं है। हो भी क्यों और किसे? सुख-धाम के पास-पड़ोस को विदा वावू से कुछ लेना-देना नहीं है। ठूंठ सूखे वृक्ष से न फल की आशा, न छांह की। फिर सेवा-टहल की तीखी धूप कौन झेले? सव अपने से

हाल बेहाल हैं। दूसरे के लिए सोचने की फ़ुर्सत ही कहां है?

नहीं खुले द्वार तो न सही...। अक्सर ऐसा होता है। विंदा बाबू बाहर की दुनिया से विरक्त होकर गृहस्थी का गर्द-गुबार झाड़ा करते हैं और अतीत की स्मृति, वर्तमान के मोह और भविष्य की चिंता में उसे सहेजा-संवारा करते हैं।

रमजानी अपराधी-सा लोगों की नजरें बचाता सुखधाम के द्वार तक पहुंचा। द्वार अंदर से बंद था। रमजानी ने इधर-उधर देखकर खट-खट किया। कोई प्रत्युत्तर न मिला तो आशंका व्यग्रता में बदल गयी। उसने हाथ की लठिया से दरवाजे को जोर का धक्का दिया। कुंडी ढीली होने से एक तरफ़ का दरवाजा खुल गया। रमजानी का जी छनका। कुछ गड़बड़ तो नहीं है? झांककर देखा तो स्तब्ध रह गया।

विंदा बाबू अपने पलंग पर पेट के बल औंधे पड़े थे। पेट तक का भाग बिस्तर पर था और दोनों टांगें फ़र्श पर लटकी हुई थीं। किसी समय उठने के प्रयास में वे औंध गये थे और यथास्थिति पड़े थे। शायद उनमें उठ सकने की चेतना और सामर्थ्य नहीं था।

रमजानी घबराया। दो-चार बार उन्हें पुकारा भी मगर वे टस से मस न हुए। उनके रह-रहकर कंपते पैर से उसे यह तसल्ली हुई कि जिंदगी अभी उन पर मेहरबान है। इस हालत में भी उसे विंदा बाबू को हाथ लगाने की हिम्मत नहीं हो रही थी। वह सोच नहीं पा रहा था कि करे तो क्या करे?

संयोग ही कहा जायेगा। इसी समय पोस्टमैन कोई चिट्ठी लेकर आया। चिट्ठी अंदर फेंकी तो रमजानी ने उसे टोका, 'भइया, जरा संभाल दो बाबू साहब को।'

पोस्टमैन ने भलमनसी दिखायी। विंदा बाबू को आहिस्ते से उठाकर ठीक से बिस्तर पर लिटाया। उनका टेढ़ा मुंह, टेढ़ा हाथ और टेढ़ी टांग देखकर वह समझ गया कि इन्हें लकवा मार गया है। उनकी हालत पर दुख प्रकट कर वह अपनी राह चला गया और रमजानी फिर, क्या करे? के सोच में उलझ गया।

विंदा बाबू के ममेरे भाई यहीं पास के मुहल्ले में रहते हैं। उनका यहां आना-जाना छठे-छमासे ही होता है। गलती न उनकी है, न विंदा बाबू की। जिंदगी की आपाधापी में नातेदारी निभाने की फ़ुर्सत कहां है? फिर अधिक जुड़ाव स्वार्थ-प्रेरणा के बिना नहीं होता। यहां तो परस्पर स्वार्थ-सिद्धि की गुंजाइश कभी नहीं रही।

रमजानी उन राधेलाल को जानता है। प्रेस का कारोबार है। कभी रमजानी उनके प्रेस के लिए अपने ठेले पर कागज के बंडल पहुंचाता रहा है। इसी नाते जान-पहचान है। विंदा बाबू से नातेदारी का भी पता है।

क्या करे? के सोच में रमजानी इसी बिंदु पर पहुंचा। वह राधेजी के यहां जाने को हुआ तो विंदा बाबू के चेहरे से

उसकी दृष्टि एकाकार हुई। वह ठिठक गया, इस मानवीय विचार से कि संकट में पड़े शत्रु को भी दया-दान देना इंसान का फर्ज है। अगर बुरा भी मानेंगे तो इस वक्त उसका क्या कर लेंगे?

विंदा वावू का मुख दयनीयता प्लावित था। पनीली आंखों से अश्रु-धारा उमड़ रही थी। हाथ-पैर संज्ञा शून्य थे। सिर्फ, मुरझाये ओंठ सूखे पत्ते की तरह फरक रहे थे। शायद कुछ कहना चाह रहे थे मगर कह नहीं पा रहे थे। उन वुझी आंखों में आभार और याचना का करुण भाव था। वड़ी मुश्किल से उनके वायें हाथ की उंगली ओंठ छू सकी। रमजानी समझ गया कि पानी मांग रहे हैं।

पलंग के पास ही तिपाई पर पानी भरा जग और गिलास रखा था। पहले तो रमजानी छूत-छात के असमंजस में पड़ा रहा, परंतु विंदा वावू की मौन याचक स्वीकृति ने उसका संकोच दूर कर दिया।

इस समय उसका घिनौना हाथ परम पवित्र वरद हस्त वन गया। उसने पानी भरा गिलास विंदा वावू के ओठों से लगाया तो उनका चेहरा अधिक भरभरा आया। यदि फूटकर रो सकने की सामर्थ्य होती तो निश्चय ही घनीभूति कृतज्ञता उमड़ पड़ती।

यह तो प्रकृतिगत मानवी प्रवृति है। स्वार्थसिद्ध की दशा में करेला भी मधुर स्वाद देता है।

रमजानी ठहरा नहीं। किसी के दुख में काम आने का वोध उसे अद्भुत आत्मवल और आनंद की अनुभूति दे रहा था। वह झपटते हुए राधेजी को खवर करने चल दिया। विंदा वावू जिंदगी और मौत के वीच झूलते रहे।

राधेजी कामकाजी आदमी ठहरे। भाईजी की गंभीर वीमारी का हाल सुनकर दुखी से अधिक हैरान हुए। इस हैरानी में आयी-गयी अपने माथे का वोध था। मगर यहां तो वह ही विंदा वावू के सर्वाधिक नजदीकी हैं। आत्म स्वीकृति न सही, लोकाचार के विचार से अपने कर्तव्य की इतिश्री तो करनी ही होगी।

वेटे-वेटियों को फोन खटखटाये गये। पता चला दो वेटे और एक दामाद सरकारी दौरे पर देश से वाहर हैं, फौरन तो नहीं आ सकते। शेष दो वेटों और एक दामाद में एक वेटा और दामाद खुद हृदय-रोग से पीड़ित होकर अस्पताल में स्वास्थ्य लाभ कर रहे हैं। वाकी एक वेटा और एक दामाद ने यथा संभव शीघ्र पहुंचने की सूचना दी।

इसे विंदा वावू की नियति कहें या दुर्भाग्य... जव तक राधेजी उनकी सेवा-सुश्रुषा के लिए उपलब्ध हुए वह इहलोक से विदा ले चुके थे। उनकी स्वर्ग यात्रा की खवर पर ज्यादातर लोगों की जवान पर एक ही सद्भावना वाक्य था, 'बड़े किस्मत वाले थे, कभी किसी की सेवा का एहसान नहीं लिया। अपने वल-वूते पर आन-वान से जिये। भरा-पुरा परिवार छोड़ कर गये।

बेटे-बेटियां, नाती-पोते किसी प्रियजन का कोई दुख नहीं देखना पड़ा उन्हें। ऐसा निर्द्वंद्व मोक्ष विरल को ही मिलता है।'

रमजानी को क्या पता कि अब उसकी दुआ का पात्र इस दुनिया में नहीं रहा। राधेजी को खबर के बाद वह सुखधाम की तरफ नहीं गया। वह दुत्कार और घृणा का सामना करना नहीं चाहता। इससे बिंदा बाबू की सेवा टहल में बाधा पड़ सकती है। लोग उसकी उपस्थिति से घिना सकते हैं। फिर अब उसकी जरूरत ही क्या है वहां? अब तो सगे-संबंधियों का तांता लग गया होगा। अपनों की उस आत्मीय भीड़ में रमजानी की क्या बिसात? वह कौन है बिंदा बाबू का? न रक्त-मांस का नाता, न जात-बिरादरी का रिश्ता। उसे क्या हक है उनके पारिवारिक सुख-दुख में शामिल होने का? लेकिन उसकी व्यग्र आंखें और आतुर कान सुखधाम की तरफ से आने वाली हर आहट पर चौकन्ने हो जाते हैं। वह क्षण-प्रतिक्षण आकुल है बिंदा बाबू का हाल जानने के लिए। झुग्गी के द्वार से उसकी किचमिचायी आंखें गली के नुक्कड़ तक पसरी हुई हैं। कब राधेजी उधर से गुजरें और उसे बिंदा बाबू की सलामती का समाचार मिले।

अचानक रमजानी की आकुलता पर एक झटके में हथौड़े-सी चोट पड़ी। उसे लगा, उसका दिल बैठ गया है। उसने सड़क पर शव-वाहन रुकते देखा। फिर राधे बाबू क्रिया-कर्म का सामान लिये आते दिखे। रमजानी का अहसास पक्का हो गया। बाबू साहब नहीं रहे। खुदा ने उसकी दुआ हमेशा के लिए खारिज कर दी।

बिंदा बाबू के बेटे-दामाद वक्त से नहीं पहुंच पाये। यह कह लीजिये कि उन्हें उनका अंतिम दर्शन बदा नहीं था। राधेजी कब तक इंतजार करते। गर्मी के दिन देह की दुर्गति कराने से क्या फायदा? जाने-वाला चला गया।

लेकिन समस्या तो यह है कि शव को वाहन तक पहुंचाने के लिए चार कंधे चाहिये और कंधे हैं कुल तीन। राधेजी उनका युवा बेटा, और एक फालतू पड़ोसी। बाकी हमदर्द रस्मी मातमपुरसी करके अपनी राह ले चुके हैं।

राधेजी क्षुब्ध और परेशान हैं। चौथा कंधा कहीं नजर नहीं आता। किसी अंजान राहगीर से कैसे कह सकते हैं? इसके लिए मजदूर भी न मिलेगा। यह किसी लावारिस की लाश नहीं है। किसी से कंधा देने की विनंती करना, शर्म में डूब मरना होगा। किसी मृतक का इससे बड़ा अपमान और क्या हो सकता है!

क्या करें राधेजी। चौथे कंधे का इंतजाम होना ही चाहिये। देखते हैं, कोई परिचित मिल जाये। पांच मिनट का काम है। फिर तो जैसे-तैसे निपट जायेगा। बेटे-दामाद आते ही होंगे।

इसी समय सिमटा-सिकुड़ा रमजानी आता दिखायी देता है। शोक-श्रद्धांजलि

(शेषांश पृष्ठ ११५ पर)

कहानी

बचपन से आगे

□ पैमिला मानसी

फिल्म साधारण फ़िल्मों से कुछ अधिक ही लंबी थी। समाप्त होते-होते दस वज गये। हॉल से वाहर निकलते ही उन लोगों को वर्फीली हवा के थवेड़ों की मार पड़ी। धुंध में लिपटी हुई सुनसान सड़क पर उनकी अपनी ही पदचाप गूंज उठी। उनके साथ ही हॉल में से निकलने वाले मुट्ठी भर लोग जाने किधर छितरा गये। उन्होंने कंधों पर लटके अपने स्वैटर पहन लिये। इस पहाड़ी इलाके में सितंवर में ही इतनी ठंड हो जाती थी कि गर्म कपड़े पहनने पड़े। उसके वाद वे चारों पिक्च-रहॉल के सामने वनी चाय की दुकान पर जा वैठे। एक-एक प्याला गर्म चाय पीकर, होठों में सिगरेट दवाये, हाथ मलते हुए वे चारों अपने स्कूल के होस्टल की ओर वढ़ गये।

गेट पर खड़े वड़ी-वड़ी रोवीली मूंछों वाले पहाड़ी चौकीदार ने उन चारों को देखते ही फाटक खोल दिया। फाटक खुलते ही पांच का एक नोट चुपचाप चौकीदार की हथेली में आ गया। पिछले तीन वर्षों से यह चारों इस दस्तूर को निभाते चले आ रहे थे, और अव तो स्कूल में इनका वैसे ही वारहवां यानी अंतिम वर्ष था। वड़े लड़कों से तो चौकीदार वैसे ही डरता था। डराने—धमकाने के लिए स्कूल के छोटे लड़के ही काफी थे।

वेआवाज़ होस्टल में घुसकर चारों तेज़ कदमों से कोने वाले एक कमरे की ओर वढ़ गये। यह चाय की दुकान पर ही तय हो चुका था कि रात मजलिस अरुण के कमरे में जमेगी। अरुण के कमरे में वैठकर गप्पें लगाने का एक कायदा था। अरुण वड़े गर्व से अपनी मां के हाथों की नमकीन और मिठाई सवको खिलाता था। कमरे के अंदर घुसते ही चारों ने चैन की सांस ली।

'यार! किसी दिन उस वार्डन ने हम लोगों को इतनी देर से होस्टल में दाखिल होते देख लिया तो जानते हो...।'

'छोड़ो भी। उसको कहां फुर्सत है चक्कर काटने की।' विजय ने एकदम अरुण की वात काट दी, 'पता नहीं वह हिस्ट्री वाली मिस रोज़ रात को उसके कमरे...।'

'शट-अप!' गुर्राकर अरुण ने अलमारी में से सिगरेट का एक पैकेट निकाला।

वीरेन्द्र हंस पड़ा, 'विजय तुझे कितनी

बार कहा है उस हिस्ट्री वाली मिस के बारे में ऐसी-वैसी बातें न किया कर। दिल पर चोट लगती है बेचारे के।'

अरुण वीरेन्द्र को घूरकर रह गया। फिर चारों आवाज़ मिलाकर ज़ोर से हंस पड़े। हंसते-हंसते ही अरुण को दो पल के लिए विचार आया—वार्डन की तो ऐसी की तैसी, पर अगर कभी मां... और फिर मां की ही याद छा गयी उसके मन, मस्तिष्क पर। साथियों के अपने-अपने कमरों में जाते ही वह बिस्तर पर गिर पड़ा और मां का चेहरा उसकी आंखों में घूमने लगा। कैसा मस्त था यह होस्टल का जीवन—कोई फिकर नहीं, कोई रुकावट नहीं। बस मौज ही मौज। पर पता नहीं क्यों अकेला पड़ते ही उसे मां की याद आ जाती थी। कभी-कभी उसे स्वयं ही अनुभव होता, उसकी हालत एक चार-पांच वर्ष के बच्चे जैसी है, जिसके लिए संसार की हर बात का आधार मां ही है। अरुण को याद आया जब वह चौथी—पांचवीं में पढ़ता था तो उसकी बड़ी बहन मंजु उसे कभी 'सिस्सी' कहकर चिढ़ाया करती थी। वैसे अब तो मंजु उससे घबराने लग गयी थी। देखने में बड़ा वही लगता था। पिछले दो-तीन वर्ष से जब से वह होस्टल में आया था, उसे लगने लगा था अब वह बहुत बड़ा हो गया है, बड़ों में शामिल हो गया है और केवल लड़का नहीं रह गया है। कभी घर में भी सब लोग उससे यूं पेश आते थे जैसे वह सचमुच वयस्कों में शामिल हो गया हो। पापा उसको सामने देखकर कम चिल्लाते थे। मां चिल्लाते-चिल्लाते चुप हो जाती थी। मंजु रास्ते में उसे सामने आते देखकर घबरा जाया करती थी, अधिक सतर्क नज़र आने लगती थी। मगर कभी-कभी पल भर में ही यह सब धोखा लगने लगता था। मां ज़रा-सी बात पर यूं डांट देती थी जैसे वह अभी चौथी में पढ़ता हो। बड़ेपन के इस धरातल पर पांव कुछ जम नहीं पा रहे थे। धरातल कुछ ठोस नहीं था। अभी पिछली गर्मी की छुट्टियों में घर गया था तो मंजु ने कितनी उपेक्षा दिखायी थी, हालांकि वह जानता था मंजु अंदर ही अंदर किस प्रकार भयाक्रांत थी कि कहीं मम्मी-पापा अरुण की बात का विश्वास न कर बैठें। डांट मंजु को भी पड़ी थी, पर उतनी नहीं जितनी वह आशा रखता था, और अंत में उसने अपने को ही अपमानित अनुभव किया था। अगर वह सच में मंजु का बड़ा भाई होता तो मंजु अवश्य सीधी हो गयी होती।

अरुण ने करवट बदलकर आंखों पर बांह रख ली कि नींद आ जाये पर उस अपमान की याद ने उसे तिलमिला दिया। मन तो चाहता था मंजु हो सामने और वह एक थप्पड़ दे मारे उसको या बाल खींचकर पूछे जो वह कह रहा था, गलत था क्या? क्या यह गलत था कि सड़क के पार जो मकान बन रहा है, वहां वह सुरिंदर को छुप-छुपकर रोज़ मिलती है? क्या यह भी गलत था कि उस दिन उसने उसे

सुरिंदर से लिपटे हुए देख लिया था? पूरी बात का परिणाम और तो कुछ हुआ नहीं था, बस भाई-बहन में बोलचाल बंद हो गयी थी। छुट्टियां समाप्त होने पर वापस आते समय भी वह मंजु से नहीं बोला था। मां ने आंखों में ही आंखों में बहुत धुड़का था, पर उसने अनदेखा कर दिया था। मंजु की आंखें तरल दीखी थीं। अरुण को उस समय बहुत अच्छा लगा था। यह घटना याद आते ही अरुण को तैश आ गया और वह उठकर बैठ गया। सोचा नींद नहीं आ रही है तो कुछ पढ़ लिया जाये। कंबल को अपने आस पास लपेटते हुए उसने सोचा एक प्याला गर्म चाय या कॉफी मिल जाती तो कितना अच्छा होता। छुट्टियों में जब जब घर गया है, मां ने आधी रात को भी चाय बनाकर दी है।

किताब खोलकर अरुण ने अपने आगे रख ली। पढ़ते-पढ़ते हाथ में पैंसिल रखने की आदत थी उसे। दो पन्ने पढ़कर ही उसने एक कौने में पैंसिल से एक बिंदी बना दी। फिर उसको बड़ा किया, और बड़ा किया। आकार तो ठीक हो गया। मगर चमक वैसी नहीं थी। यह तो फीका लाल रंग था। मां के उजले माथे पर तो सदा गहरे लाल रंग की बिंदी चमकती थी। अरुण बचपन से देखता आया था बिंदी सदा अपनी जगह पर होती। बिना बिंदी के मां के चेहरे को याद ही नहीं किया जा सकता।

किसी तरह उधर से ध्यान हटाकर अरुण ने फिर पढ़ना आरंभ किया। पढ़ते-पढ़ते दो बज गये। उसे पता ही नहीं चला। थके हुए दिमाग को झटका और घड़ी पर नज़र डाली तो समय का पता चला। रोज़ ही इस तरह पढ़ पाये तो कितना अच्छा हो। मां को सुबह उठते ही पत्र लिखेगा।
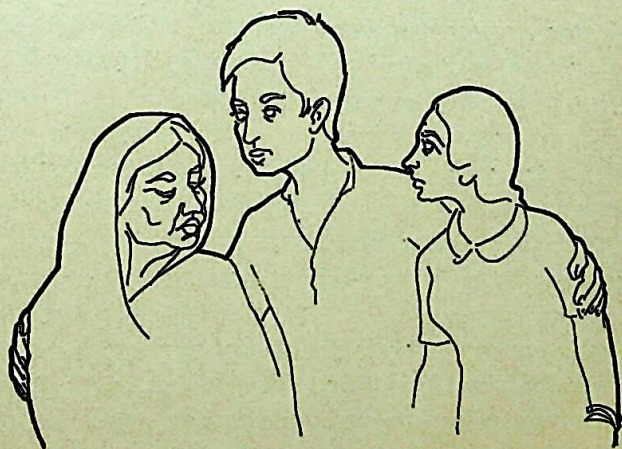
मां कितनी प्रसन्न होगी पढ़कर। मां ने कितनी लगन से अरुण और मंजु दोनों की पढ़ाई में हर प्रकार का सहयोग और प्रोत्साहन दिया था वरन् पापा ने कहां कभी देखा कि दोनों कैसे, कितना पढ़ते हैं। उनकी तो बस एक ही मांग है—अच्छा पढ़ो, बढ़िया से बढ़िया पोज़ीशन लाओ। बढ़िया 'पोज़ीशन' कितनी कठिनाई और परिश्रम से आती है, यह या तो उन दोनों को पता है, या फिर मां को।

वह मां को अवश्य लिखेगा, रात वह कितनी देर तक पढ़ता रहा। सुबह उठकर पहला काम यही करेगा। मां खुश होगी। गर्व से मुस्करा देगी—वही चॉकलेट वाली मुस्कान। मां मुस्कराती है तो कितनी अच्छी लगती है। दायें गाल में एक गड्ढा उभर आता है तो मुस्कान और निखर आती है।

जब वह छोटा था और मां लाड़ से गोद में बैठा लिया करती थी तो वह अपनी उंगली से हंसती हुई मां के गाल में पड़े गड्ढे को छू-छूकर देखा करता था। बड़ा हुआ तो कहने लग गया,' मेरा जी चाहता है, तुम हमेशा यूं ही हंसती रहा करो, मां।'

'हंसती तो रहती हूं, पगले।'

'कहां! कभी तो आंखें निकाल-निकालकर गुस्सा करने लगती हो। बिलकुल अच्छी नहीं लगतीं तब! है न, मंजु?'

मंजु अवश्य उस समय उसकी हां में हां मिला देती थी और मां और भी खिलखिलाकर एक-एक चपत जमा देती उनको।

अरुण ने उठकर बिजली बुझा दी और सोने का प्रयास करने लगा। कमरे में अंधेरा होते ही उसे बेचैनी-सी होने लगी। इस विचार को बहुत परे हटाना चाहा, मगर यही नज़र आने लगा जैसे मां के गाल में पड़नेवाला गड्ढा धीरे-धीरे गायब होने लगा। मां का खिला हुआ चेहरा पहले मुरझाने लगा, फिर कुम्हलाते-कुम्हलाते एकदम लंबा होकर लटक गया।

यह खिलता, कुम्हलाता चेहरा उसने बचपन से यूं ही देखा था। उसे अच्छी तरह याद है, एक शाम क्लब में एक संगीत का कार्यक्रम था। उस दिन मम्मी-पापा अरुण और मंजु को भी अपने साथ ले गये थे। अरुण और मंजु, मम्मी-पापा के साथ न बैठकर उनके सामने वाली सीटों पर जा बैठे थे। कुछ ही देर में अरुण के पास वाली कुर्सी पर बैठी एक लड़की अपने साथ वाली महिला से फुसफुसाकर बातें करने लगी।

'दीदी, वह औरत कौन है, वह नीली साड़ी वाली?'

अरुण ने उधर देखा। मां पापा से बात करके हल्के-हल्के मुस्करा रही थी। गर्व से अरुण की गर्दन सीधी हो गयी, कान और भी चौकन्ने।

'मिसेज़ सक्सेना हैं? क्यों?'

'कुछ नहीं। बड़ी सुंदर है। हंसती है तो उसके गाल का डिम्पल कितना प्यारा लगता है। तुम जानती हो उसे?,

'हां, जानती हूं। बेचारी!'

'बेचारी? क्यों? बेचारी क्यों?'

और क्या ? पति को उससे अधिक शराब से प्यार है। सुना है रोज़ पीता है। पार्टियों और क्लब में तो एक बार शुरू हो जाये तो बस पीता ही चला जाता है।'

'अच्छा।' पूछने वाली ने एक सहानुभूतिपूर्ण दृष्टि मां पर डाल दी।

'पार्टी में जब शामिल होती है तो यूं ही आकर्षक लगती है। मगर ज्यों ज्यों शाम ढलती है, पति के पैगों की संख्या बढ़ने लगती है, इसका चेहरा उतरने लगता है। हमने तो सुना है बेचारी रोकती है तो कभी-कभी हाथ भी चला देता है। कैसे-कैसे लोग होते हैं संसार में ! दिन में देखो तो लगता है, पत्नी से बहुत प्यार करता है। कोई कह नहीं सकता, शराब इसे इतना कमजोर कर देती होगी।'

शेष सारी शाम अरुण का उस आयोजन में मन नहीं लगा था।

'चलो हम दोनों घर चलें, मंजु।'

'पागल हो क्या ? वापस जाना था तो आये किसलिए थे ? इतना अच्छा कार्यक्रम है।'

अरुण बेमन-सा बैठा रह गया था। घंटे पर बाद 'ड्रिंक्स' सर्व होने लगे और जब भी बैरा उधर से गुज़रता, पापा के हाथ का गिलास बदल जाता। चार-पांच तक तो गिनती की अरुण ने। उसके बाद गिनती भूलकर मां के चेहरे पर गहराती शाम को स्याह रात में बदलते देखने लगा। वह हॉल से उठकर बाहर चला गया। बरामदे तक संगीत के सुरों ने उसका पीछा किया। बरामदा लांघते ही सब कुछ सन्नाटे में घिर गया। बिलकुल ऐसा ही सन्नाटा तो मां के चेहरे पर जमता जा रहा था। उस सन्नाटे से घबराकर वह इस सन्नाटे में आ खड़ा हुआ था। रात को उसने सोने से पहले मां से बात करनी चाही थी।

'तुम भी चुपचाप सब कुछ क्यों सहती हो, मां ? साफ-साफ निडर होकर क्यों नहीं बात करती पापा से ? कह दो उनसे कि अगर वह अपनी शराब पीने की आदत नहीं छोड़ेंगे तो...।'

'तुममें यही एक दोष है, अरुण। अपनी उम्र से अधिक सोचते हो।'

'मैं अब बच्चा नहीं हूं, मां। सब कुछ देख सकता हूं, समझ सकता हूं।'

मां की चुप्पी ने बात को आगे नहीं बढ़ने दिया था।

अरुण ने करवट बदली। शायद इस करवट लेटने से नींद आ जाये। ठंड धीरे-धीरे बढ़ती जा रही थी। दो-तीन घंटे में ही सुबह होने वाली थी। पहला पीरियड ही अंग्रेजी का था जिसे वह 'मिस' नहीं करना चाहता था। किसी तरह नींद आ जाये तो सुबह क्लास में तो नींद नहीं आयेगी। इन पहाड़ी इलाकों में आधी रात को नींद का उचटना बहुत तंग करता है। काली-स्याह रातों में दिल दहला देने वाली यह निस्तब्धता। ऐसे अवसरों पर अरुण को स्वयं यही लगने लगता है जैसे वह अपनी उम्र से अधिक सोचता, महसूस

करता है। हर बात को आवश्यकता से अधिक गंभीरता से ले लेता है।

उस दिन वाली बात वह आज तक नहीं भूला। आज भी मां की वह चीख याद आती है तो कानों पर हाथ रख लेता है। आज भी लगता है, गर्म पिघले हुए लोहे का तेज चाकू उसके कानों के रास्ते दिमाग में घुस गया है। पता नहीं उस दिन उसमें भी इतना साहस कहां से आ गया था कि उसने लपककर पापा के हाथ को कसकर पकड़ लिया था। पापा अवाक् होकर उसे देखते रह गये थे और फिर वह रोती, बिलखती मां को अपने कमरे में ले गया था। जीवन में पहली बार उसने जाना था नफ़रत का ज़हर क्या है! अपने आप से उसने दो वादे किये थे। एक, जीवन में कभी शराब न छूने का और दूसरा, अपना जीवन आरंभ होते ही मां को इस नरक से निकाल ले जाने का।

उस दिन भी पापा प्रतिदिन की भांति ही शराब निकालकर बैठ गये थे। दो पैग धीरे-धीरे पी चुकने के बाद उन्होंने तीसरे के लिए हाथ बढ़ाया ही था कि मां ने आग्रह किया था,

'दो तो ले चुके। अब बस करो न। खाना लगाती हूं।'

'बस एक और।'

'एक और' 'एक और' कहते हुए जब अति होने लगी तो मां उठकर बोतल दूसरे कमरे में छुपा आयी, मगर पापा झट उसे ढूंढ़ लाये।

'मत पियो। मैं कहती हूं बच्चों का तो मुंह देखो। कितना सहम जाते हैं तुम्हें यूं पीते देखकर।'

पापा ने बिना कुछ बोले गिलास भरा।

'तुम्हें मेरी कसम। घर में जवान बेटी है। वह क्या सोचती होगी? कुछ तो ख्याल करो।'

पापा फिर भी नहीं बोले तो मां ने उनके आगे से गिलास उठा लिया।

'वापस करो।' पापा दांत पीसकर बोले थे।

मां पर भी जाने उस दिन कैसा हठ सवार था। चिल्लायी थी 'नहीं। और नहीं पीने दूंगी।'

'देती है या नहीं?' पापा हाथ उठाकर बढ़े ही थे कि मां ने खीझकर गिलास हाथ से छोड़ दिया था। पलक झपकते ही मां की चीख सुनकर, अरुण ने पापा का हाथ पकड़ लिया था। फिर वह रोती, बिलखती मां को अपने कमरे में ले गया था। उस दिन के बाद से कमरे में मंजु और अरुण के बैडस के साथ एक और पलंग लग गया था—मां का।

चार दिन बाद तक घर में एक भयानक सन्नाटा छाया रहा था। चार दिन तक पापा का घर में पीने का साहस नहीं हुआ। पांचवें दिन क्लब से पीकर रात ग्यारह बजे घर लौटे थे। फिर धीरे-धीरे जीवन पुराने ढर्रे पर आ गया था। अरुण की छुट्टियां समाप्त होते-होते मां का बैड फिर अपने पुराने स्थान पर पहुंच गया था।

अरुण को मां पर झुंझलाहट तो हुई थी, मगर सोचा मां भी आखिर क्या करे, हर समय क्लेश और तनाव में भी कैसे जिया जा सकता है?

यूं ही पिछली छुट्टियों को याद करते और करवटें वदलते सुवह हो गयी। घड़ी ने छः वजते ही अलार्म वजा दिया। अरुण ने कंवल से ही अलसाया हुआ हाथ वाहर निकालकर अलार्म वंद कर दिया। कुछ देर और यूं ही लेटा रहा। मन कैसा-कैसा हो रहा था। पिछले दस दिन से घर से कोई पत्र नहीं आया—न मां का, न मंजु का। पता नहीं पापा की तवीयत अव कैसी होगी? पिछले पत्र से तो मां वहुत चिंतित लगती थी। 'लिवर' काफी क्षतिग्रस्त हो चुका था। शायद वीमारी चार-छः माह खिच जाये। तकलीफ के समय मां और पापा के पास न होना अरुण को वहुत खल गया था, मगर स्कूल से दो-चार दिन से अधिक छुट्टी नहीं ली जा सकती थी। परीक्षा सिर पर थी और वीमारी लंवी। यही सोचकर रह गया था, परीक्षा के वाद लंवी छुट्टियां तो होंगी ही। आज वार-वार घर की याद आ रही थी। मां और मंजु के अतिरिक्त और कोई था भी तो नहीं। वीमार और घर दोनों को कैसे संभालती होंगी वे। वाज़ार का काम तक करनेवाला कोई नहीं। इस समय उसका वहां होना मां के लिए वहुत अच्छा होता। पापा ने भी कैसे जीवन वरवाद कर लिया है—अपना भी, मां का भी। सवका ही। अच्छा भला, हंसता-गाता घर है। हर सुख है, सुविधा है। वस, वीच में यह शराव की वहती लकीर है जो मिटाये नहीं मिटती। शायद इस वीमारी के वाद पापा कुछ संभल जायें।

सोचते-सोचते दिमाग वहुत वोझिल हो गया। अपने आप को लगभग घसीटते हुए वह तैयार होकर नाश्ते के लिए "डाइनिंग—हॉल' में पहुंचा। विजय और वीरेंद्र पहले से ही उपस्थित थे।

'आओ,हीरो। वड़ी देर कर दी उठने में।'

अरुण को परेशान देखकर वे लोग चुप हो गये। नाश्ता करके उठने ही वाले थे कि चपरासी आकर अरुण से वोला—'आपको वार्डन साहव ने वुलाया है।'

'आज पकड़े गये, वच्चू' वाली नज़र साथियों पर डालकर वह चुपचाप चपरासी के साथ चल पड़ा। वार्डन ने केवल उसे क्यों वुलाया? विजय, वीरेंद्र और गुरु क्योंकर वच गये।

'मे आई कम इन, सर?'

वार्डन के चेहरे पर क्रोध का कोई लक्षण नहीं था। चेहरा काफी गंभीर था। अरुण को एक कुर्सी की ओर संकेत करके वैठने को कह दिया।

'तुम्हारे घर से फोन आया है, अरुण।' वह उसे एकटक देखते हुए वोला।

अरुण झटके से उठ खड़ा हुआ। 'क्यों क्या हुआ?'

वार्डन ने प्यार से उसके कंधे पर हाथ रखकर उसे फिर वैठा दिया।

'वात यह है अरुण, कि कल रात ग्यारह

बजे तुम्हारे पापा...।'

वह कुछ क्षण रुककर बोला, 'नहीं रहे।'

वार्डन उसका कंधा थपथपाता रहा और अरुण कुर्सी की बांह पर हाथों में मुंह छिपाये रोता रहा। पहला उबाल कुछ थमा तो वार्डन ने ही कहा, 'आज रात की गाड़ी से तुम्हारी सीट बुक करवा देंगे। हो सका तो किसी को साथ भी भेजने का प्रयत्न करेंगे।'

'उसकी कोई आवश्यकता नहीं, सर। मैं अकेला ही...।' आंखें पोंछता हुआ अरुण वार्डन के कमरे से बाहर निकल आया।

विजय और वीरेंद्र ने जैसे-तैसे सामान बांध दिया। जैसे-तैसे दिन भी खिंच गया—आंसुओं और बातों के बीच। रात आयी। साथी और वार्डन स्टेशन तक छोड़ने आये। गाड़ी चलने तक रुके रहे। किसी के पास कहने को कुछ नहीं था।

गाड़ी चल दी तो कुछ हाथ हवा में उठे। अरुण को सब कुछ अस्वाभाविक लग रहा था—भयानक स्वप्न जैसा। गाड़ी की ठक्-ठक् दिमाग को पीट-पीटकर सुन्न करती रही। लगता था अभी कोई आकर उसे नींद से जगा देगा और सब कुछ ठीक हो जायेगा। वह और दिनों की तरह उठकर स्कूल चल देगा।

वह स्टेशन पर उतरा। सूटकेस हाथ में पकड़कर बाहर निकला ही था कि नत्थू तांगेवाले ने पहचान लिया। चुपचाप आगे बढ़कर हाथ से सूटकेस ले लिया। अरुण के बैठते ही तांगा चल पड़ा—पहले छावनी और फिर शहर की सड़कें नापता हुआ।

बड़ा बेगाना लग रहा था अपना शहर। बड़ी दहशत हो रही थी। घर जाकर जाने क्या देखने को मिले। वैसे तो कल शाम को ही सब कुछ हो चुका होगा। वह तो पापा को अंतिम समय देख भी नहीं पाया। कैसा लगेगा घर उनके बिना?

तांगे से उतरकर वह डरते-डरते दरवाज़े की ओर बढ़ा। बाहर से देखने में सब कुछ पहले जैसा था। आसपास के मकान भी वैसे के वैसे थे। कहीं कुछ भी तो नहीं बदला था। सब कुछ सोया-सोया—ठीक वैसे ही जैसे सुबह छः बजे होता है। किसी-किसी घर से अवश्य एकाध खिड़की में से प्रकाश छनता हुआ सड़क पर आ रहा था। हो सकता है सब कुछ ठीक ही हो। पापा न हो...। घंटी बजाते हुए उसके हाथ कांप गये। दरवाज़े से कान लगाया। अंदर धीरे-धीरे बातें करने की आवाज़ें आ रही थीं। धीरे से पहले एक किवाड़ खुला, फिर दूसरा।

'बेटे।'

मां सामने खड़ी थी। गालों से गड्ढे ही नहीं, माथे से चमकती, लाल बिंदी भी गायब थी। यह देखने के लिए वह तैयार नहीं था। वह बिना हिले मां को देखता रहा। यह... यह कौन थी... सफ़ेद साड़ी में मैले-मैले चेहरे वाली!

'अरुण...' एक चीत्कार से वह अरुण की ओर बढ़ गयी।

'मां, यह सब कैसे... मां।'

(शेषांश पृष्ठ ११५ पर)

एक रचनात्मक व्यक्तित्व

□ सुधीर शाह

सही मायनों में अपने देश और समाज के लिए प्रतिबद्ध द्विवेदी युगीन कलम के आखिरी पुरोधा संतराम बी. ए. अंततः १०४ वर्ष की की आयु में चल बसे। काफी समय से वे रुग्णावस्था में थे।

बीसवीं शती के प्रारंभ में राष्ट्रीयता के विकास के साथ-साथ हिंदी पत्रकारिता के तीसरे दौर (१९०४-१९१७) में द्विवेदी-युगीन आस्थाशील पीढ़ी की अंतिम कड़ी थे संतरामजी, बी. ए.। हिंदी पत्रकारिता के प्रारंभिक कालखंडों की संरचना में इनका स्मरणीय योगदान माना जाता है। विशेषतः राष्ट्रभाषा के प्रचार, अस्पृश्यता के विरुद्ध सकारात्मक आवाज और सामाजिक भेद-भाव के विरुद्ध रचनात्मक पत्रकारिता के अर्थवान लक्ष्य में, इनके संघर्षों की प्रेरक गाथाएं महत्वपूर्ण उपलब्धियों से समन्वित रहीं।

'जात-पात तोड़क' एक मुखर मंच

४ फरवरी १८८४ को होशियारपुर (पंजाब) पुरानी बसी नामक गांव में आत्मतपी, संतरामजी का जन्म हुआ। इनके पिता का नाम स्व. रामदासजी था। संतरामजी की प्रारंभिक शिक्षा उर्दू फारसी में हुई। सन १९०९ में इन्होंने लाहौर से बी. ए. किया। सर्वोदयी पत्रकारिता का प्रगतिशील चिंतन लेकर सामाजिक भेदभाव और अस्पृश्यता के विरुद्ध संतरामजी का रचनात्मक आंदोलन 'जात-पात तोड़क मंडल' के रूप में सन १९२० में लाहौर से प्रारंभ हुआ—जिसके ये संस्थापक और नेता थे। अछूत और पिछड़े वर्ग में जातीय संचेतना की युगीन सजगता को लेकर, देशव्यापी नवजागरण अभियान के प्रसारण का कुल श्रेय विश्रुत आत्मतपी संतरामजी को ही है। सामाजिक, राजनैतिक एवं सांस्कृतिक अधिकारों की भूमि में पीड़ित और दलितों की आवाज को सरकार तक पहुंचाने एवं उनमें राष्ट्रीयता और नवचैतन्यता का संस्कार प्रसार करने के लिए, संतरामजी ने 'जात-पात तोड़क मंडल' की ओर से लाहौर से सन १९२५ में

संतराम बी. ए.

'जात-पात तोड़क' पत्र निकाला। समाज-सुधार विषयक एवं सामाजिक न्याय चेतना के मुखर संपादक के रूप में 'जात-पात तोड़क' पत्र तत्कालीन समय में, प्रमुख राष्ट्रवादी पत्र के रूप में महत्वपूर्ण ही नहीं रहा, वरन् हिंदी में सर्वोदयी दलित पत्रकारिता की विकासयात्रा का आदि इतिहास पत्र भी माना जाता रहा है।

हिंदी पत्रकारिता में जुझारू व्यक्तित्व

हिंदी पत्रकारिता में 'जात-पात तोड़क' पत्र समग्रतः सामाजिक न्याय चेतना का सर्वग्राही पत्र माना जाता है। पर इससे पूर्व संतरामजी के पत्रकारिता जीवन की शुरुआत 'ऊषा' मासिक पत्र के संपादन प्रकाशन से सन १९१४ में और सन १९२० में जालंधर से 'भारती' मासिक पत्र से प्रारंभ हुई। इसी दशक, में संतरामजी ने 'युगांतर', 'विश्व ज्योति', 'क्रांति' (होशियारपुर) पत्रिकाएं ज्वलंत उद्देश्यों को फैलाने के लिए निकालीं। इन पत्र-पत्रिकाओं का मूल स्वर जातीय चिंता चेतना के अतिरिक्त, भाषा और साहित्य के इतिहास बोध और साहित्यिक चेतना के अवदान में अप्रतिम प्रस्तुति को लेकर भी है। तत्कालीन प्रमुख पत्र 'दैनिक हिंदी मिलाप' (१९२९) के संपादकीय विभाग में रहकर, संतरामजी ने नारी जागरण उन्नय विषयक संस्कार और चेतना जगाने के दायित्व की अनुकूल सक्रिय भूमि तैयार की।

हिंदी पत्रकारिता के इतिहास में आदि दलित पत्र कहे जाने वाले दीर्घजीवी साप्ताहिक 'समता' (१९३४, अल्मोड़ा) एवं इसके आदि संपादक मुंशी हरिप्रसाद टाटा के साथ संतरामजी का यावत् जीवन घनिष्ठ संबंध रहा। 'समता' साप्ताहिक में संतरामजी ने समय-समय पर सारगर्भित और ज्वलंत लेख लिखकर अछूत एवं पिछड़े वर्ग में जातीय चेतना के विकास को लेकर एक नयी दृष्टि दी।

राष्ट्रभाषा के सक्रिय प्रचारक

विशेषतः पंजाब में, राष्ट्रभाषा हिंदी को लोकप्रिय बनाने के सक्रिय योगदान में संतरामजी के महत्वपूर्ण योगदान का इतिहास भी स्मरणीय है। राष्ट्रभाषा हिंदी को एक व्यवस्था, समृद्धि और परिनिष्ठित रूप देने में संतरामजी हिंदी साहित्य के इतिहास में एक निष्काम तपस्वी लेखक–पत्रकार के रूप में चीन्हे जाते हैं। महर्षि दयानंद की प्रेरणा एवं महात्मा गांधी के चरण चिन्हों में चलकर बीसवीं शती के प्रारंभ से ही पंजाब में राष्ट्रभाषा का प्रचार करने वाले प्रचारकों में संतरामजी का नाम प्रमुख था।

हिंदी पत्रकारिता के विशिष्ट उन्नायकों के अतिरिक्त संतरामजी हिंदू समाज के सांस्कृतिक चेतना के भी प्रबुद्ध लेखक थे। विविध विषयों को लेकर साहित्य की विविध विधाओं में सरस्वती का यह वरद पुत्र आजीवन समर्पित रहा। और १०० के लगभग इन्होंने पुस्तकें लिखीं।

शाश्वत मूल्यों के प्रति समर्पित 'जातिभेद का उच्छेद' पुस्तक संतरामजी की

प्रमुख कृतियों में से एक है—जो बहुत चर्चित रही। 'अलबेरुनी का भारत' एवं 'इत्सिन की भारत यात्रा' पुस्तकों के लिए उन्हें पुरस्कृत किया गया। संतरामजी की अंतिम पुस्तक 'स्वस्थ रहने और लंबी आयु के उपाय' थी। इनके पत्रकारिता और समाज सुधार विषयक जीवन की चीन्हे-अचीन्हे संघर्षमय अनुभूतियों की सजीव झलकियां 'मेरे जीवन के अनुभव' नामक पुस्तक में समाविष्ट हैं।

—अमरावती कालोनी, मल्ली बमोरी, भोटिया पड़ाव, हल्द्वानी, नैनीताल, उ. प्र.

□

(पृष्ठ १०४ का शेषांश)

अर्पित करने की ललक है उसके चेहरे पर। राधेजी को ढाढ़स बंधता है। रमजानी इस वक्त उन्हें मानवता की दिव्य मूर्ति नजर आता है। रमजानी सकुचाते हुए उन्हीं से पूछता हैं, 'भइया, का देर है?'

राधेजी बेचैनी भरी निःश्वास छोड़ते हैं, 'एक आदमी और चाहिये न।'

रमजानी का आर्त चेहरा समर्पण भाव से ललक उठता है, 'भइया कोई एतराज न हो तो...।'

राधेजी और दूसरे लोगों ने उस तिरस्कृत कोढ़ी में महान मनुष्य का दर्शन किया।

विदा बाबू को चौथा कंधा मिल गया। यह बात दूसरी है कि अपने रक्त-मांस के कंधे उनके काम न आये। कंधे किसी के हों, जो समय पड़ने पर सहारा और सद्गति दें, वही अपने हैं। —सी-२१६७/९ इंदिरा नगर, लखनऊ-२२६०१६, उ. प्र.

□

(पृष्ठ ११२ का शेषांश)

वह मां को लिपटने को ही था, मां के सीने में मुंह छुपाकर विलखना ही चाहता था, मां ही रोती हुई लिपट गयी उससे। कुछ देर यूं ही खड़ा रहा। मां का बांध शायद उसे देखकर ही टूटा था।

कितनी दुबली लगी मां। नहीं, वह मां को यूं रोने नहीं देगा। इस प्रकार निस्सहाय नहीं महसूस करने देगा। उसे लगा उसकी दोनों बांहें पहले से अधिक बलिष्ठ हो गयी हैं, सीना अधिक चौड़ा हो गया है। भरे गले से बोला, 'रोओ नहीं, मां।'

'अब मैं क्या करूंगी, बेटा। तू नहीं जानता कैसा सर्वनाश हो गया है।'

'मैं आ गया मां। मैं हूं तुम्हारे पास।'

मां का रोना धीरे-धीरे सिसकियों में बदलने लगा। अरुण ने अनुभव किया अब वह सचमुच बचपन की दहलीज के पार आकर खड़ा हो गया है। मां और मंजु की देखभाल अब उसे ही करनी है... और एक ही क्षण में उसने अपने बदले हुए संसार के सारे दायित्व ग्रहण कर लिये। मां को एक बांह में लपेटे-लपेटे वह अंदर चला गया। —ए ई-२२, टैगोर गार्डन, नयी दिल्ली-२७

□

मुल्ला नसीरुद्दीन और उनका गधा

□ एम. आर. गुप्त

इतिहास में मुल्ला नसीरुद्दीन के साथ उनका गधा भी मरकर अमर हो गया जो मुल्लाजी को जिंदगीभर अपनी पीठ पर लादे हुए दुनिया के अनेक मुल्कों की सैर कराता रहा। जिसने मुल्लाजी के कारण जाड़ा, गरमी, लू-लपट, धूप-बरसात सब को सहन किया, आंधी तूफानों से भी मुंह नहीं मोड़ा, ज़मीन के अलावा वह रेत, पानी, कीचड़ और दलदल में भी चला है, मैदानों, घाटियों से गुजरा है, टीलों और पहाड़ों पर चढ़ा है भूखा, प्यासा भी रहा है, ज़माने की हर मुसीबत उठायी और हर गर्दिश से गुजरा है। मजाल क्या कि कोई शिकन उसके चेहरे पर आयी हो। मरने को, हंसी के देवता और लतीफों के बादशाह मुल्ला नसीरुद्दीन भी मर गये और उनका वह दिलचस्प, वफादार गधा भी मर गया, लेकिन वे दोनों ही मरकर अमर हो गये हैं।

मुल्ला नसीरुद्दीन खुशमिज़ाज और जिंदादिल इंसान थे तो उनका गधा खुश-मिज़ाज और ज़िंदादिल जानवर था। मुल्लाजी अपने लतीफों से तो उनका गधा अपनी अदाओं से दुनियावालों को हंसाता था। नाज़-नखरे में वह किसी माशूक से कम न था। मुल्लाजी उस पर सवार होकर जब उसे आगे को हांकते तो वह पीछे को चलता और तब मुल्लाजी उस पर पीछे की ओर मुंह करके बैठते। गधे के उल्टा चलने से और मुल्लाजी के उल्टा बैठने से नतीजा सीधा निकलता। वे दोनों लोगों को हंसाते हुए अपनी मंजिल पर पहुंच जाते। मुल्लाजी की ज़िंदगी से हम उनके प्यारे गधे को कभी अलग नहीं कर सकते। वह तो उनका जन्म-जन्म का साथी था। मुल्लाजी अवतारी पुरुष थे तो मुल्लाजी का गधा भी अवतारी गधा था। मुल्लाजी हंसी के देवता थे तो उनका वह गधा भोलेपन का देवता था। मुल्लाजी मुलाकातियों, दोस्तों, अज़ीज़ों यहां तक कि अपने बीवी-बच्चों तक को हंसाते थे, बल्कि यह कहना ज्यादा ठीक होगा कि वह किसी को हंसाते नहीं थे बल्कि उनकी बातों पर और उनके कामों पर वे खुद हंसा करते थे। हंसना-हंसाना ही मुल्लाजी का मज़हब था, मुल्लाजी का धर्म था। आंसू बहाती और मुंह बिसूरती दुनिया के लिए मुल्लाजी जैसे इंसान की बड़ी जरूरत है। रोने के लिए दुनियावालों के पास बहुत मसाला है, इतना मसाला है कि वह कयामत तक खतम नहीं हो सकता।

अगर कुछ कमी है तो वह हंसनेवाले मसाले की। मुल्लाजी ने इस कमी को पूरा करने के लिए ही शायद जन्म लिया था। अतः मुल्लाजी लोगों को हमेशा हंसाते रहेंगे। उनकी जिंदगी में लोग उन्हें और उनके गधे को देखकर हंसते थे अब वे उनके लतीफों को पढ़-पढ़कर हंसते रहेंगे। मुल्लाजी के दिलचस्प कामों और लतीफों ने उन्हें अमर बना दिया है और मुल्लाजी की सोहबत से उनका वह सीधा-सादा दिलचस्प गधा भी अमर हो गया जिसने मुल्लाजी को उल्टा-सीधा, अपनी पीठ पर लादकर तमाम मुल्कों की सैर करायी।

अब सवाल उठता है कि मुल्ला नसीरुद्दीन जैसा दिलचस्प और खुशमिजाज आदमी पैदा कहां हुआ था ? पैदा भी हुआ था कि नहीं, यह सवाल का दूसरा पहलू है। कुछ लोगों का तो यही ख्याल है कि मुल्लाजी बिल्कुल पैदा ही नहीं हुए थे, कम से कम वह किसी मुल्क में तो पैदा नहीं हुए थे, न जमीन पर पैदा हुए थे और न किसी मां के पेट से ही पैदा हुए थे। अब सवाल यह उठता है कि मुल्ला नसीरुद्दीन के नाम से ढेर सारे लतीफे कहां से आ गये? तो इसका जवाब यह है कि किसी पुराने लतीफेबाज ने 'मुल्ला नसीरुद्दीन' नाम के व्यक्ति को अपने उपजाऊ दिमाग से पैदा कर दिया और बहुत से लतीफे घड़कर उसके नाम के साथ जोड़कर कृत्रिम मुल्लाजी को उसने आगे कर दिया और खुद उनके पीछे छिप गया। बनावटी मुल्लाजी के साथ बनावटी लतीफे जुड़ते गये।

मुल्लाजी की पैदाइश के बारे में दूसरी बात यह कही जाती है कि मुल्लाजी वाकई में पैदा तो हुए थे उसी तरह जिस तरह दूसरे लोग पैदा होते हैं, लेकिन यह ठीक पता नहीं कि वह किस मुल्क में और कब पैदा हुए थे। अनेक मुल्कों का दावा है कि मुल्लाजी उनके ही मुल्क में पैदा हुए थे। इस दावे में अरब, ईरान, तुर्किस्तान, हिंदोस्तान, रूस, चीन, जापान सभी शामिल है। चीनियों का कहना है कि मुल्ला नसीरुद्दीन 'ओंतो' के नाम से ५०० वर्ष पूर्व उनके यहां पैदा हुए थे।

रूसी मुल्ला नसीरुद्दीन की पैदाइश ६०० वर्ष पहले की मानते हैं जबकि हिंदोस्तान मुल्लाजी की पैदाइश को १००० वर्ष पहले की मानता है, क्योंकि मुल्लाजी के बहुत से लतीफे पंचतंत्र तथा जातक की कहानियों में मिलते हैं। अरब देश भी एकमत नहीं। वे मुल्लाजी की पैदाइश ७०० वर्ष पहले की मानते हैं।

मुल्लाजी की पैदाइश का दावा जो तुर्किस्तान ने पेश किया है, वह अधिक ठोस दिखायी देता है। उसने कम से कम यह तो बताया है कि मुल्ला नसीरुद्दीन उनके मुल्क में कोनिया शहर के होतो ग्राम में सन १२०८ ई. में पैदा हुए थे। उनके वालिद का नाम मौलवी अब्दुल्ला था। वह एक मस्जिद के इमाम थे। हालांकि मुल्ला नसीरुद्दीन की मृत्यु की तारीख वह भी नहीं बताता।

अगर मुल्ला नसीरुद्दीन वाकई में कहीं पैदा हुए थे तो उनके लिए यह कहा जा सकता है कि वह बड़े हरफन-मौला आदमी थे। दुनिया का शायद ही कोई ऐसा पेशा हो जो उन्होंने न अपनाया हो। दुनिया के रंगमंच पर उन्होंने अनेक रूपों में पार्ट किया है। संसार ने अभी तक उनके जोड़ का दूसरा ऐक्टर पैदा नहीं किया और भविष्य में कर भी सकेगी कि नहीं इसमें भी संदेह है। मुल्लाजी मस्जिद में पढ़ाते भी हैं, मस्जिद में धर्मोपदेश भी देते हैं, काज़ी बनकर न्याय भी करते हैं। मुल्लाजी तिजारत भी करते हैं लोहार, बढ़ई, राज तथा मजदूर का काम भी करते हैं, यहां तक कि वह दूसरों के फटे जूतों की मरम्मत भी करते हैं। मुल्लाजी दूसरों के कपड़े भी सीते थे यानी दर्जीगीरी भी करते थे। इसके अलावा वह देशाटन तो करते ही थे जो सर्वविदित है। ऐसे हर-फन-मौला को यदि हर देश अपना बताये तो इसमें आश्चर्य की क्या बात है।

संभावना इसी बात की अधिक है कि मुल्ला नसीरुद्दीन हर मुल्क में पैदा हुए थे और वहां वे अलग-अलग रूपों में प्रकट हुए थे। जभी तो उन्हें अरब वाले मुल्ला नसीरुद्दीन 'जाफा' के नाम से, तुर्किस्तान वाले उन्हें मुल्ला नसीरुद्दीन 'होता' के नाम से, हिंदोस्तान में उन्हें 'मुल्ला दो प्याजा' के नाम से तो रूस तथा ईरान में केवल मुल्ला नसीरुद्दीन के नाम से और चीन में उन्हें 'ओंती' के नाम से पुकारते हैं।

सदियों से अरब, ईरान, तुर्किस्तान, रूस, चीन, जापान और हिंदोस्तान में मुल्ला नसीरुद्दीन के लतीफे सीना-बसीना चलते चले आ रहे हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि मुल्लाजी का वह सुस्त रफ्तार वाला गधा मुल्लाजी को अपनी पीठ पर लादे हुए भले किसी मुल्क में न पहुंचा हो या न पहुंचाया हो, लेकिन मुल्लाजी के लतीफे उस मुल्क में किसी न किसी तरह जरूर पहुंच गये। और दुनिया में जब तक हंसने का शौक और लतीफा सुनने का 'चाव' बाकी बना रहेगा, उस समय तक मुल्लाजी तथा उनके गधे की याद भी बाकी बनी रहेगी। न मुल्लाजी मर सकते हैं और न उनका गधा ही मर सकता है। वे दोनों लतीफों की जिंदगी में ज़िंदा रहेंगे, रोती, बिसूरती दुनिया को हंसाते रहेंगे, और हंस-हंसकर जिंदा रहने का सबक पढ़ाते रहेंगे।

अब मुल्ला नसीरुद्दीन से संबंधित हजारों लतीफों में से चंद लतीफों की चाशनी आप भी चख लें जिन्हें चखकर दुनिया अपने होंठ चाटती है।

चोगा गिरने की आवाज

ज़मीन पर कोई भारी-भरकम चीज़ के गिरने की आवाज़ सुनकर मुल्ला नसीरुद्दीन की बीबी घबराई हुई उनके पास कमरे में आयीं और पूछा, 'क्या गिरा है?' मुल्लाजी ने सहज भाव से कहा, 'घबराने की ज़रूरत नहीं। मेरा चोगा (लंबा कुरता जैसा परिधान) पलंग से फर्श पर गिर गया था।' और फिर नींद भरी आंखों को मलने

लगे। बीबी ने कहा, 'सिर्फ चोगा के गिरने से तो इतनी आवाज़ नहीं हो सकती है ?' मुल्लाजी ने झट से कहा, 'तुम्हारा ख्याल बिल्कुल दुरुस्त है। इत्तिफाक से उस चोगे के अंदर मैं भी तो था ?'

परदार उड़ता ऊंट

सुबह की नमाज़ पढ़ाने के बाद मुल्लाजी न नमाजियों से कहा, 'आप सब लोग खुदा का शुक्र अदा करें।' और यह कहकर वह मस्जिद की छत की ओर देखने लगे। किसी ने पूछा—'क्यों ?' तो मुल्लाजी ने फौरन बात बनायी—'इसलिए कि खुदावंद करीम ने ऊंट को परदार जानवर नहीं बनाया वरना वह मकानों की छतों पर उड़कर आ बैठता और छतों में दरारें पड़ जातीं।' मुल्लाजी का जवाब सुनकर सब हंसने लगे।

वह भी टूट जायेगी

मुल्ला नसीरुद्दीन ने अपने बीमार दोस्त की तबियत पूछी तो उसने बताया, 'बुखार तो टूट गया, मगर गर्दन में अभी दर्द बाकी है।' मुल्लाजी ने बड़ी हमदर्दी से कहा, 'खुदा ने चाहा तो वह भी टूट जायेगी।'

मुर्दा ज़िंदा करने का वायदा

मुल्ला नसीरुद्दीन भूखे-प्यासे एक गांव में पहुंचे। एक घर में गमी हो गयी थी और लोग रो-पीट रहे थे। मुल्लाजी ने उनसे कहा, 'अगर आप लोग पेट भर खाना खिलायें तो मैं आपका मुर्दा ज़िंदा कर सकता हूं।' मुल्लाजी को उन्होंने खूब पेट भर अच्छा-अच्छा खाना खिलाया। इसके बाद मुल्लाजी ने थोड़ा हैरान होकर पूछा, 'भई, मरनेवाला काम क्या करता था ?' लोगों ने बताया पटवारी था। मुल्लाजी ने लोगों को बहुत सख्त-सुस्त कहा और बोले, 'मुझे पहले क्यों नहीं बता दिया कि मरनेवाला पटवारी था ? पटवारी तो एक बार मरकर फिर कभी ज़िंदा होता ही नहीं है। उसे तो अब खुदा भी ज़िंदा नहीं कर सकता।' इतना कहकर वह अपने गधे पर सवार होकर चलते बने।

जैसे को तैसा

मुल्ला नसीरुद्दीन अपने मकान की छत पर खड़े थे कि एक मांगने वाले ने मुल्लाजी को नीचे आने का इशारा किया। जब मुल्लाजी उतरकर नीचे आये तो उसने कहा, 'मैं भिखारी हूं मेरी कुछ मदद की जाये।' मुल्लाजी उसे अदब के साथ मकान की छत पर ले गये और फिर बोले, 'अफसोस है कि मैं आपकी कोई मदद नहीं कर सकता !'

गधा आखिर गधा निकला

जब मुल्लाजी पर घोर गरीबी और बुढ़ापा आया तो उनके गधे को भी भूखा रहना पड़ा। मुल्ला अपने हाल में मस्त थे क्योंकि उन्होंने अपने को हालात का आदी बना लिया था। लेकिन एक दिन सुबह को मुल्लाजी ने अपने गधे को जमीन पर मरा पड़ा देखा तो कहा, 'कितने अफसोस की बात है कि गधा आखिर गधा ही निकला और उस वक्त मर गया जबकि वह भूखे-प्यासे रहने का आदी हो चुका था।'

—३० बी/३ इंडियन एअर लाइन्स क्वार्टर्स, कालीना, बंबई-४०००२९

□

मान-अपमान

□ मालती जोशी

मंदिर से बाहर निकलते हुए मांजी ने उसे देखा और ठिठककर खड़ी हो गयीं। यों उनकी नज़र अब पहले की-सी नहीं रह गयी है। बहुत दूर का वे साफ नहीं देख पातीं। फिर भी उन्होंने पहचान लिया कि सड़क पर रिक्शेवाले से उलझने वाली वह महिला अल्लारक्खी ही है।

वे उसे जोर से आवाज देने को हुईं पर बगल में खड़े वर्दीधारी ड्राइवर और सिपाही को देखकर सकुचा गयीं। फिर उन्होंने सिपाही गंगाराम से ही कहा कि वह सामने खड़ी औरत को बुला लाये। अचानक मिले इस वारंट से रिक्शेवाला और उसकी सवारियां, सभी सहम गये। रिक्शा तो भाग खड़ा हुआ। सिपाही का संदेश सुनकर अल्लारक्खी पहले तो कुछ चौंकी, आंखें मिचमिचाकर उसने मांजी को देखा—और एकदम पहचान की उजास से उसका चेहरा खिल उठा। अपनी लहीम-शहीम देह संभालते हुए वह आगे बढ़ी और उनसे लिपट गयी। लिपटकर ऐसा रोयी कि मांजी की आंखें भी भर आयीं। ये रुलायी सिर्फ अरसे से बिछड़ने की नहीं थी, इसमें उनकी याद भी शामिल थी जो इस बीच संसार से उठ गये थे।

अल्लारक्खी को तो होश नहीं था, पर मांजी जल्दी संभल गयीं। नौकरों-चाकरों के सामने इस तरह की भावुकता का प्रदर्शन उन्हें अच्छा नहीं लग रहा था।

'अल्लारक्खी!' उन्होंने उसकी पीठ पर हाथ फेरते हुए कहा—'सबर कर, अल्लारक्खी। हम सबको एक दिन जाना है। इस तरह रोने से क्या फायदा! अच्छा यह तो बता, यहां कैसे आयी थी?'

'भतीजे की शादी में आयी थी, हुजूर। कल का निकाह था। आज रुखसती है। अच्छा हुआ आपसे मुलाकात हो गयी। रात की गाड़ी से तो लौटना ही है।'

'अभी कहां जा रही थी?'

'दरगाह शरीफ जा रही थी, हुजूर। सुना है बड़ी मकबूल जगह है। पर ये मुआ रिक्शेवाला तो जैसे लूटे ले रहा है।'

'जाने दे उसे। तुझे मैं गाड़ी पर भेज दूंगी। पहले घर तो चल।'

'घर! तो हुजूर का यहां मुकाम है आजकल। किसके पास?'

'अपने बेटे के पास।'

'हाय अल्ला, तो मुन्ना बाबू यहां हैं?'

'तू हमेशा कहती थी न, मुन्ना बावू तो डिप्टी वनेंगे। तो वह सचमुच डिप्टी बन गया है।'

'वह मालिक वड़ा कारसाज है, हुजूर। सबकी ख्वाहिश पूरी करता है। अब मुझे घर ले ही चलिये, मुन्ना बाबू को देखने के लिए आंखें तरस गयी हैं।'

'वह तो कल से दौरे पर गया है। पर घर पर वहूरानी है।'

'मैं अभी आयी, सरकार,' वह लपककर अपनी हमजोलियों के पास गयी, उन्हें समझा-वुझाकर भेज दिया। उनमें से किसी का एक अच्छा-सा शॉल लेकर ओढ़ लिया और वोली—'चलिये।'

०००

गेट में दाखिल होते ही अल्लारक्खी की आंखें जो फैलनी शुरू हुईं तो फैलती चली गयीं। बड़ा-सा फाटक, फाटक पर खड़ा संत्री, करीने से लगा हुआ वगीचा, कंकरीट की पतली-सी सड़क और सड़क के सिरे पर खड़ा महलनुमा बंगला। अल्लारक्खी विस्मत होकर उस ऐश्वर्य को देख रही थी और मांजी उसे। उनका मन गर्व से जैसे उमगा पड़ रहा था।

सिपाही ने गाड़ी से उतरकर अदव से दरवाज़ा खोला तव जाकर दोनों की तंद्रा टूटी। विस्मय विमुग्ध अल्लारक्खी मांजी के साथ सहमी-सी घर में दाखिल हुई। वह जैसे आंखों से हर चीज़ को पी लेना चाहती थी। इतनी शान-शौकत, इतनी साज-सज्जा उसने भला काहे को देखी थी।

'आओ,' मांजी की आवाज सुनकर वह चौंकी। वे लोग शायद मांजी के कमरे के सामने खड़े थे। वह भीतर पांव देने को ही थी कि सामने ठाकुरजी को देखकर दरवाजे में ही ठिठक गयी।

'अरी आ जा, ठाकुरजी तो ऊपर अलमारी में विराजे हैं।' मांजी ने उसे तसल्ली देते हुए कहा—'अव तो मैंने सव विचार छोड़ दिया है। वच्चों के साथ रहना है न! उन्हीं का-सा होकर रहना पड़ता है।'

वह भीतर तो आ गयी पर किसी तरह उनके पलंग पर वैठने को राजी नहीं हुई। वड़ी मुश्किल से उसे कुर्सी पर बिठाया जा सका।

'मैं अभी आयी,' मांजी ने कहा और कमरे से वाहर आकर हांफती-कांपती वे ऊपर चढ़ीं। वेटे के कमरे के पास जाकर उन्होंने हल्की-सी दस्तक दी—'वहू।'

वहू विस्तर पर औंधी लेटकर कोई उपन्यास पढ़ रही थी। उसने एक ढीला-सा चोगा पहन रखा था। और कटे वाल माथे पर छितराये हुए थे। सास की आवाज़ सुनते ही विजली की गति से उठ बैठी,

'अरे मम्मीजी! आपने तकलीफ क्यों की, मुझे रिंग कर देतीं?'

हां, इस घर में यह सुविधा भी है। अपने कमरे में बैठे-बैठे वह इन लोगों से बात कर सकती हैं। पर हर वात क्या फोन पर कही जा सकती है?

'वेटे, मेरी एक सहेली आयी हुई है,' उन्होंने धीरे से कहा—'थोड़ी देर बाद नीचे

आ जाना, अच्छाऽऽ।'

'जी,' वहू ने नम्रता से कहा।

वे उसी तरह हांफते हुए नीचे उतर आयीं। कमरे में जाने से पहले वह किचन में गयीं और ढेर सारे नाश्ते का ऑर्डर दे आयीं। पंडित तो हैरान रह गया।

मांजी इस तरह खुद आकर तो कभी कुछ वनवाती नहीं। शायद आज कोई खास मेहमान हैं।

कमरे में आकर मांजी ने रीनू-चीनू की शादी के अल्वम निकाल लिये और सविस्तार शादी का लेखा-जोखा वताने लगीं। अल्लारक्खी मुग्ध भाव से वे रंगीन तस्वीरें देखती रही। दोनों गुड़िया-सी वेवी लोग अव तो पहचान में नही आ रही थीं। और डाक्टर साहव कितने थके से लग रहे थे।

'मुन्ने की शादी की तो पूरी फिल्म वनी है। पर तेरे पास टाइम नही है ना! दो-तीन घंटे तो लगते ही हैं।'

'इंशाअल्लाह, कभी फिर से इस तरफ आना हुआ तो जरूर देखूंगी।'

'जरूर आना,' मांजी ने कहा—'पर, पता नहीं हम लोग तव कहां होंगे! पुलिस की नौकरी है ना, हर डेढ़ दो साल वाद वदली हो जाती है। अपना अच्छा था। आठ दस साल तो कोई हिलाता नही था।'

'अल्लाह! क्या दिन थे वे भी।' अल्लारक्खी ने उसांस भरकर कहा और यादों की गठरियां खुलीं तो खुलती ही चली गयीं, कहने-सुनने को दोनों के पास कितना कुछ तो था। वहू ने कमरे में प्रवेश किया तव तक वे १५–२० साल पीछे लौट चुकी थीं।

वहू को देखकर अल्लारक्खी तो पलक झपकाना भूल गयी। क्षणभर तो मांजी भी अपनी पसंद की दाद दिये विना नहीं रह सकीं। चंपई रंग की रेशमी साड़ी में वहू का अपना रंग एकदम मिल गया था। जरी की चौड़ी-लाल किनारी से उसने सिर खूव आगे तक ढंक लिया था। चेहरे पर लुनाई ऐसी जैसी कि कल ही व्याह कर आयी हो। कटे हुए वालों को उसने रवर से पीछे वांध लिया था, दोनों हाथों में दर्जनभर लाल-पीली चूड़ियां थीं और माथे पर वड़ी-सी सुनहरी विंदिया दमक रही थी।

वहू ने आगे वढ़कर वड़े ही शालीन ढंग से अल्लारक्खी के पैर छुए तो वह जैसे सोते से जागी। हड़वड़ाकर उसने अपने कुरते की जेव में हाथ डाला और जो हाथ आया उसी से वहू का सदका उतारकर मांजी को पकड़ा दिया—'इसे मंगतों में वांट दीजियेगा।' फिर उसने अपना मखमल का वटुआ खोला और पचास का एक नोट वहू के हाथ में थमा दिया।

'अरे ये क्या करती हो?' मांजी अस्त-व्यस्त हो उठीं।

'क्यों? क्या खाली हाथ वहू का मुंह देखूंगी?'

'पर इतना सारा!'

'हाय! मुझ निगोड़ी की औकात ही क्या जो इतना कुछ करूं। ये तो वहू की चूड़ी-विंदी के लायक भी नहीं है—सच, जी जुड़ा-

गया हमारा। आप रात को नज़र जरूर उतार दीजियेगा। मुझ निगोड़ी की ही न लग जाये कहीं।'

मांजी परेशान हो उठीं। बैठे-बिठाये उन्होंने इस गरीबनी पर इतना भार डाल दिया। उन्होंने आंखों ही आंखों में बहू को कुछ आदेश दिया। तुरंत बाजार से मिठाई और फल-फूल आ गये। मिठाई के डिब्बे पर मांजी ने अपना सबसे कीमती दुशाला रखा—अल्लारक्खी की फर्माइश प र बेटे बहू के साथ खिंचा हुआ अपना एक फोटो रखा—और उसी लिफाफे में चुपके से सौ-सौ के नोट भी डाल दिये। तब कहीं उन्हें चैन आया।

जाते हुए अल्लारक्खी बारबार कह रही थी—'मैं तो भैया की अहसानमंद हूं। वही जिद करके मुझे ले आया। नहीं तो मेरी आने की कोई मंशा नही थी। यहां आयी तो आपके दीदार हो गये। कभी सोचा भी न था कि फिर से मुलाकात होगी। सच अल्ला बड़ा मेहरबान है। वह दिल की बात जानता है— मुन्ना बाबू को और देख लेती। बस यही कसक मन में रह गयी।'

०००

उसे गाड़ी पर भेजकर मांजी उदास भाव से कमरे में लौट आयीं। बहू भी उनके साथ पोर्च तक आयी थी। उनका बड़ा मन था कि बहू उनके पास आकर बैठे और पूछे—'मम्मी! वे कौन थीं?' वे उसे सारा इतिहास सुनाने को आतुर थीं। पर बहू को शायद उसमें दिलचस्पी नहीं थी। उसने एक आज्ञाकारी, सुशील बहू का रोल अदा कर दिया था। अब वह फिर से कमरे में जाकर पसर गयी होगी। उसने फिर से वह चोगा पहन लिया होगा, फिर से अपना छूटा हुआ उपन्यास उठा लिया होगा। साड़ी तो जैसे उसे काटती है। गनीमत है कि मेहमानों के सामने सलीके से आती है। न आती तो वे क्या कर लेतीं?

उन्हें याद आया, आज सारा कार्यक्रम उलट-पुलट हो जाने से उनकी रामायण छूट गयी है। वे आसन डालकर बैठ गयीं और उन्होंने रामचरित मानस का वह पोथा खोल लिया। रामायण से उन्हें बहुत लगाव है। जब-जब उदास हुई हैं, इस ग्रंथ ने उन्हें बहुत धीरज बंधाया है।

पर पता नही आज क्या हो गया, वे एक चौपाई भी ठीक से नहीं पढ़ सकीं। अतीत किसी शरारती बच्चे की दौड़-दौड़कर उनके हाथ से पुस्तक छीनता रहा। हारकर उन्होंने पोथी वापिस चौकी पर रख दी और हाथ जोड़ लिये।

वहां से उठकर वे खिड़की के पास रखी अपनी आराम कुरसी में आकर धंस गयीं, ये डॉक्टर साहब की प्रिय कुरसी थी। यूं तो उन्हें फुरसत ही कहां मिलती थी। पर जब भी मिलती थी वे सिर के पीछे दोनों हाथ बांधकर इसी में लेटे रहते थे। अपनी गृहस्थी का बहुत थोड़ा-सा सामान वे साथ रखती हैं। उसमें ये आराम कुरसी भी है। मन जब बहुत भटकने लगता है तो वे इसी में लेट जाती हैं—अपने आप नींद

आ जाती है।

आज लेकिन नींद नहीं आयी बल्कि स्मृतियों का एक छत्ता-सा उन पर टूट पड़ा। कुछ देर तक तो वे प्रतिकार करती रहीं, फिर हारकर उन्होंने अपने को उन्हें सौंप दिया।

मुन्ना तब मुश्किल से ८—१० महीने का रहा होगा कि उन्हें दूसरे बच्चे की आहट सुनायी दी। वे तो शर्म से गड़ ही गयीं। डेढ़ साल में दूसरा बच्चा! और वह भी डॉक्टर के घर में।

और बात सिर्फ शर्म की ही तो नहीं थी, परेशानी की भी थी। सास थी नहीं, पहली जचकी तो मां ने निबटा दी थी। दुबारा उसे कष्ट देने का मन नहीं था। वो तो यहां आयेंगी नहीं, और वहां जाने का मतलब था रिटायर्ड पिता पर दुबारा भार डालना। उन्हें होनेवाले बच्चे की चिंता नहीं थी, उसे तो वे जैसे-तैसे सम्हाल ही लेंगी। इतना अनुभव तो अब हो ही गया था। पर मुन्ना! उस नन्हीं-सी जान को कौन देखेगा? वे जितना ही सोचतीं, उदास होती जातीं। और उनकी उदासी देखकर डॉक्टर साहब परेशान हो जाते।

एक दिन वे बड़े खुश-खुश घर लौटे। बोले—'मैंने तुम्हारी समस्या का हल ढूंढ़ लिया है। अब कम से कम तुम्हारे चेहरे पर मुस्कराहट देख सकूंगा।'

'क्या हल ढूंढा है?'

'वो अपना करीम कंपाउंडर है न। उसकी बहन को शौहर ने तलाक दे दिया है। दो महीने से इसी के यहां आकर पड़ी है। बहुत रो रहा था। बोला, घर में पहले ही इतने लोग हैं, एक खानेवाला और बढ़ गया। दिनभर घर में ऐसी चखचख मची रहती है कि क्या बताऊं! आप मेहरबानी करके उसे आया बना दें तो एहसान मानूंगा। उसका भी दिल लगा रहेगा, चार पैसे घर में आयेंगे तो बीवी का मुंह भी बंद रहेगा।'

'बात हमारी अपनी समस्या की हो रही थी।'

'वही तो। उसके लिए मैं ऊपर लिख रहा हूं। पर जब तक ऑर्डर नहीं आता हम अपने यहां लगा लेते हैं। स्वार्थ-परमार्थ, दोनों सिद्ध हो जायेंगे!

'अपने घर में वो मुसलमानी कैसे निभेगी?'

डॉक्टर साहब एकदम बिफर गये—'तुम्हें बच्चे पालने हैं या पंडिताई करनी है? डॉक्टर की बीवी होकर भी ऐसी दकियानूसी बातें करती हो?'

पति के उग्र रूप को देखकर वे सहम गयीं। फिर उन्होंने कोई प्रतिवाद नहीं किया। दूसरी सुबह अल्लारक्खी उनके दरवाज़े पर थी। पत्नी का लटका हुआ चेहरा देखकर डॉक्टर साहब ने कहा था—देखो, मुसीबत की मारी है बेचारी। उसे प्यार दोगी तो बदले में दुगना पाओगी।'

उन्होंने झूठ नहीं कहा था। उन्होंने बड़ी मजबूरी में इस नयी बला का स्वागत किया था, पर चार दिन में ही मन की सारी

कड़ुआहट धुल गयी। महीने भर में तो दोनों ऐसी घुलमिल गयीं जैसे बचपन की सखियां हों। उन्हें तो उसके शौहर की बुद्धि पर तरस आने लगा था। ऐसी सलोनी बीवी को भी कोई तलाक देता है।

मुन्ने को लेकर भी वे बिलकुल निश्चित हो गयीं। रीनू के जन्म तक मुन्ना अपनी बड़ी अम्मा से खूब हिल गया था। वह उसे हाथों में झुलाये रखती। अगर उसे लेकर रात-रात भर छत पर डोलना पड़े तब भी उसके माथे पर शिकन न आती। बच्चे का टट्टी, पेशाब, कपड़े लत्ते-सा वह तन्मयता से धोती। कभी उसने नाक-भौंह नहीं सिकोड़ी। बीच में किसी ने उनके कान भी फूंके कि इस बेऔलाद औरत का साया भी बच्चों वाले घर में ठीक नहीं है। पर तब तक अल्लारक्खी घर का एक हिस्सा बन चुकी थी।

रीनू के तीन साल बाद चीनू भी आ गयी और अल्लारक्खी का घर में स्थान और पक्का हो गया। इस बीच उसकी नौकरी तो सरकारी हो गयी थी पर वह बंगले पर ही बनी रहती। वैसे तो तीनों बच्चे उसकी आंखों के तारे थे पर मुन्ने पर तो वह जान ही छिड़कती थी। घर और बाहर उसका अच्छा-खासा दबदबा था और सब उससे खौफ खाते थे। मुन्ने का कोई दोस्त उससे मारपीट नहीं कर सकता था। बड़ी अम्मा, फौरन लड़ने पहुंच जाती थी। ट्यूटर पढ़ाने आते तो वह दरवाजे के बाहर ही कान लगाये बैठी रहती। उसकी दहशत के मारे बेचारे बच्चों को डांट भी नहीं पाते थे। मुन्ने की शर्ट पर ज़रा-सा दाग या सलवटें रह जातीं तो धोबी की शामत आ जाती।

मुन्ने के पैर में कांटा भी गड़ जाता तो माली को सौ बातें सुननी पड़तीं। रसोई में तो खैर उसका गुजर नहीं था। पर किसी दिन सब्जी में मिर्च तेज हो जाती या दूध में मलाई कम पड़ जाती तो महाराजिन के प्राण सूख जाते। उसकी झिड़की खाकर फिर वह देर तक बड़बड़ाती रहती—'अपना घर-वार छोड़ कर आयी है वेगम। यहां हमारी जान हलकान किये रहती हैं।'

करीम लेकिन वहुत खुश था। वार-वार कहता—'हुजूर का इकवाल वुलंद हो। आपने उस दुखियारी की गोद में अपना वच्चा डालकर उसकी ज़िंदगी वना दी।'

दिन कैसे मज़े से कट रहे थे। कभी यह ख्याल भी नहीं आया कि सरकारी नौकरी है। यहां से कभी भी तंवू उखड़ सकता है। सच तो यह था कि डॉक्टर साहव ने खुद कोशिश करके यह तंवू उखाड़ा था। नहीं तो वे मजे से वहां रिटायर हो सकते थे। पर उस छोटी-सी जगह में उन्हें अपने वच्चो का भविष्य नष्ट होता-सा लगा। इसीलिये उन्होंने तमाम असुविधाओं के वावजूद शहर में वदली करा ली।

उफ्! क्या रोयी है अल्लारक्खी उस दिन! लगा जैसे यशोदा से उसका कन्हैया विछुड़ रहा हो। उन्हें लगा कि इस अभागिन से उसका खिलौना छीनकर वे वहुत वड़ा अपराध कर रही हैं।

पर ज़िंदगी क्या ऐसी भावुकता के सहारे चलती है। उसे तो आगे ही वढ़ना होता है। शहर आकर कुछ दिन तक मुन्ना भी उदास रहा। उसने अपनी अटपटी भाषा में वड़ी अम्मा को पत्र भी लिखे। करीम की मार्फत उनका जवाव भी आता रहा। पर यह क्रम धीरे-धीरे टूटता गया, एक दिन वंद भी हो गया। वच्चे वड़े भाग्यवान होते हैं। वे ज्यादा दिन तक किसी चीज के लिए विसूरते नही हैं। मांजी लेकिन इतनी जल्दी नहीं भूलीं। वह हर साल मुन्ने के पास होने की मिठाई भेजती रहीं—ईद पर रुपये भेजती रहीं। पर शहरी जीवन की आपाधापी में यह सिलसिला भी ४-५ साल से ज्यादा नही चला। एकाध वार अल्लारक्खी खुद भी आकर वच्चों को देख गयी। पर उसे यह देखकर दुःख हुआ कि मुन्ना अव उसे इतनी शिद्दत से याद नहीं करता।

फिर मुन्ने ने वोर्ड की परीक्षा दी, मेरिट में पास हुआ, फिर कॉलेज गया, कंपटीशन में वैठा—आई. पी. एल. वना। इस वीच लड़कियों की शादी हुई, डॉक्टर साहव वीमार हुए—मुन्ने की शादी—डॉक्टर साहव की मृत्यु। इस लंवे-चौड़े घटनाक्रम में अल्लारक्खी वहुत दूर की चीज़ वन गयी।

०००

लेकिन आज लग रहा है कि वह दूर कहां थी। वह तो यहीं मन के भीतर वैठी हुई थी। किसी कीमती साड़ी की तरह मांजी ने उसे सहेजकर रख दिया था। अव अचानक निकालकर देखा तो लगा, वह आज भी उतनी ही नयी है। अपनेपन की खुशवू से सरावोर है।

मुन्ना पूरे चार दिन बाद लौटा। उसे जीप से उतरते देखा तो लगा, काश अल्लारक्खी उसे देख पाती। पता नहीं कितनी बार तो उंगलियां चटखाती। छह फुट की कद्दावर देह, दमकता हुआ रंग, नुकीली रौबदार मूंछें—पिता ने बहुत चाहा था कि लड़का डॉक्टर बने। पर वह जैसे पुलिस अफसर बनने के लिए ही पैदा हुआ था। आगे पीछे सेल्यूट मारते सिपाहियों को देखकर वह नये सिरे से निहाल हो गयीं। अल्लारक्खी की तरह बुदबुदायीं—'मुझ निगोड़ी की ही नज़र न लग जाये कहीं। मालिक, रक्षा करना।'

मुन्ना घर में दाखिल हुआ, हॉल में खड़ी मां को देखकर मुस्कराया—'हलो मम्मी! कैसी हो?'

'अच्छी हूं।' उन्होंने धीरे से जवाब दिया। पता नहीं क्यों, जब वह 'मम्मी' कहकर बुलाता है तो 'मुन्ना' नहीं रह जाता। लगता है बाजपेयीजी का दामाद बोल रहा है। बहू की तर्ज पर उसने भी 'मम्मी' कहना सीख लिया है। बहू को तो 'मुन्ना' नाम भी अच्छा नहीं लगता। पर वे क्या करें। उसका इतना बड़ा 'सत्यजीत' नाम उनसे लेते नहीं बनता। बहू की तरह 'जीतू' कहकर बुलाने में संकोच होता है। उन्होंने तो नाम लेना ही छोड़ दिया है। बस अकेले में 'मुन्ना' कह लेती हैं।

कुशल-क्षेम के बाद वे अपने कमरे में लौट गयीं। समझदार मां थी। जानती हैं, बेटा इतने दिनों बाद लौटा है, बहू से मिलने को आतुर होगा। अगर वे हॉल में ही जमी रहीं तो बेचारे को संकोच हो जायेगा।

शाम को वे लोग घूमने निकल गये थे। ठीक तो है, वह बेचारी अकेले कहीं निकलती नहीं है। अच्छा भी नहीं लगता। जब मुन्ना यहां रहता है तो करीब-करीब रोज ही दोनों बाहर निकल जाते हैं। आये दिन पार्टियां भी होती ही रहती हैं। रात में वे खाना खाती नहीं हैं। इसलिये खाने की मेज पर बेटे से भेंट होने का सवाल ही नहीं था। वे चुपचाप बैठी प्रतीक्षा करती रहीं। सोने से पहले वह उनका हालचाल पूछने ज़रूर आता है। तब वे उसे अल्लारक्खी के बारे में बतायेंगी। सुनकर कितना खुश होगा। नही, खुश क्यों होगा। बल्कि उसे तो दुःख होगा कि वह दौरे पर था। और इतने सालों बाद भेंट का एक मौका मिला था वह चूक गया।

वे लोग शायद किसी पार्टी में चले गये थे, रात काफी देर से लौटे। बहुत देर तक प्रतीक्षा करने के बाद उनकी थकी देह ने जवाब दे दिया था और वे बिस्तर में दुबक गयी थीं। कमरे की बत्ती उन्होंने जलती छोड़ दी थी जो इस बात का संकेत था कि वे जाग रही हैं। मुन्ना देख लेगा तो कमरे में ज़रूर आयेगा। यह हमेशा का ही नियम था।

गाड़ी से उतरकर बहू तो अपने कमरे में चली गयी, पर मुन्ना उनके पास आकर बैठा। इससे पहले कि वे कुछ कहतीं, उसी ने पूछ लिया—'इधर मेहमान कौन आया था, अम्मा? मीनू बता रही थी।'

'अरे तेरी वड़ी अम्मा आयी थी,' उन्होंने हुलसकर कहा।

'बड़ी अम्मा?' मुन्ने के स्वर में आश्चर्य का भाव था।

'अरे अपनी अल्लारक्खी। भूल गया क्या उसे?' और उसके उत्तर की प्रतीक्षा किये विना वे पूरी गाथा सुना गयीं। कैसे अचानक उससे मुलाकात हो गयी। कैसे वे उसे अपने साथ घर ले आयीं, यहां का वैभव, शान-शौकत देखकर उसकी आंखें कैसी फटी की फटी रह गयीं। अपने मुन्ना वावू को न देख पाने का उसे कितना मलाल रहा। और वहू को देखकर तो वो ठगी-सी रह गयी, वे वड़े गर्व से वता रही थीं—'और वहू ने पैर छुए तो ऐसी गद्‌गद् हो गयी कि वस!'

'क्या कहती हो, अम्मा! मीनू ने उसके पैर छुए थे?' मुन्ने ने वीच ही में टोककर पूछा।

'अरे हां। वह इतना खुश हुई कि वस। वोली, आजकल इतना आदर-मान कौन देता है। जानते हो, उसने पूरे इक्यावन रुपये मुंह दिखाई के दिये हैं।'

'तुम कमाल करती हो, अम्मा,' मुन्ने के स्वर में अव भी वही हैरानी व वही तल्खी थी—'वहू से एक नौकरानी के पैर पड़वा लिये?'

वे एकदम हतप्रभ रह गयीं। उनके सारे उल्लास पर जैसे पानी पड़ गया। एक मन तो हुआ कि कह दें, वहू ने अपने मन से ही पैर छुए थे, उन्होंने नहीं कहा था। पर इतना वड़ा झूठ वे नहीं वोल पायीं। यह सच है कि उन्होंने कुछ नहीं कहा था। पर यह भी तो सच है कि अल्लारक्खी का परिचय उन्होंने अपनी सहेली के रूप में दिया था।

'तुम भी कभी-कभी गजव करती हो, अम्मा।'

'इसमें, ऐसा कौन-सा गजव हो गया, वेटे।' उन्होंने आहत स्वर में कहा—'वह औरों के लिए नौकरानी हो सकती है मुन्ना, पर तुम्हारी वह धाय मां थी। पूरे ग्यारह साल तक उसने तुम्हें छाती से लगाकर पाला है। तुम्हारी वहू उसके पैर पड़ लेती है तो कोई अनर्थ नहीं हो गया।'

'तुम वात को समझती नहीं हो, अम्मा! कम से कम यही सोच लिया करो कि तुम्हारी वहू कितने वड़े घर की वेटी है?'

'वेटे, लड़की का अपना कुल कुछ नहीं होता। वो तो जहां व्याही जाती है उसी घर परिवार की कहलाती है।'

'पर अम्मा, मान लो वह मना ही कर देती तो? तुम्हारा कितना वड़ा अपमान होता। और क्या वह मुझे अच्छा लगता?'

उनका मन हुआ कि कह दें—'अरे वह पराये घर की लड़की, वह मेरा क्या अपमान करेगी! मेरा अपमान तो तुम कर रहे हो—तुम जो मेरे अपने जाये हो।'

पर अव इतनी वात कहने का भी उनमें हौसला न रहा। उन्होंने करवट वदल ली और चादर को सिर तक ओढ़ते हुए वोलीं—'वेटे, जाओ तो वत्ती वुझा देना। आंखों में लगती है।'

—९/७, लाल इमली, भोपाल, म. प्र.

□

तुलसी : एक केंद्र विंदु, शोधकर्ताशतशत संपादक : वद्रीनारायण तिवारी; प्रकाशक : मानस संगम, प्रयागनारायण मंदिर, कानपुर-२०८००१; पृष्ठसंख्या : ६०, मूल्य: प्रचारार्थ २० रुपये, पुस्तकालय संस्करण : ५० रुपये।

'तुलसी: एक केंद्र विन्दु, शोधकर्ता शतशत' नामक संकलन रामभक्त श्री वद्रीनारायण तिवारी के सफल संपादकत्व में गूंथी गयी एक ऐसी माला है, जिसका प्रत्येक पुष्प अन्य पुष्पों के, सौरभ से तारतम्यता रखते हुए भी अपनी विशिष्ट सुगंध से सुधी पाठकों के संवेदनशील हृदय के तंत्रों को विशेषरूप से झंकृत कर देता है।

इस संग्रह में पांच सौ से अधिक शोधार्थियों के विवरण संकलित किये गये हैं।

तुलसी साहित्य में विश्व के प्रथम शोधकर्ता नामक निवंध में डा. भगवती प्रसाद सिंह द्वारा भारत में ब्रिटिश सत्ता की स्थापना के पश्चात भारतीय वाङ्मय के शोधपूर्ण अनुशीलन की परंपरा का उल्लेख करते हुए स्पष्ट किया गया है कि इस देश के परंपरागत जीवन से अजस्र रूप से प्रवाहमान रामकथा के प्रकाश स्तंभ वाल्मीकि रामायण व रामचरित मानस को सभी प्राच्यविदों द्वारा आदर दिया गया है। डा. कार्पेन्टर, सर जार्ज ग्रियर्सन व डा. एल. पी. टैसीटोरी की तिगड़ी में निवंधकार द्वारा श्री टैसीटोरी का स्थान विशिष्ट ठहराया गया है। डा. टैसीटोरी द्वारा राम साहित्य में गहरी अभिरुचि दर्शाते हुए वाल्मीकि रामायण, तुलसीदास कृत रामचरित मानस व अन्य तुलसी वाङ्मयके अनुशीलन में अपनी प्रतिभा का सदुपयोग किया गया है।

डा. टैसीटोरी की जीवन व्यापी साधना के अमर पुष्पों से भारतीय वाङ्मय ही अलंकृत नहीं हुआ वरन् इस देश के विद्वानों को शोध की नयी दिशा भी मिली।

'तुलसी का धर्म-दर्शन' शीर्षक निवंध में निवंधकार ने तुलसी दर्शन की पृष्ठभूमि की संक्षिप्त विवेचना उनके धार्मिक सिद्धांतों का विश्लेषण करते हुए हिंदू धर्म का सामान्य विवेचन किया गया है।

'तुलसी दास ए पोएट युनिवार्सिली

एक्नालेज्ड' शीर्षक से श्री अदालत खान के आंग्ल भाषा में लिखे गये निबंध में रामचरित मानस के आंग्ल भाषा में अनुवाद की आवश्यकता व उनकी उपयोगिता पर प्रकाश डालते हुए रामकथा का संक्षिप्त सार व तुलसीदास की संक्षिप्त जीवनी वर्णित की गयी है।

डा. शालोति वोदवील के निबंध 'रामचरित मानस' के रचना क्रम में निबंधकार ने तुलसीदास की महानता पर प्रकाश डालते हुए उनके साहित्य का आंग्ल साहित्यकार शेक्सपियर के साहित्य से तुलनात्मक अध्ययन किया है।

श्री राजगोपालाचारी के निबंध—तुलसी, वाल्मीकि अवतार में श्रीराम के अवतार लेने की परिस्थितियों को स्पष्ट करते हुए एवं संस्कृत के सम्यक श्लोकों का उद्धरण देते हुए माया, ईश, वेद, पुराणों आदि के मध्य सुंदर सामंजस्य स्थापित किया गया है।

ए. जी. एतकिनस के लेख 'तुलसीदास डाक्ट्रिन आफ माया' में निबंधकार ने तुलसीदास को श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए रामकथा का अध्ययन कर स्वयं को धन्य माना है।

फादर कामिल बुल्के के निबंध 'मेरे अपने, तुलसी' में तुलसी एवं रामचरित मानस का सुंदर विश्लेषात्मक विवरण प्राप्त होता है। ज्ञात होता है कि एक जर्मन ग्रंथ में तुलसी दास के रामचरित मानस के जर्मन अनुवाद के मनन के बाद ही उनके हृदय में भारत-प्रेम का अंकुर फूटा था, उसके मतानुसार तुलसी एक लोकनायक थे।

रूसी साहित्यकार अलेक्सान्द्र वारान्निकोव ने ज्ञान और भक्ति तथा दार्शनिक व भक्त के भेद को स्पष्ट करते हुए जीव के माया मुक्त होने की प्रक्रिया समझायी है। उसके अनुसार तुलसीदास के शिव व राम परस्पर पूज्य भाव का दर्शन करते हुए प्रतीत होते हैं। उन्होंने मानस रचना के समय व परिस्थितियों का उल्लेख करते हुए रामचरित मानस के सृजन की आवश्यकता को स्पष्ट किया है।

डा. सेवक वात्स्यायन ने अति संस्कृत-निष्ठ भाषा में गोस्वामी तुलसीदास एवं उसके महत्व पर प्रकाश डाला। परिपूर्णानंद वर्मा ने आंग्ल भाषा में रचित 'इटैलियन डिवोटेड टू इंडियन स्टडीज' में भारतीय संस्कृति के विदेशी लेखकों के सराहनीय प्रयासों पर प्रकाश डालते हुए दारा शिकोह डा. वैलेन्टाइन, फ्रेडरिक, पिनकोल्ट, डा. आर. ग्रउच, डा. ग्रियर्सन, तथा अंत में इटली में जन्मे डा. टैसीटोरी के अमूल्य योगदान पर प्रकाश डाला है।

'तुलसी साहित्य के पाश्चात्य समीक्षक' नामक लेख में डा. उपेन्द्र ने डा. ग्रियसन, डा. टैसीटोरी, डा. वारान्निकोव, एच. विल्सन, आगोसा तासी आदि के शोधपरक योगदानों को स्पष्ट किया है।

संग्रह के सभी निबंध तुलसीदास की साहित्यिक क्षमता व उसके आराध्य श्रीराम के चरित्र के विविध पक्षों को मुखरित कर

एक संश्लेषित आकार देने में सफल हुए हैं।

मुझे आशा ही नहीं वरन् पूर्ण विश्वास है कि इस संकलन माला के सुरभित पुष्पों के सौरभ से तुलसी साहित्य के शोधकर्ता श्रीराम के भक्तों की अतृप्त ज्ञान क्षुधा की संतोषकारी तृप्ति प्राप्त हो सकेगी। अच्छा होता यदि इस संकलन में ऐसे ही निवंध और भी संकलित किये जाते ताकि भक्ति व ज्ञान के पिपासु राम भक्तों को और अधिक तृप्ति का लाभ प्राप्त हो सकता।

—गिरिराज शाह

०००

*** भवानीप्रसाद मिश्र * संपादक : सुरेशचंद्र त्यागी आशिर प्रकाशन, रामजीवन नगर, चिलकाना रोड, सहारनपुर, मूल्य : २५ रुपये।**

संपर्क पत्रिका के निमित्त आशिर प्रकाशन ने कवि भवानीप्रसाद मिश्र के कवित्व और उसके भिन्न पक्षों पर सुरेशचंद्र त्यागी के संपादन में यह पत्रिका-नुमा किताव छापी है। बेहद सलीके से छपी इस किताव में कविवर भवानीजी के काव्य पक्षों पर लेख हैं। मगर विषयवार खंड विभाजन न होने से एक ही वात को कई लेखकों ने लिखा है। महादेवी वर्मा की तरह ही भवानीजी का गद्य भी अपनी अलग खुशवू लिये रहता है। गद्य पर तीन लेख हैं। उनसे लिया कोई इंटरव्यू भी दे दिया जाता तो इसकी उपादेयता वढ़ जाती। संपादक प्रवर ने कहीं-कहीं लिखा है कि विवरण उपलब्ध नहीं हो सका। इस वात से शोध-वृत्ति का अभाव खटकता है। प्रभाष जोशी और स्वयं संपादक का लेख अपनत्व की शैली में रोचकता से परिपूर्ण है। अंक संदर्भ-ग्रंथ है, शोध-विद्यार्थियों के लिए उपयोगी सावित होगा।

०००

*** क्या कहें, किससे कहें * गजलकार : हस्तीमल हस्ती; अभिव्यक्ति प्रकाशन, आमेट-३१३३३२, राजस्थान; मूल्य : तीस रुपये।**

हिंदी में ग़ज़लकार के रूप में अपनी प्रतिष्ठा वनाने वाले कम ही कलमकार हैं।

अदम गोंडवी, कुंअर वेचैन, वालस्वरूप राही, श्यामप्रकाश अग्रवाल, सूर्यभानु गुप्त, शिव अंवर, नईम, दुष्यंत कुमार, आदि की लंवी सूची है और इनमें प्रतिष्ठापूर्वक कोई नाम जोड़ा जा सकता है तो वह हस्तीमल हस्ती का और वतौर सवूत उनकी अड़सठ ग़ज़लों का नया संग्रह 'क्या कहें, किससे कहें' प्रस्तुत कर सकते हैं। कुछ शेर वतौर उदाहरण प्रस्तुत हैं।

नहीं लगता मुझे हालात पे कुछ बात भी होगी
अभी तो रहनुमां झगड़ेंगे, बैठक मुल्तवी होगी।

× ×

शर्त ये रक्खी गयी कोई करिश्मा चाहिये,
और पानी रख दिया है छलनियों के वास्ते।

कहीं-कहीं अनुस्वार व लिंग की भूलें जरूर हैं मगर कथ्य और हस्तीमल हस्ती का अंदाजे—वयां अनायास मन मोह लेता है।

०००

*** नयी गंध *** गीतकार : डॉ. प्रेमशंकर अयन प्रकाशन, महरौली, दिल्ली—३०; कीमत : तीस रुपये।

नवगीत की लहर अब मंद हो चुकी है। देखा जाय तो 'नयी कविता' की तर्ज पर ही गीत का नामकरण 'नवगीत' हुआ। मगर नवगीत 'नयी कविता' की पूरक विधा नहीं है। समानांतर एवं स्वायत्त विधा है। नवगीत का आंदोलन नयी कविता के आंदोलन के बरसों बाद चला। सन १९६० में नयी कविता का आंदोलन मृतप्राय हो चला।

डॉ. प्रेमशंकर ने अपने छत्तीस नवगीतों के संग्रह 'नयी गंध' में तेरह पृष्ठों में नवगीत का संपूर्ण इतिहास समझाया है।

जहां तक उनके छत्तीस नवगीतों का प्रश्न है, वे पाठकों को बांधने और उनके अनुभवों को गीतों में उतारने में कोई कसर बाकी नहीं रखते यथा :

पथरायी आंखें हैं, सूना घर-द्वार,
भूखापन, निभा नहीं पायेगा प्यार।

इन नवगीतों में नयापन भी है, और नयी गंध भी। —रतीलाल शाहीन

०००

*** सुख मेहमान हो गया है *** रचयिता : जसवंत नेगी; प्रकाशक : राज पब्लिशिंग हाउस, पुराना सीलमपुर, पूर्वी दिल्ली-३१; कीमत : बीस रुपये।

'सुख मेहमान हो गया है' नाम से जसवंत नेगी का कविता संग्रह हाल में सामने आया है। इस संग्रह को देखने, पढ़ने के बाद लगता है कि कविता कभी-कभी समष्टि से व्यष्टि की ओर तो कभी व्यष्टि से समष्टि की ओर फैलने लग जाती है। यों श्री नेगी ने लिखा भी है कि 'कविता परिश्रम का नहीं दर्द का परिणाम होती है। परंतु अब मेरा विश्वास है कि कवि होना ईश्वर की कृपा है, दर्द उसके लिए निमित्त मात्र है।'

कुल अड़तीस कविताओं के इस संग्रह में कवि का दृष्टिकोण कहीं आशा से भी अधिक निराशा का तो कहीं विद्रोह के रूप में सामने आया है, और वह 'विद्रोह' जिसे युवा शक्ति की आरंभिक पहचान माना जाता है। चूंकि श्री नेगी एक युवा हैं अतः एक आम युवा के मन में जो भावनाएं रहती हैं, वह उनके मन में भी हैं।

अधिकांश कविताएं नैराश्य के वातावरण में भी आस्था और ईश्वर आराधना भाव से जुड़ी हैं जो आवश्यक भी है :

प्रभु ! मेरे हर पाप की चर्चा हो,
हर पुण्य अचर्चित रह जाये।
पुण्य पुण्य के रूप में,
पाप अपयश के रूप में मिल जाये।।

संग्रह प्रथम होते हुए भी पठनीय है। जीवन के प्रति अस्तित्व बोध को समझने के लिए इसमें अच्छी अभिव्यक्ति हुई है। —दीपकचन्द्र उप्रेती

०००

*** विष बिरछ (कहानी संग्रह) *** शैलजा मीतू; प्रकाशक: सानुबंध प्रकाशन, प्रा. लि., ७५७ सिविल लाइन्स, उन्नाव, उ. प्र.;

मूल्य : दस रुपये ।

शैलजा मीतू का कहानी संग्रह 'विष-विरछ' पढ़ते समय लगातार यह बात कौंधती जाती है कि लेखन के प्रति अटूट तन्मयता और प्रतिबद्धता किस तरह एक सशक्त रचना को जन्म देती है । जीवन की प्रारंभिक सीढ़ियों पर पैर जमाते ही शैलजा ने ऐसी प्रौढ़ कहानियों को हमारे सामने रखा है जिनके कथ्य को हम इस आधार पर नकार नहीं सकते कि उसने उन्हें अभी देखा नहीं, भोगा नहीं । प्रथम प्रयास में ही शैलजा ने संवेदना के स्तर पर जीवन के संघर्षों को गहराई से पकड़ने की कोशिश की है ।

संग्रह की छोटी-छोटी कहानियां भाषा और शिल्प की दृष्टि से बड़ी चुस्त-दुरुस्त हैं । वे पाठक को अपने साथ जीवन में शामिल होने का जैसे निमंत्रण देती हों ।

'विष विरछ' कहानी ग्रामांचल की एक सशक्त कहानी है । 'दूसरा मन' कहानी मां-बेटे के अंतर्द्वंद्व की कहानी है । संग्रह की कहानी 'जोगी' गांव की दो सहेलियों की कहानी है ।

'असीम' एक और मार्मिक कहानी है जो रागिनी और विराग के प्रेम संबंधों को उभारती है । इसी तरह 'बिखरती जिंदगी' आया और आबिद, के बीच पलते मुहब्बत की एक बेजोड़ कहानी है ।

'आसमान' संग्रह की सातवीं कहानी है । इसमें एक गरीब शायर का जीवन दर्शन है । 'खंडित दीवाली' कुटुंब के विभाजन की कहानी है ।

संग्रह की अंतिम कहानी 'रिश्ते' बनते-बिगड़ते रिश्तों पर अपना एक आकलन प्रस्तुत करती है ।

संग्रह की सभी १० कहानियों में जहां नारी का दुखदर्द और उसकी कमजोरियां हैं, वहीं सुख-समृद्धि के सपने भी हैं । कथानक का प्रस्तुतीकरण, भाषा की सहजता और कथ्य की अनगढ़ता इन कहानियों को रोचक बना देती है ।

—आनंदस्वरूप श्रीवास्तव

□

संत मेविस्कनी की वाणी

एक सशस्त्र पुरुष असंख्य जनता का सामना नहीं कर सकता और न एक सेना अगणित दलों पर विजय प्राप्त कर सकती है लेकिन संसार के सब साम्राज्यों की समस्त सेनाएं एक सच्चे आदमी की आत्मा को नहीं जीत सकतीं, वह अकेला ही बाजी मार ले जाता है !

०००

सेनाएं हार सकती हैं किंतु वीर और तेजस्वी आत्मा सदा अथक रहती है । जिस चोले में वह आत्मा वास करती है, वह चूर-चूर किया जा सकता है, पर वह आत्मा शरीर छोड़ते समय दूसरों में जान डाल देती है, जिससे उनके हृदयों में कार्य करने के लिए आग-सी भड़क उठती है ।

[प्रस्तुति : रणवीर सिंह सेठी]

□

प्राप्ति-स्वीकार

□

तो सुन लो विद्याभूषण श्री रश्मि; प्रकाशक : गीतांजलि प्रकाशन, दिव्यधाम दल्लूचक, खगौल-८०११०५, बिहार; –ष्ठ संख्या : १०८; मूल्य : दस रुपये।

०००

संचयिका (काव्य संग्रह) बिहारीलाल मिश्र; प्रकाशक : श्री जगेन्द्र,शास्त्री सदन, गया कालेज के पश्चिम, गया-८२३००१, बिहार; पृष्ठ संख्या : ११२; मूल्य : पच्चीस रुपये।

०००

नर्गिस (लघु कथा संग्रह) धर्मपाल साहिल; प्रकाशक : पंजाबी साहित्य सभा मुकेरियां (रजि:) होशियारपुर, पंजाब; पृष्ठ संख्या : ८०; मूल्य : दस रुपये।

०००

किलकारी (बाल गीत संग्रह) अशोक 'आंनन'; प्रकाशक : आनन प्रकाशन, नया बाजार, मक्सी, जिला-शाजापुर म. प्र.; पृष्ठ संख्या : ३०; मूल्य : पांच रुपये।

०००

अग्नि गान (कविता-संग्रह) श्री हरि-कृष्ण प्रेमी; प्रकाशक : जीवन प्रभात प्रकाशन, बंबई-४०००६३; पष्ठ संख्या : ७६; मूल्य : दस रुपये।

०००

ननिहाल और ससुराल मोतीलाल सुराना; प्रकाशक : नैतिक जीवन ग्रंथमाला प्रकाशन, १२४, तिलक नगर, इंदौर, म. प्र.; पृष्ठ संख्या : ५६; मूल्य : १-५० रुपये।

०००

बिहार की प्रतिनिधि हिंदी-लघु कथाएं सतीशराज पुष्करणा; प्रकाशक : श्रीमती नीलम पुष्करणा, विवेकानंद प्रकाशन, महेंद्रू, पटना-८००००६, बिहार; पृष्ठ संख्या : ६६; मूल्य : साधारण संस्करण दस रुपये तथा पुस्तकालय संस्करण बीस रुपये।

०००

कंचन पुरुष (नाटक) जीतेन्द्र कुमार 'उत्पल'; प्रकाशक : नीलकमल प्रकाशन, पो. समर्धा, जिला-समस्तीपुर-८४८३०२, बिहार; पृष्ठ संख्या : ४६; मूल्य : सुलभ संस्करण-पांच रुपये, पुस्तकालय संस्करण सात रुपये।

०००

मंदोदरी (खंड काव्य) उमादत्त सारस्वत; प्रकाशक : ग्रंथम, रामबाग, कानपुर, उ. प्र.; पृष्ठ संख्या : १३६; मूल्य : दस रुपये।

०००

आंसू बूंद चुए (इकतीस नवगीत) सुश्री शरद सिंह; प्रकाशक : डा. विद्यावती 'मालविका', ५, सिवल लाइन्स, सागर, ४७०००१, म. प्र.; पृष्ठ संख्या : ७०; मूल्य : बीस रुपये।

०००

चौराहे की बात (कविता संग्रह) मिश्री-

लाल जायसवाल; प्रकाशक : अनुजा प्रकाशन प्रा. लि., कटनी, ४८३५०१, म. प्र.; पृष्ठ संख्या : ४४; मूल्य : पांच रुपये।

०००

बदलते भाव : उभरते स्वर (गीत-गजल-कविता संग्रह) जगदीशचंद्र 'जीत'; प्रकाशक : श्री शांति-कुंज प्रकाशन, ए २०/४, मीरा मार्ग, राणा प्रताप बाग, दिल्ली-११०००७; पृष्ठ संख्या : ४८; मूल्य : छः रुपये।

०००

आक्रोश और बेबसी (काव्य-संग्रह) परशुराम दुबे; प्रकाशक : अभिव्यक्ति, स्टेशन रोड, उल्लासनगर-३; थाना, महाराष्ट्र, पृष्ठ संख्या : ५५; मूल्य दस रुपये।

०००

हिमालय (काव्य-संग्रह) राधेश्याम 'आर्य'; प्रकाशक : 'रश्मिरथी' प्रकाशन, मुसाफिरखाना, सुल्तानपुर, उ. प्र.; पृष्ठ-संख्या : ३२; मूल्य : दस रुपये।

०००

परशुराम (नाटक) 'स क ल'; प्रकाशक : कुसुम प्रकाशन, जे/३३/१, टेल्को, जमशेदपुर-८३१००४, विहार; पृष्ठ संख्याः ७७; मूल्य : छः रुपये।

०००

दी मदर लैंड (हिं ी) अजय राजवंश; प्रकाशक : अजय राजवंश, जे. बी. जैन कालेज रोड, सहारनपुर, उ. प्र.; पृष्ठ संख्या : ७४; मूल्य : तीन रुपये।

०००

ब्रजेश बावनी जगन्नाथ प्रसाद साहु 'ब्रजेश' विशारद; प्रकाशक : हिंदी हितैषिणी सभा, लालगंज, (वैशाली) विहार; पृष्ठ संख्या : ५२; मूल्य : बीस रुपये।

०००

भरतभूमि (कविता-संग्रह) राधेश्याम 'आर्य' : प्रकाशक : रश्मिरथी प्रकाशन, मुसाफिरखाना, सुलतानपुर, उ. प्र.; पृष्ठ-संख्या : ३२; मूल्य : दो रुपये।

०००

संकरी गली (उपन्यास) चंद्रशेखर दुबे; प्रकाशक : २४२, तिलक नगर, इंदौर-४५२००१, म. प्र; पृष्ठ संख्या : ४८; मूल्य : चार रुपये।

०००

ठहाके मार कर हंसो (काव्य-संग्रह) अक्षय गोजा; प्रकाशक : जयदीप प्रकाशन, गोजा भवन, चांदपोल गेट के पास, जोधपुर-३४२००१, राजस्थान; पृष्ठ संख्या : ७२; मूल्य : दस रुपये।

०००

हे मातृभूमि (एकांकी संग्रह) राधाकृष्ण सहाय; प्रकाशक : साहित्य भवन, प्रा. लि. जीरो रोड, इलाहाबाद-२११००३, उ. प्र.; पृष्ठ संख्या : १२२; मूल्य : पेपर बैक सात रुपये तथा सजिल्द पुस्तक पंद्रह रुपये।

०००

हर शाख पर उल्लू बैठा है (काव्य-संग्रह) मिश्रीलाल जायसवाल; प्रका-

(शेषांश पृष्ठ १४० पर)

कहानी नहीं है

□ डॉ. प्रसाद

यह कहानी नहीं है, क्योंकि न इसमें कल्पना है और न कोई खास कथा। इसमें जो कुछ है, वह सब देखा-सुना हाल है। और यह सब देखा-सुना इसलिए है कि मैं जैतपुर का रहनेवाला हूं।

घटना जैतपुर की ही है।

जैतपुर एक कस्बा है। अच्छी जनसंख्या है। स्कूल, कालेज और थाना है और वहां विजली भी है। पर कस्बे से सटे हुए खेत भी हैं।

जैतपुर में शहर और गांव, दोनों का आनंद है।

कस्बे के पूरब की ओर है राकेश मिश्र का घर और पश्चिम की ओर है करीम भाई यानी करीम खां का घर। हर शहर या कस्बे में लोग अपनी-अपनी विरादरीवालों के साथ रहते हैं और जैतपुर में भी ऐसा ही है। लेकिन फिर भी करीम भाई के घर से लगभग सटा हुआ घर जगतमनि पांडे का है, जिनके घर के पास ही रामदुलारे का घर है।

याकूव खां का घर करीम भाई के घर से दूर नहीं है तो पास भी नहीं है। याकूव भले ही करीम खां के सजातीय हैं पर आवाज देने पर पहले जगतमनि पांडे के घर के लोग सुनेंगे, तव याकूव भाई के घर के लोग।

राकेश मिश्र के घर का भूगोल भी लगभग ऐसा ही है। इनके घर के पास भी इनकी विरादरी के कई घर हैं, पर ज्यादा पास में घर है रहमत अली और मुहम्मद सलीम का। राकेश मिश्र तो अपनी किसी विपत्ति में आवाज लगायें तो विरादरी वाले वाद में सुनेंगे और रहमत और मुहम्मद भाई उसे पहले।

ये सभी लोग रहते भी इसी रूप में आ रहे हैं।

सवके सुख-दुख हैं, जिन्हें सव लोग मिल-बांटकर भोगते हैं। इनके वच्चे हरीश और नूरुद्दीन और सुरेखा तथा सलमा की मित्रता पूरे जैतपुर में चर्चा का विषय है। ये वच्चे विना किसी भेदभाव के एक-दूसरे के यहां आते-जाते हैं, पढ़ते और खेलते हैं और एक-दूसरे के यहां खाते-पीते हैं।

पर जैसे दिन के वाद रात आती है और रात के वाद दिन आता है अर्थात् समय वदलता रहता है, ऐसे ही जैतपुर में हुआ।
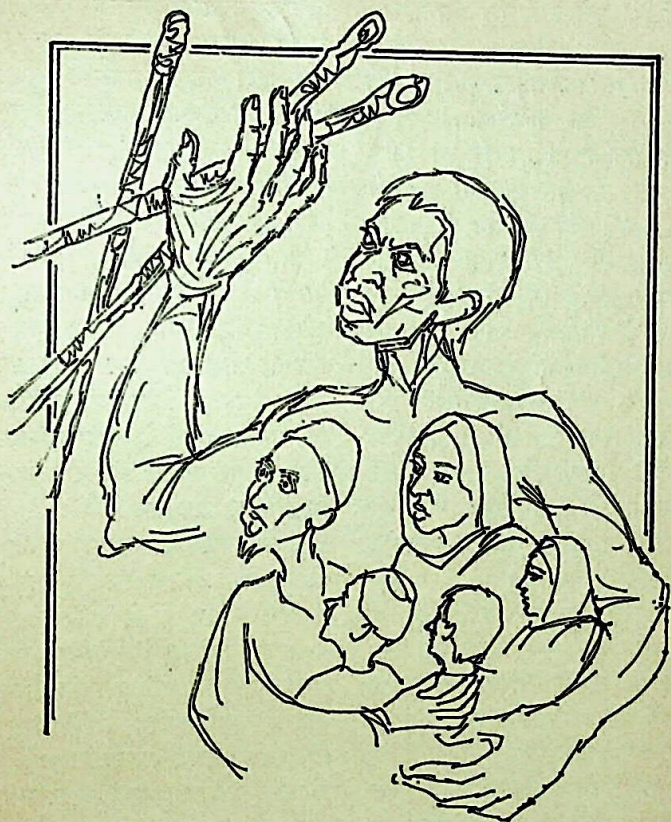
ऐसा किसी प्राकृतिक नियम से नहीं हुआ, बल्कि कुछ लोगों की साजिश से हुआ।

लोग इन व्यक्तियों के नाम जानते हैं। ये लोग कहने को तो अपने को अपनी अपनी बिरादरी का हितैषी कहते हैं। पर ये लोग किसी के हितैषी नहीं हैं। रमेश और जाहिद के घर को लूटने में संजू और वली खां का हाथ था। पुलिस ने जब एक को पकड़ा तो उसके बयान के आधार पर दूसरा भी पकड़ में आ गया। इन दोनों लुटेरों में इतनी घनिष्ठता थी, जितनी शायद भले लोगों में न होगी।

इस साल जैतपुर में हादसा हुआ

में। दुर्गापूजा की मूर्ति का जुलूस जाना था। जुलूस के जाने का एक रास्ता बना हुआ है। लेकिन जुलूस निकलने के एक दिन पहले पता लगा कि कुछ लोग पुराने रास्ते से जुलूस ले जाने में एतराज कर रहे हैं।

जब यह बात मैंने सुनी तो मुझे भी आश्चर्य हुआ। मैंने इकराम से पूछा—'भाई क्या बात है? सुना है, आपकी बिरादरी के कुछ लोग दुर्गाजी का जुलूस पुराने रास्ते से नहीं जाने देना चाहते।'

'सुना तो मैंने भी है, भाई साहब,' इकराम ने कहा। 'पर मैंने अपनी बिरादरी के कई लोगों से पूछा तो सबने यही कहा—दुर्गाजी देवी हैं। हमें उनके जुलूस में क्यों एतराज होगा? कहीं धार्मिक कामों में भी आपत्ति की जाती है और जो ऐसा करता है, वह बहुत बुरा आदमी है।'

लेकिन अफवाह धीरे-धीरे कस्बे में फैल गयी और सबके मन में भय जैसा पैदा हो गया। हर आदमी ऐसी बात को सुनता था, पर कोई यह नहीं जानता था कि प्रचार कौन कर रहा है और कहां से हो रहा है?

कहते हैं, भयभीत आदमी रस्सी को सांप समझ लेता है। जुलूस निकला तो वास्तव में जुलूस पर किसी ने एक ढेला फेंक दिया। किंतु लोगों ने सिर्फ ढेला देखा फेंकनेवाले को नहीं। एक आदमी ने रामेश्वर को ढेला फेंकते देखा। पर इस बात पर विश्वास कौन कर सकता था। रामेश्वर अच्छा आदमी नहीं है। नामी चोर है और अब तो डाके भी डालने लगा है।

एक आदमी ने, जिसका नाम लोगों ने आकिल बताया, कहा कि ढेला अब्दुल्ला ने फेंका है। अबदुल्ला भी अच्छा आदमी नहीं है। लेकिन रामेश्वर और अब्दुल्ला पिछले साल की स्टेशन पर हुई चोरी में पकड़े गये थे। दीनू बाबा पर भी इन्होंने ही आक्रमण किया था। संयोग से ही दीनू बाबा बचे।

ढेला चाहे जिसने फेंका, पर कस्बे में दंगा हो गया। गोली चली और चाकू भी। सात आदमी मारे गये। जो लोग मरे उनका नाम तो कोई नहीं जानता पर सात घर अवश्य उजड़ गये। इनमें दो आदमी सड़क पर खोमचा लगाते थे, तीन की सड़क पर फलों की दूकान थी और दो सदा शाम को ठेले पर चाट लगाते थे।

कस्बे में कर्फ्यू लागू हो गया। लोगों का घरों के बाहर आना बंद हो गया। पर मुहल्ले की गलियों में तो छिप-छिपाकर आ जा ही सकते थे। ऐसे ही पुलिस की नजर बचाकर रात के आठ बजे छिपते-छिपाते जगतमनि पांडे करीम भाई के यहां पहुंचे और धीरे से दरवाजा खटखटाया। जगतमनि पांडे की औरत भी उनके साथ थी।

दरवाजे पर खटखट की आवाज सुनी तो करीम भाई को भय लगा। कहीं दंगा-फसादी उनके घर पर तो नहीं चढ़ आये? चुपके से ऊपर गये और खिड़की से झांककर देखा। नीचे जगतमनि पांडे और उनकी औरत थी।

जब सांप्रदायिक दंगे होते हैं तो बहुत से लोगों का दूसरी जाति के उन लोगों पर से

भी विश्वास उठ जाता है जो मित्र तक हुआ करते हैं। पर यह साधारण लोगों की बात है। अच्छे लोग ऐसा नहीं सोचते।

करीम भाई यकायक नहीं सोच पाये कि क्या बोलें? पर जगतमनि पांडे उनके हमेशा अच्छे दोस्त रहे थे। वे उन्हें किसी तरह का धोखा नहीं दे सकते थे। फिर भी बिना दरवाजा खोले ऊपर से ही बोले–'पांडेजी, क्या बात है?'

'अरे भाई, जल्दी दरवाजा खोलो। मैं तुम्हारा दोस्त हूं। डरो मत।' पांडेजी ने कहा।

करीमभाई ने दरवाजा खोल दिया।

पांडेजी बोले–'मैं तुम सबको लेने आया हूं। सब मेरे घर चलो। यहां तुम्हारा घर अकेला पड़ता है। कहीं कोई बात हो जाय तो परेशानी हो जायेगी। दंगा के समय आदमी खूंख्वार हो जाता है। दो-चार दिन में सब शांत हो जायेगा, तब आ जाना।'

करीब भाई बड़े धर्मसंकट में पड़ गये। बात ठीक ही थी। पर पूरे परिवार के साथ किसी के यहां जाकर रहना और वह भी ऐसे समय में, उन्हें बड़ा अजीब-सा लगा। तभी करीम भाई की स्त्री ने कहा–'सोचिये मत, भाई साहब ठीक कहते हैं। हम सब लोग भाई साहब के यहां चलकर रहें। दो-चार दिन में मामला शांत हो जायेगा, तब लौट आयेंगे। ऐसा समय ज्यादा दिन नहीं चलता।'

करीम भाई ने पत्नी की बात मान ली और सभी लोग जतगमनि पांडे के यहां आ गये। घर से निकलना कोई जान नहीं पाया, क्योंकि दो-दो करके लोग पांडेजी के घर में गये।

घर में अंदर पहुंचते ही बाहर का दरवाजा बंद कर दिया गया और लड़की तथा लड़के से कह दिया गया कि वे किसी को भी यह न बतायें कि करीम भाई का परिवार उनके यहां है। जगतमनि पांडे की स्त्री तो सारी परिस्थिति समझती ही थी।

राकेश मिश्र के मुहल्ले में भी ऐसी ही घटना घट रही थी। रहमत अली के कहने पर राकेश मिश्र अपनी स्त्री और दोनों बच्चियों के साथ अली भाई के घर चले गये। रहमत अली की पत्नी ने बड़ा स्वागत किया। तुरंत चाय पिलायी। और जलपान कराया। रात को बढ़िया-बढ़िया चीजें बनाकर खिलायीं।

चार दिन कस्बे का जीवन अशांत रहा। पांचवें दिन शांति-समिति बनी। हिंदू और मुसलमान, दोनों जातियों के बुजुर्ग लोग मिले और प्रेम से रहने का ऐलान किया। फिर समिति ने जुलूस निकाला, जो पूरे कस्बे में घूमा। सबको विश्वास दिलाया गया कि अब कस्बे में कोई गड़बड़ी नहीं होगी। मूर्ति जिस रास्ते से निकलती थी, उसी रास्ते से निकालने का निर्णय हो गया। पुलिस ने कस्बे से कर्फ्यू उठा लिया। कस्बे पर छाई काली रात समाप्त हो गयी।

दूसरे दिन जब समाचारपत्र प्रकाशित हुआ तो एक समाचार को लोगों ने बार-

बार पढ़ा, जिसका शीर्षक था—'आदर्श भाईचारा।' आगे लिखा था-'जैतपुर में दंगे के दिनों में आदर्श भाईचारे के उदाहरण देखने को मिले। जब कुछ लोग दंगा भड़का रहे थे, हिंदू व मुसलमानों को लड़ा रहे थे और एक दूसरे को मारने पर उतारू थे या लूटपाट मचा रहे थे, उस समय करीम भाई के परिवार को चार दिन तक जगतमनि पांडे नाम के एक महाशय ने अपने यहां छिपाकर रखा। इसी प्रकार राकेश मिश्र नाम के एक सज्जन के परिवार को रहमत अली नाम के एक मुसलमान भाई ने अपने यहां दंगे के दिनों में छिपाये रखा। भाईचारे का यह बहुत बड़ा उदाहरण है। लोगों को इससे सीख लेनी चाहिये।'

समाचार पढ़कर अनेक लोग ऐसे सज्जन व्यक्तियों को उनके घर धन्यवाद देने गये। कुछ उत्साही लोगों ने रहमतअली और जगतमनि पांडे को सम्मानित करने की योजना भी बना ली। दिन भर कस्बे में इसी बात की चर्चा होती रही।

अब इतनी ही बात और है कि अगली छब्बीस जनवरी के राष्ट्रीय पर्व पर दोनों व्यक्तियों का जोरदार सम्मान किया जायेगा। कमिश्नर साहब ने इस आयोजन में स्वयं खुशी-खुशी शामिल होने की स्वीकृति दी है।

यही है सारी घटना जो कहानी नहीं है।

—११, अध्यापक आवास, संपूर्णानंद संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी-२२१००२, उ.प्र.

□

(पृष्ठ १३५ का शेषांश)

शक : यात्रा प्रकाशन, कृष्ण कुटीर, जालपादेवी रोड, कटनी, म. प्र.; पृष्ठ संख्या : ९६; मूल्य : दस रुपये।

०००

टूटते जुड़ते संदर्भों के बीच (काव्य-संग्रह) संपादक : सिद्धेश्वर; प्रकाशक : अवसर प्रकाशन, भारतीय युवा साहित्यकार परिषद, करबिगहिया, पटना-८०००01, बिहार;

पृष्ठ संख्या : ५०; मूल्य : पेपर बैक दस रुपये तथा सजिल्द बीस रुपये।

क्षितिज (लघुकथा तकनीक एवं मूल्यांकन विशेषांक) प्रधान संपादक : सतीश राठी, अनंत श्रीमाली; प्रकाशक : अध्यक्ष-क्षितिज-२१२, उषा नगर, इंदौर-४५२००९, म. प्र., पृष्ठ संख्या : १७०; मूल्य : दस रुपये।

०००

मध्यप्रदेश संदेश : जनवरी-१९८८' (माखनलाल चतुर्वेदी विशेषांक) संपादक : अरविंद चतुर्वेदी; प्रकाशक : जनसंपर्क संचालनालय, भोपाल, म. प्र.; पृष्ठ संख्या : १४०; मूल्य : ५० पैसे।

□

मैं स्वीकार करता हूं कि जीवन ने मुझे जो कुछ दिया है, इसमें सबसे स्थायी महत्त्व अध्ययन का रहा है। —सामरसेट माम

□

मेघदूत (भाग-१५)

यह कहना उचित
नहीं है, कि मेघ क्या है–

बस धूप, धुंआ और जल का संभार
जो वायु के रथ पर चढ़कर
उड़ता है इतस्तः और
हो जाता है क्षार !

'अपां भस्म केवलम्! अपां भस्म केवलम्!'
अपने पार्थिव अंगों के अतिरिक्त
मेघ कुछ और भी है, वह
गति है, दिशा है, पृथ्वी और आकाश का
सेतु भी है,

कन्याकुमारी से हिमालय, बंगसागर से
अरब की खाड़ी

ये हैं उसके पड़ाव, जहां किसी चक्रवर्ती
सम्राट-सा
सूर्य जैसी नियमवत्ता से वह आता है,
कहता है, जीवों से, जंतुओं से–
इससे पहले कि तुम जो कर
बरस चुको,
उठो, चलो, कर्म करो !

तुम्हारी आयु अभी शेष है,
अर्थवत्ता विशेष है !

सच है,
संदेश कार्यपटुओं से ही भेजे जाते हैं
जल के भार से अलस मंथर मेघ
तुम पटु तो नहीं हो,

फिर भी प्रिया के विछोह में, यक्ष ने
तुम्हीं को हरकारा चुना

तुम जो थे विश्वस्त, अभ्यस्त
अब्दों पराब्दों से
अलका के पथ के।

मनुष्य रूप दूत नहीं हो, तुम
काम रूप कर्मी हो मघवा के मेघ,
धन्य है यक्ष जिसने तुम्हें सौंपा
दौत्यकर्म, और
धन्य है कवि जिसने समझा
उसका मर्म
और बांध लिया उसे
निज काव्य में।

—कमला रत्नम्

'ईशान', एफ-१/७, हौज खास, नयी दिल्ली—११००१६

□

'लेख' शब्द के रिश्तेदार

□ रमेशचंद्र महरोत्रा

इस लेख में 'लेख' के सगे-संबंधियों से संबंध स्थापित किया जायेगा।'

'लेख' स्वयं एक ओर 'लिखावट' है और दूसरी ओर 'निबंध' है, लेकिन 'सुलेख' का नाता 'निबंध' से नहीं रह जाता।

यों 'लेखन' और 'लेखनी' का संबंध प्रत्येक 'लेखक' से रहता है, पर स्थून शब्दार्थ मात्र के आधार पर क़लम पकड़ने वाले को आप 'लेखक' कहना पसंद नहीं करेंगे; इसके विपरीत, किसी को आप 'लेखराज' कहना चाहेंगे और किसी को 'लिक्खाड़' कहना ज़रूरी समझेंगे।

'लेख' और 'लेखा' जन्मजात भाई हैं, क्योंकि दोनों ही संस्कृत की 'लिख्' (लिखना) धातु से बने हैं, पर 'लेखा' हिसाब-किताब के मामले में लेख से आगे निकल गया है।

'लेख' के पूर्व जुड़कर इसका साथ देने वाले 'अ–, अग्र, अधि, अनु–, अप–, अभि–, आ–, उद्–, पुरा–, पूर्व, प्र–, वि–, शिला, श्रुति, सम्–' इसका भरा-पूरा परिवार बनाते हैं, जिसके सदस्यों को उनकी पहचान के साथ आगे एक-एक करके सामने लाया जा रहा है :

'अलेख' का अर्थ 'अदृश्य, अवर्ण्य' है, वह 'निराकार ब्रह्म' है।

'अग्र-लेख' का इस्तेमाल पत्र-पत्रिका के मुख्य (संपादकीय) लेख के लिए होता है।

'अधिलेख' विस्तार से लिखा हुआ लेख है, वह 'पूर्ण विवरण' (राइट-अप) है।

'अनुलेख' का अर्थ 'प्रतिलिपि' भी है तथा लिखना सीखने के लिए बच्चों द्वारा किसी लिखी हुई इबारत का अनुकरण करके लिखा गया सुलेख भी है।

'अपलेख' का मतलब किसी की मान-हानि करने वाला लेख (लाइबल) है, जब कि 'अपलेखन' का मतलब राइट ऑफ कर देना अर्थात् बट्टे-खाते में डाल देना है।

'अभिलेख' भविष्य के लिए सुरक्षित रखा जाने वाला कैसा भी (लिखा हुआ या खुदा हुआ) लेख, यानी रेकॉर्ड है ('बजाने' या 'तोड़ने' वाला नहीं), 'अभि-लेखक' से 'रेकॉर्डर' का,' अभिलेख-पाल' से 'रेकॉर्डकीपर' का, तथा 'अभिलेखागार' से 'आरकाइव्ज़' का अर्थ निकलता है।

'आलेख' यों तो 'लिखी हुई सामग्री मूल पांडुलिपि या स्क्रिप्ट, लिखाई, लिखा-वट, लेख, पत्र, इमला, चित्र, आदि सब-

कार्टून : मजीद भारती
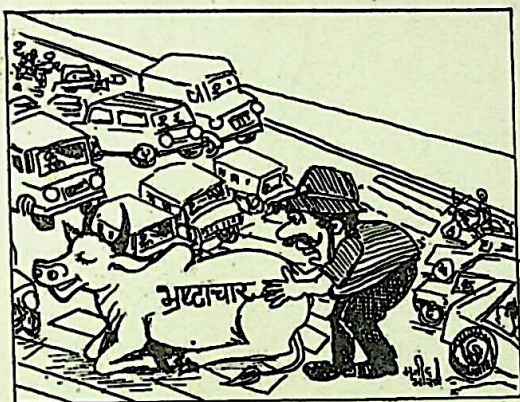
कुछ रहा है, पर आप जानते हैं कि अब यह अपने अर्थों में सिकुड़ रहा है।

परिवार का अगला सदस्य 'उल्लेख' है, जो 'जिक्र' है, 'वर्णन' है।

'पुरालेख' कोई भी पुराना सरकारी अभिलेख है—चाहे ताम्रपत्र पर, चाहे ताम्रपट्ट पर, चाहे शिला पर।

'पूर्व-लेख' राज्यों के बीच शर्तों से युक्त संधि का प्रामाणिक लेख 'प्रोटोकोल' है।

'प्रलेख' (डॉक्युमेंट) कोई भी दस्तावेज है, जो साक्ष्य-रूप में प्रस्तुत किया जाता हो।

'विलेख' का एक अर्थ 'अनुमान' और 'सोच-विचार' रहा है, दूसरा 'खुरचना' और 'फाड़ना' रहा है, तथा तीसरा आजकल 'अधिकार, स्वामित्व, आदि से संबंधित हस्ताक्षरित लेख (डीड)' है, 'पट्टा' है, जो दूसरे शब्दों में कोई 'विधिक प्रलेख' (लीगल डॉक्युमेंट) है।

'शिलालेख' सीधे-सीधे पत्थर पर खुदा-हुआ लेख है।

'लेख' का रिश्ता कानों के माध्यम से 'श्रुतिलेख' से है, जो सुनकर लिखा गया होने के कारण 'डिक्टेशन' अर्थात् 'इमला' है।

'संलेख' ऊपर प्रदत्त 'पूर्व-लेख' वाले और 'विलेख' के पट्टे वाले अर्थ-क्षेत्रों में भी जा धंसता है, पर एक अन्य अर्थ में उनसे दोस्ती नहीं रखता। वह अर्थ है 'बौद्ध धर्म के अनुसार पूरा परहेज़ या संयम'।

(इस 'लघुलेख' को पढ़कर कौन कहेगा कि हिंदी धनी नहीं है?)

—२/४, रविशंकर विश्वविद्यालय,
रायपुर-४९२०१०, म. प्र.

□

नदिया का पानी मुवा

— सतीश आर्य —

अंबर पिघला रात में,
नदी चढ़ गयी नाव ।
पानी-पानी हो गया,
देखो सारा गांव ।।

ऐसी उफनायी नदी,
जैसे पारावार ।
बंधन टूटा लाज का,
घायल हुए कछार ।।

लाज गयी अब जेठ की,
मारे गजब हिलोर ।
नदिया का पानी मुवा,
धार हुई बरजोर ।।

मछुआरे के आंगने,
मछली की सौगात ।
चढ़कर नदिया नाव पे,
भेजे रातोंरात ।।

नींद न आये रात भर,
नेह लगाये दांव ।
लेटी हो जैसे नदी,
गुलमोहर की छांव ।।

सुधि आयो, निंदिया गयी,
लो नदिया के पार ।
बरखा उतरी आंख में,
मुख पर पारावार ।।

सोलह सीढ़ी चढ़ गयी
गोरी करे सिंगार ।
बंशी गूंजे शाम को,
ज्यों नदिया के पार ।।

लचक-लचक कर पग धरे
बोये नेह दुलार ।
इंद्रधनुष सिर पर धरा,
सूरज बसा लिलार ।।

धूमिल-धूमिल आरसी,
नागफनी-सी छांव ।
अब तो महंगी हो गयी;
नींद तुम्हारे गांव ।।

—मनकापुर, गोंडा-२७१३०२, उ. प्र.—

सु. रामकृष्णन् द्वारा भारतीय विद्या भवन, क. मा. मुंशी मार्ग, बंबई-४०० ००७ के लिए प्रकाशित तथा श्रीवेंकटेश्वर प्रेस, ३६/४८ खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग, बंबई–४०० ००४ में मुद्रित ।

चंद मोती

'जिगर' मुरादाबादी आधुनिक उर्दू कविता के सुप्रतिष्ठित गायक हैं-उनका एक-एक शेर किसी बेशकीमती मोती से कम नहीं। जरा इन चंद मोतियों की आब देखिये

दर्द को कैद किया शौक को आज़ाद किया
हम से जिस तरह बना हमने तुझे याद किया

जैसा वो चाहते हैं, जो कुछ वो चाहते हैं
आती हैं मेरे दिल से, लब तक वही सदायें

कोई हद ही नहीं शायद मुहब्बत के फसाने[1] की
सुनाता जा रहा है जिसको जितना याद होता है

हर तरफ छा गये, पैगामें-मुहब्बत बन कर
मुझ से अच्छी रही, किस्मत मेरे अफसानों की

जब पर्दा उठ गया है, देखा यही है अकसर
अपनी ही आरज़ू में, अपनी ही जुस्तजू[2]-की

यहां तक जज्ब कर लूं काश तेरे हुस्ने-कामिल[3] को
तुझी को सब पुकार उठें, गुजर जाऊं जिधर होकर

जब देख न सकते थे, तो दरिया भी था कतरा
जब आंख खुली, कतरा भी दरिया नजर आया

दरिया की जिंदगी पर, सदके[4] हजार जानें
मुझ को नहीं गवारा, साहिल[5] की मौत मरना

दिल में बाकी नहीं, वह जोशे-जुनु ही वर्ना
दामनों की न कमी है, न गिरहबानों की

आये जबान पै, राजे-मुहब्बत मुहाल[6] है
तुम से मुझे अज़ीज[7], तुम्हारा, ख्याल है

१-कहानी. २-इच्छा. ३-सौन्दर्य की योग्यता, ४.-न्यौछावर. ५-किनारा. ६-असम्भव. ७-प्रिय.

Regd. No. BYW 2
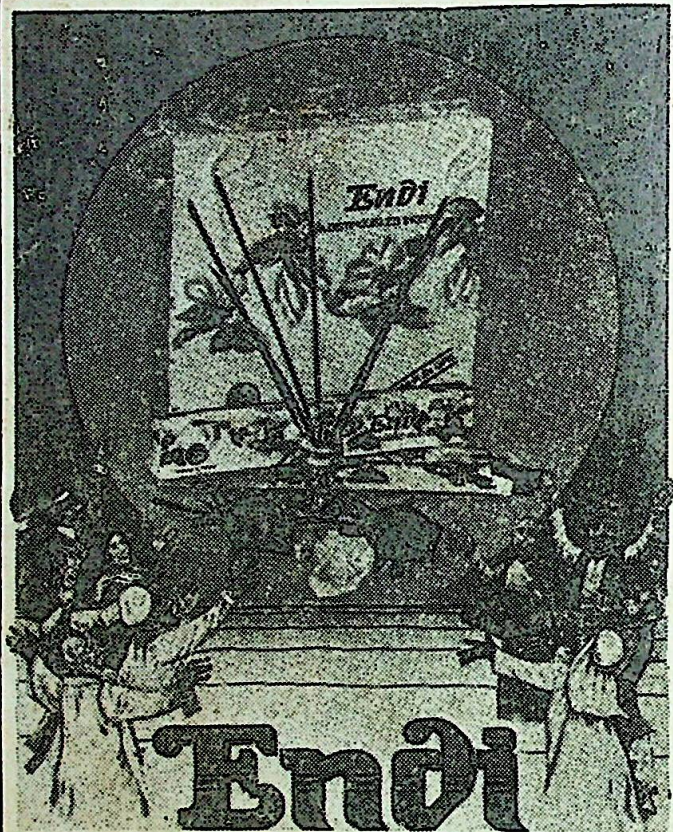
Endi
Endi
The Great and Graceful Fragrance
SEVEN IN ONE
MYSORE SUGANDHI
DHOOP FACTORY PVT. LTD.
13, Commercial Chambers, Yusuf Meharali Rd.
P.O. Box 3178, Bombay 400 003.